B.A./HIND **22
Compulsory Course (201)
(Languages) Compulsory Hindi

अनिवार्य हिन्दी

पूर्णांक : 75
सत्र के अन्त में परीक्षा : 40
आन्तरिक मूल्यांकन : 35

समय : तीन घण्टे

निर्धारित पुस्तक : रचना पुंज (पद्य-गद्य-संकलन) (सं0) प्रोफ़ेसर कुमार कृष्ण, कमल प्रकाशन, बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश, मूल्य 45 रु0 ।

इस पुस्तक में से व्याख्या तथा प्रश्नों के लिए निम्नलिखित कवि/लेखक तथा पद्यांश/गद्यांश निर्धारित हैं ।

इकाई - 1

1.1 कबीर, घनानंद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला तथा बालकृष्ण शर्मा नवीन का सामान्य परिचय

1.2 कबीर - पन्द्रह दोहे, घनानंद 3 कवित्त, 3 सवैये

1.3 सूर्यकांत त्रिपाठी निराला : तोड़ती पत्थर, विनय बालकृष्ण शर्मा नवीन : विप्लव गायन

इकाई - 2

2.1 सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' गजानन माधव मुक्तिबोध एवं सुदामा पाण्डे धूमिल का सामान्य

2.2 अज्ञेय : कितनी नावों में कितनी बार, दूर्वाचल मुक्तिबोध : मुझे तुम्हारा साथ मिला है, ओ मेघ

2.3 धूमिल : दस्तक, रोटी और संसद

इकाई - 3

3.1 प्रेमचन्द, मोहन राकेश, काशीनाथ सिंह, उदय प्रकाश, महादेवी वर्मा, रामधारीसिंह दिनकर और श्रीलाल शुक्ल का सामान्य परिचय

3.2 प्रेमचन्द : ईदगाह, मोहन राकेश : मलवे का मालिक काशीनाथ सिंह : अपना रास्ता लो बाबा, उदय प्रकाश : छप्पन तोले का करधन

3.3 महादेवी वर्मा : जीने की कला, रामधारी सिंह 'दिनकर' : नेता नहीं, नागरिक चाहिए, श्रीलाल शुक्ल : अंगद का पाँव

प्राश्निक के लिए निर्देश :

1. पाठ्यक्रम में निर्धारित सभी कवियों में से 15 वस्तुनिष्ठ बहुविकल्पीय प्रश्न पूछे जायेंगे, जिनमें से 14 के उत्तर देना अनिवार्य है । प्रत्येक प्रश्न एक अंक का होगा । 1 X 14 = 14 अंक

2. पाठ्यक्रम में निर्धारित सभी इकाइयों में से शत-प्रतिशत विकल्प के साथ चार व्याख्याएं पूछी जायेंगी ।
   4 X 7 = 28 अंक

3. पाठ्यक्रम में निर्धारित सभी इकाइयों में से शत-प्रतिशत विकल्प के साथ आलोचनात्मक प्रश्न पूछे जायेंगे, जिनमें से दो के उत्तर देना अनिवार्य है ।
   4 X 7 = 28 अंक

*****

इकाई–1
कबीर का जीवन परिचय

संरचना

1.1 भूमिका
1.2 उद्देश्य
1.3 कबीरदास का जीवन परिचय
1.3.1 कबीरदास की रचनाएं
1.3.2 कबीरदास की साहित्यिक विशेषता
1.3.3 कबीर का दार्शनिक पक्ष
स्वयं आंकलन प्रश्न
1.4 सारांश
1.5 कठिन शब्दावली
1.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भित पुस्तक
1.8 सात्रिक प्रश्न

1.1 भूमिका

कबीरदास भक्तिकाल के निर्गुण काव्य धारा के प्रसिद्ध कवि माने जाते है। उन्होंने अपने काव्य में समकालीन समय में सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया है।

1.2 उद्देश्य

1. कबीरदास के जीवन का बोध।
2. कबीरदास की रचनाओं की जानकारी।
3. कबीर के साहित्य की विशेषताओं का बोध।

1.3 कबीरदास का जीवन परिचय

कबीर की जो वाणी गुरू ग्रंथ साहिब में संकलित है, इन पंक्तियों से कबीर के जन्म के संबंध में संकेत मिलते हैं:–

गुरू परसादी जैदेऊ नामा।
भक्ति के प्रेम इनहीं है जाना।।
संकरू जागे चरन सेव।
कलि जागे नामा जै देव।।
जैदेउ नामा बिप सुदामा।
तिन कऊ किरपा भई है अपार।।

इन पंक्तियों में जयदेव और नामदेव दो ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम आए हैं। कबीर द्वारा इनका वर्णन करना यह सिद्ध करता है कि ये दोनों कबीर से पहले पैदा हुए। जयदेव सन् 1170 ई. में राजा लक्ष्मणसेन की सभा को सुशोभित करते थे। पंडित रामचंद्र शुक्ल और डॉ. पीताम्बर बड़थ्वाल ने नामदेव का जन्म सन् 1270 ई. के आस–पास माना है। इन दोनों प्रमाणों से पुष्टि होता है कि कबीर का जन्म सन् 1270 ई. के बाद हुआ।

एक अन्य मत से कबीर का संबंध रामानन्द से जोड़ा जाता है। बीजक के एक पद में कबीर ने रामानंद के प्रति अपनी गहन श्रद्धा व्यक्त की है। कबीर की इस श्रद्धा भावना के आधार पर ही रामानन्द को कबीर का गुरु भी माना जाता है। अन्यत्र उल्लिखित प्रमाणों के आधार पर रामानंद का जन्म सन् 1328 और मृत्यु 1448 में मानी गई है। इस आधार पर कबीर का जन्म रामानन्द के पश्चात् होना स्पष्ट है।

कबीर वाणी में संनिविष्ट कुछ पद कबीर और सिंकदर लोदी के संबंधो की ओर संकेत करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि कबीर सिकंदर लोदी के समय में अपने संत कर्मों से प्रसिद्ध हो चुके थें यह अवश्य ही कबीर की प्रौढ़ावस्था रही होगी। यह प्रमाण कबीर के जन्म का सन् 1400 के आस–पास ले जाता है। इस संबंध में पीपा का एक पद उल्लेखनीय है :

जो कलि मांझ कबीर न होते।

तौ ले वेद अरु कलि जुग मिलि करि भगति रसातलि देते।।

तौ ले वेद अरु कलि जुग मिलि करि भगति रसातलि देते।।

भक्ति प्रताप भाष्यवे कारन जिन जन आप पठाया।

नाम कबीर सच परकास्या तहां पीपे कछु पाया।।

इस पद में पीपा ने कबीर की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। पीपा द्वारा इस पद में पीपा ने कबीर की मुक्त कंठ पीपा से पहले जन्मे थे। परशुराम चतुर्वेदी ने पीपा का जन्म काल सन 1408 से सन् 1418। (संवत 1465 से 1475) के मध्य माना है। अतः इससे स्पष्ट होता है कि कबीर का जन्म पीपा से पहले या उसके आस–पास हुआ था।

कबीर के जीवन से संबंधित विवरण विभिन्न ग्रंथों में मिलते है लेकिन जन्म की दृष्टि से कबीर चरित्र बोध का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसमें कबीर का जन्म संवत चौदह सौ पचपन, ज्येष्ठ सुदी पूर्णिमा, सोमवार अर्थात् सन् 1398 ई. स्पष्ट लिखा है। डा. माता प्रसाद गुप्त ने एस.आर. पिल्ले की इंडियन क्रोनोलॉजी के आधार पर गणित कर यह स्पष्ट किया है कि संवत 1455 की ज्येष्ठ पूर्णिमा को सोमवार ही पड़ता है। कबीर के जन्म के संबंध में कबीर पंथियों का यह पद्य भी प्रचलित हैः

चौदह सौ पचपन साल गए चंद्रवार एक ठाठ ठए।

जेठ सुदी बरसायत कौ पूरनमासी तिथि प्रकट भए।

धन गरजे दामिनि दमके बूंदे बरषे झर लाग गए।

लहर तालाब में कमल खिलै, तह कबीर भानु प्रकट हुए।।

इस प्रकार सर्वमान्य मत के आधार पर संवत 1455 (सन् 1398) को ही कबीर का जन्म माना जाता है।

कबीर के जन्म स्थल के बारे में भी मतभेद लेकिन विभिन्न तर्क–वितर्क व कबीर की इस पंक्ति के आधार पर काशी में हम प्रकट भये है रामानंद चिताए काशी या इसके आप–पास के स्थान को ही कबीर का जन्म स्थल माना गया है।

कबीर के माता–पिता के बारे में भी विद्वान एकमत नहीं है। इनके माता–पिता का नाम नीमा और नीरू थे लेकिन कुछ विद्वानों का कथन है कि नीमा और नीरू इनके पालक मात्र थे। किवदन्ती यह भी है कि इनका जन्म हिन्दू विधवा (ब्राह्मणी) के गर्भ से हुआ था जिसे लोकलाज के भय से लहरतारा (काशी के समीप) के तालाब के पास फेंक दिया था। नीमा और नीरू ने कबीर को यहीं से उठाया था। कबीर जाति के जुलाह थे। यह बात उन्ही के द्वारा रचे गए पदों से स्पष्ट हो जाति है :

जाति जुलाहा, नाम कबीर
बनि–बनि फिरौ उदासी।
जाति जुलाहा मति को धीर,
हरषि–हरषि गुण रमै कबीर
ओछी मति मेरी, जति जुलाहा
हम कबीर कहते है, मैं कासी का जुलाहा
चिन्हि न मोर निसाना।

कबीर को सभी विद्वानों ने अनपढ़ बतलाया है। इस संबंध में कबीर की कुछ पंक्तियां उल्लेखनीय है :

मसि कागद छूया नहीं, कलम गही नहीं हाथ तथा विद्या न पढ़ूं वाद नहीं जानूं इन पक्तियों से विद्वानों ने यही अभिप्रायः निकाला है कि कबीर पढे लिखे नहीं थे। इन पक्तियों से विद्वानों ने दूसरा अभिप्रायः भी निकाला है कि कबीर पुस्तक पाठ या पुस्तक ज्ञान के समर्थक नहीं थे लेकिन वे आत्मज्ञान के प्रबल समर्थक थे। इनमें कोई संदेह नहीं कि उस समय शिक्षा का प्रचार–प्रसार आज की तरह नहीं था। मात्र धनी एवं उच्च लोगों के बच्चे ही औपचारिक शिक्षा ग्रहण किया करते थे। अति सामान्य परिवारों के बच्चों को तो बचपन में ही आजीविका अर्जन में लगा जाना पड़ता था। इसलिए यदि बचपन में कबीर को अक्षर ज्ञान उपलब्ध न हुआ हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। लेकिन कबीर ने आत्मज्ञान के माध्यम् से शिक्षा की सर्वोच्च अवस्था को प्राप्त किया। उनकी वाणी से ऐसा प्रतीत होता है कि वे विचारों को प्रेरित करने वाली क्षमता के अर्जन को शिक्षा मानते थे। जिससे विचार बोझिल हो उसे वे शिक्षा मानने के लिए तैयार नहीं थें 'पोथी पढ़ि–पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोई' से कबीर का शिक्षा संबंधी आदर्श स्पष्ट हो जाता है। अतः कबीर निरक्षर अवश्य रहे होंगे लेकिन वे उच्च स्तर के शिक्षित संत थे।

कबीर ने किसी विद्यालय में शिक्षा का अर्जन नहीं किया। इसलिए उनका कोई लौकिक गुरू नहीं था। जहां तक आध्यात्मिक गुरू का प्रश्न है तो उस संबंध में हमारे समक्ष दो वर्ग आते है; एक वर्ग जिनका मत शोध पर आधारित है और दूसरा जिनका मत संप्रदाय पर आधारित है। संप्रदाय आधार पर भी दो वर्ग हैं, एक मुस्लिम और दूसरा हिन्दू। मुस्लिम कबीर पंथियों का मत है लोग कबीर को 'निगुरा' कह कर खिझाते थे इसी लिए उन्हें गुरू की नाम मात्र की जरूरत थी। हिन्दू कबीर पंथियों का मानना है कि कबीर को गुरू की परम आवश्यकता भी तथा वे गुरू को सर्वोच्च स्थान भी देते थे। इसके कई उदाहरण उनकी वाणियों में मिलते हैं :

उपजै सहल ग्यान मति जागै, गुरूप्रसादि अंतर लव लागै
जब गोबिन्द कृपा करी, तब गुर मिलिया आई
गुरू उपदेश भरी ले नीरा, हरषि हरषि जल पीपै कबीरा

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि वे गुरू की महत्ता को समझते थे। विभिन्न विद्वानों ने कबीर की उक्तियों के आधार पर व अन्य अन्तः एवं वाह्या साक्ष्यों के आधार पर रामानन्द को कबीर का गुरू माना है। इस संबंध में कबीर की निम्न उक्ति दृष्टण्य है :

कासी में हम प्रकट भये हैं, रामानन्द चेताए।
समरथ का परवाना लाए, हंस उबारन आए।

इसके अलावा रामानन्द की मृत्यु का उल्लेख करते हुए बीजक के एक पद में रामानन्द की महिमा कबीर ने इस प्रकार गायी है :

आपन आस किये बहुतेरा। काछु न मरम पाव हरिकेरा।

इंद्री कहां करे विसरामा। कहां गये जु कहत हुते रामा।

सो कहां गये जो होत सयाना। होय मृतक पदहि समाना।

रामानन्द रामरस माते। कंहहि कबीर हम कहि कहि थाके।

इस पद में रामानंद की महत्ता–प्रतिष्ठा उनके गुरू होने की सूचक है। राम–राम के प्रति आग्रह को रामानंद ने अपनी भक्ति में प्रतिष्ठित किया था। यही राम नाम उन्होंने कबीर को दिया जिसे कबीर ने अपने जीवन का सर्वस्व बना लिया। इसी लिए वे स्थान–स्थान पर राम–नाम का गुणगान करते हैं :

राम राम के पंटतरै, दैवे को कछु नाहि।

क्या ले गुरू संतोषिए, हौंस रही मनमांहि।।

कबीर आपण राम कहि, औरां राम कहाई।

जिहि मुख राम न उचरे, तेंहि मुखिफेरि कहाई।।

अतः इस पूर्ण विवेचन से स्पष्ट होता है कि रामानन्द ही कबीर के आध्यात्मिक गुरू थे। रामनंद ने ही कबीर को राम–नाम का मंच देकर प्रेमभक्ति में दीक्षित किया था।

गुरू के प्रति आदर भाव के अलावा अपनी शिष्य परम्परा में भी कबीर ने बड़ा आदर पाया है। भक्त परम्परा के आधार पर बिजली खां, धर्मदास, वीर सिंह बघेला, सुरतगोपाल, जीवा, तत्वा, जागूदास आदि कबीर के शिष्य थे। इनमें से कबीर के दो हिन्दू शिष्यों, धर्मदास और सुरतगोपाल के नाम प्रमुखता से लिए जाते हैं।

कबीर एक गृहस्य संत थें वे भक्ति के लिए गृह त्याग को आवश्यक नहीं समझते थे। कबीर ने अपने गृहस्थ जीवन का पूर्णतः के साथ निर्वहन किया। उनकी शादी बनखंड़ी वैरागी की पालिता कन्या लोई के साथ हुई थी। अपनी वाणियों में कबीर ने अनेक स्थानों पर लोई शब्द का प्रयोग किया है। लोई के संबंध में यह भी किवदन्ती है कि किसी बनखंड़ी महात्मा को लोई में लिपटी मिली थी। उसी ने उस कन्या का लालन–पालन किया और बड़े होने पर कबीर की साथ उनका विवाह कर दिया। लोई शब्द का प्रयोग कबीर वाणी में 'लोग' और 'लोई' (व्यक्ति वाचक संज्ञा) दोनों अर्थों में हुआ है। 'लोई' ही कबीर की पत्नी भी इसका प्रमाण कबीर के ये शब्द है :

हम तुम बीच भयो नहीं कोई। तुमहि सुकंत नारि हम सोई।

कहत कबीर सुनहु रे लोई। अब तुमरी परतीति न होई।।

जनश्रुति के अनुसार कबीर को एक पुत्र और एक पुत्री थी। पुत्र का नाम कमला तथा पुत्री का नाम कमाली था। कबीर अपनी कमाई का अधिकांश हिस्सा साधु सेवा पर खर्च कर देते थे, लेकिन पुत्र कमाल अपनी माता की खुशी के लिए धन का संग्रह करता था। कबीर को इस बात का काफी अफसोस था। कि उनका पुत्र हरिभजन को त्याग कर धन के संग्रह में अपने को व्यस्त रखते थे। कबीर कहते थे कि इससे मेरा वंश डूब गया है :

बूड़ा वंश कबीर का, उपजा पूत कमाल,

हरि का सुमिरम छाडि के, घर ले आया माल।

कबीर ने सत्यान्वेषण हेतु विभिन्न स्थानों का भ्रमण किया। सत्यान्वेषण और साधु संगति के सिवा तीर्थों में कबीर को कोई आकर्षण नहीं था। कबीर का मत था अशुद्ध मनवाले को मथुरा, द्वारिका और काशी में भी परमात्मा नहीं मिलता और जिसका मन शुद्ध है, संयत है उसका तीर्थों में जाना व्यर्थ है। इसीलिए वे कहते हैं:

मन मथुरा दिल द्वारिका काया काशी जांणि।

दसवां द्वारा देहुरा, तामै जोति पिछांणि।।

1.3.1 कबीरदास की रचनाएं

कबीर ने पुस्तक रूप में किसी भी ग्रंथ का प्रणयन नहीं किया लेकिन उनके मुख से जो वाणी निसृत हुई, उसे उनके शिष्यों ने बड़े आदर के साथ स्वीकार करके शब्दबद्ध किया। कबीर भिन्न–भिन्न स्थानों पर भ्रमण करते हुए गए और हर स्थान पर उनके शिष्य बनते गए। उनके शिष्यों भिन्न–भिन्न स्थानों पर उनकी वाणी को लिखित रूप दिया होगा। इसीलिए कबीर के संकलित पदों एवं दोहों में विभिन्न भाषाओं एवं बोलियों के शब्द मिलते हैं।

आकार–प्रकार की दृष्टि से कबीर वाणी के तीन रूप है, साखी, सबद या पद तथा रमैंणी। कुछ संकलन ऐसे है जिनमें केवल साखियां संकलित हैं जैसे, 'कबीर साखी' 'कबीर–परिचय की साखी' कुछ संकलनों में केवल पद ही हैं, जैसेः कबीर जी के पद और कुछ के केवल रमैणियां ही है, जैसे : 'बावनी रमैनी'। इन संकलनों को 'एकांगी संकलन' कहा जाता है। इसके विपरीत कुछ सर्वांगी सकलन भी हैं जिसमें जिनमें शब्द साखी और रमैणी तीनों संकलित हैं।

डॉ. पारसनाथ तिवारी द्वारा संपादित 'कबीर ग्रंथावली' में पहले पद, फिर रमैणियां और बाद में साखियां हैं। पदों की संख्या दो सौ, रमैणियों की संख्या बीस तथा साखियों की संख्या 744 है। साखियां कुल 34 अंगो में विभक्त है। वर्तमान समय तक कबीर के ऊपर संपादित, संकलित एवं सृजित ग्रंथों की संख्या इतनी अधिक है कि उन्हें एक सूत्र में बांधना अति दुष्कर कार्य है।

कबीर आजीवन संघर्षरत रहे। उन्होंने अपने अन्तः और बाह्मा दोनों प्रकार के संघर्ष को अपनी वाणी के माध्यम से अभिव्यक्ति दी। सिंकदर लोदी के सम्मुख उन्होंने बड़ी दृढ़ता से कहा :

मैं मैं मैं जब लग मैं कीन्हा, तब लग मैं करता नहीं चीन्हा।

कहैं कबीर सुनहु नरनाहा, नां हम जीवत मूंबाले माहां।।

ऐसी विषम परिस्थितियों में कबीर का जीवन बीता। ऐसा ही उदाहरण उनके अन्तः संघर्ष का देखा जा सकता हैः

जदि का माई जनमिया, कहूँ न पाया सुख।

विभिन्न संघर्षो से गुजरते हुए कबीर ने वयोवृद्धावस्था में शरीर का त्याग किया। उसकी मृत्यु के संबंध में भी काफी मतभेद है। कबीर की मृत्यु के संबंध में निम्न पद्य दृष्टव्य है :

संवत पंद्रह सौ पछत्तरा, कियो मगहर को गवन।

माघ सुदी एकादसी, रलो पवन में पवन।।

इसके अलावा अनन्तवास की परिचई में कबीर की आयु 120 वर्ष बताई गई है। इस प्रकार उनके जन्म के आधार पर उनका निधन काल संवत 1575 (सन् 1518) ही ठहरता है। अतः उपर्युक्त साक्ष्यों के आधार पर स्पष्ट है कि कबीर की मृत्यु 120 वर्ष की आयु में सन् 1518 में मगहर नामक स्थान पर हुई। इस प्रकार यह काल कबीर को रामानन्द, सिंकदर लोदी, पीपा नानक तथा राणा संग्रामसिंह का समकालीन बना देता है।

1.3.2 कबीरदास की साहित्यिक विशेषताएं

❖ कबीर की सामाजिक चेतना

कबीर वाणी चाहे किसी भी रूप में क्यों न हो, समाज के चित्रों से वंचित नहीं है। कबीर ने अपने समय के समाज का यथातथ्य वर्णन किया है। उन्होंने समाज की कुरूपता पर कोई मुलम्मा चढ़ाने का प्रयत्न नहीं किया और यह कार्य कबीर की प्रकृति के अनुरूप भी नहीं था। वे सत्य को बढ़ा–चढ़ा कर या गढ़ छोल कर प्रस्तुत करने के पक्ष में नहीं ये और न ही उनकी वाणी में इस प्रकार के संकेत मिलते हैं।

यदि ध्यान से देख जाए तो यह स्पष्ट होता है कि कबीर ने समाज से विच्छिन्न होकर कुछ नहीं कहा है। कबीर का हर वक्तव्य समाज सापेक्ष है। कबीर ने अपने देश एवं काल को समक्ष रख कर व्यष्टि और समष्टि की गहराइयों में प्रवेश करके जो अनुभूतियां प्रस्तुत की है, उन्ही में तो व्यक्ति और समाज का अन्तर बाहर व्यक्त हुआ है। वे समाज की खबर लेते समय व्यक्ति के अंतर को भी टटोलते–खोजते रहे है। वे व्यक्ति और समाज के हृदय और आचरण में समझौता न देखकर जो व्यंग्य–प्रहार किये है। वे एक ओर समाज की दुर्बलताओं को व्यक्त करते हैं और दूसरी ओर अनेक व्यक्तियों के दम्भ और छदम् की छाज्जियां उड़ा कर कबीर ने समाज के परिशोध का ही प्रयत्न किया है।

स्थूल रूप से कबीर का समय पन्द्रहवीं शताब्दी के आस–पास माना जाता है। यह समय भारतीय समाज के विभिन्न क्षेत्रों में उथल–पुथल और अव्यवस्था का रहा है। इस युग के आंचल में निहित समाज के विविध पक्ष कबीर की वाणी में विखर पड़े हैं। उनकी वाणी में विशेषतः एक सुधारक की तीव्रता और तत्परता दृष्टिगोचर होती है। यह सचेत सामाजिक प्राणी के रूप में उनमें भारी असंतोष और क्षोभ निहित है। वे समाज के विगलन से खिन्न थे और विगलनकारियों के प्रति तीव्र क्षोभ था। फिर भी कबीर सामाजिक रूप से निराशावादी नहीं थे। समाज की ध्वंसक कुरूपता के दृश्य प्रस्तुत करने में कबीर का आलोचक रूप सजग रहा है। समाज के बिखरे हुए रूप मे एकता लाने के लिए तथा कुरूप को सुरूप में परिणत करने के लिए कबीर ने कहीं प्रखर तो कहीं मृदुल संकेत किए हैं। सामाजिक परम्पराओं के प्रति उनका विशेष आग्रह नहीं था। जो परम्पराएं समाज के लिए अनुपयोगी थी कबीर उनके विसर्जन के ही समर्थक रहे। उनका प्रमुख लक्ष्य 'क्या होना चाहिए' के प्रति 'क्या हो रहा है' को मोड़ना था। इसलिए उनकी वाणी में 'उनका समय' अधिकांशतः कौरूप्य लेकर ही प्रकट हुआ है। मगर इस आधारपर उनके आदर्शवादी रूप की उपेक्षा नहीं की जा सकती। कबीर के यथार्थवाद के प्रत्येक उच्छवास में उनके आदर्शवाद के प्राणों का स्पंदन हो रहा है। व्यष्टि और समष्टि में व्यक्तिगत साधना और सामाजिक व्यवहार में उसी सामाजिक एकता में निष्ठा पैदा करना कबीर का प्रयत्न रहा है। उन्होंने विश्व को आत्मा में देखने और आत्मा को विश्व में देखने का अमोघ प्रयत्न किया है। यथाः

बूंद समानी समंद में, संमद समाना बूंद में

कबीर आडम्बर और पाखंड के सख्त विरोधी थे। तत्कालीन समाज में पाखंड़ों का जैसा बोलवाला हिन्दू धर्म में था वैसा ही इस्लाम में था। यदि धर्म की वास्तविकता 'जनेऊ' में नहीं थी तो 'सुन्नत' में भी नहीं थी। इस धार्मिक कृत्रिमता को कबीर ने बड़े क्षोभ से देख कर कहा :

कृतम सुनित्य और जनेऊ, हिन्दू तुरक न जाने भेऊ।
मन सुसले की जुगति न जानैं मति भूले द्वै दीन बखानैं।।

जनेऊ के पीछे जैसी कृत्रिम धार्मिकता थी वैसी ही सुन्नत के पीछे सुन्नत के पीछे भी थी। धार्मिक खोखलापन उस समय विद्यमान था और कबीर जैसे साधु उसे भली भांति परिचित थे। जिस धर्म में सार्वजनीनता न हो, तो आखण्ड़ मानव–समाज के साथ लागू न हो कबीर उसे स्वभाविकता से वंचित ही मानते थे।

वर्ग भेद जैसा हिन्दू में था वैसा ही मुस्लिम में भी था पर यह धर्म संबद्ध नही था। पीर, मीर, काजी मुल्ला शेख आदि अधिकांशतः पद भेद थे। काजी और मुल्ला का आचरण उनकी अभिधा के अनुरूप न देखकर उनको कर्म की शिक्षा देते हुए कबीर उनकी तत्कालीन स्थिति को सामने लाते हैं,

काजी जो सो काया विचारै, तेल दीप में बाती जारै।
तेल दीप में बाती रहै, जोति दीन्हि जे काजी कहै।
मुलनां बांग देई सुर जानीं, आप मुसला बैठा तानी।
आपुन में जे करै निबाजा, जो मुलना सरबतरिं गाजा।।

कबीर के युग में मंदिर मस्जिद के झगड़े आम हो गए थे। मंदिर और मस्जिद धर्म का प्रतीक बन कर दोनों धर्मों के बीच खाई पैदा कर रहे थे। अल्लाह का निवास मस्जिद और परमात्मा का निवास मंदिर में माना जाता था। कबीर ने इस धार्मिक संकीर्णता पर प्रहार करते हुए कहाः

अल्लह एकु मसीति बसतु है अवर मुलकु किसुकेरा।

हिन्दू मूरति नाम निवासी दुहमति ततु न हेरा।।

उस समय का ब्रह्मण अपने को सर्वोच्च मानता था लेकिन लोगों की आशानुरूप उसका आचरण नहीं था। जिस ब्रह्मणत्व को धर्म की दिशा में प्रेरित करने में विद्या भी विफल हो गई थी, उसके प्रति कबीर क्षोभ व्यक्त करते है। वे ब्राह्मण जैसे पवित्र कर्म करने वालों के द्वारा हो रही हिंसा पर व्यंग्य करते है :

वेद पढयां का यहु फल पांडे, सब घटि देखे रांमां।

जीव बधत अरु धर्म कहत हो अधर्म कहा है भाई।।

कबीर कालीन हिन्दू समाज में जातिपांति पर्दा प्रथा, बहुविवाह, गुलामप्रथा जैसी विभिन्न कुरीतियां फैली थी। कबीर ने एक सजग समाज चेतक की भूमिका निभाते हुए इन कुरीतियों पर प्रहार किया और कहाः

हिन्दू अपनी करै बडाई, गागर न दैई।

वेस्या के पायन पर सोवै, यह देखो हिन्दुवाई।।

इसी प्रकार आध्यात्मिकता के साथ–साथ पर्दा प्रथा पर वे विचार व्यक्त करते हैं,

रहु रहु री बहुरिया घूघंट जिनि काढ।

घूंघट काढि गई तेरे आगे,

उनकी गैल तोहि जिनि लागे।

अतः कबीर ने अपने समाज में व्याप्त हर कुरीति पर सपाट वक्तव्य से प्रहार किया चाहे वह हिन्दू समाज हो या मुस्लिम। उन्होंने समाज के गले सड़े अंगों को वाणी रूप तलवार से काट कर बाहर फैंकने का सफल प्रयत्न किया। वे समाज के सदाचारी रूप को देखने व बनाने के पक्षधर थे।

अतः कबीर को समाज और समाज को कबीर से अलग करके नहीं देखा जा सकता। समाज निरूपण में कबीर ने जो भाव व्यक्त किए वे किसी न किसी पारस्परिकता के सूचक अवश्य है। एक सचेत सर्जक एवं साधाक के रूप में कबीर ने एक शुद्ध और सात्विक समाज की रचना पर बल दिया। उन्होंने किसी भी वाद को न अपना कर हर वाद की सार बातों का ग्रहण और बुरी मान्यताओं पर प्रहार करके एक तटस्थ सुधारक की भूमिका अदा की। कबीर ने आध्यात्मिकता के माध्यम से सामाजिकता और सामाजिकता के माध्यम से आध्यात्मिकता का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया। कबीर ने एक गृहस्थ संत और सचेत समाज सुधारक के रूप में एक मिशाल प्रस्तुत की। निर्भीकता, आध्यात्मिकता और सचेतनता का ऐसा सुंदर समन्वय अन्यत्र ढूंढ पाना असंभव है।

1.3.3 कबीर का दार्शनिक पक्ष

कबीर एक चिन्तक एवं मनस्वी संत थे। उनका अभीष्ट कोई दार्शनिक मतवाद नहीं था और न ही वे किसी दार्शनिक मतवाद के प्रचारक ही थे। पुस्तक ज्ञान के आधार जिस दार्शनिक मतवाद को प्रतिष्ठित किया जाता है। उसके प्रति कबीर की न तो कोई आस्था थी और न ही कोई प्रयत्न था। किसी मतवाद का अनुवर्तन या प्रवर्तन भी कबीर का अभीष्ट नहीं था। उन्होंने अपन समय में प्रचलित सभी प्रचलित मतवादों को बड़े ध्यान से निरखा परखा और समाज के प्रभाव को बड़ी सतर्कता से देखा ।

कबीर ने आध्यात्मिकता की भूमिका पर जिन सिद्धांतो को स्वीकार किया वे किसी एक वाद का न्यास नहीं थे। उन्होंने अनेक मतों का सार संगृहित करके जो संयोजन किया उसी में उनकी मेधा की ज्योति झलकती है। कबीर को पुस्तकीय एवं परम्परागत दार्शनिक व्यवस्था में कोई रुचि नहीं थी। इसीलिए उनको शंकराचार्य या रामानुज की कोटि में नहीं रखा जा सकता। उन्होंने अपने जीवनानुभव से जो ज्ञान प्राप्त किया उसी को अपनी वाणी के माध्यम से अभिव्यक्ति दी। आचार्य शुक्ल का कथन था "कबीर दास कभी तो अद्वैतवाद की ओर झुकते दिखाई देते हैं और कभी एकेश्वरवाद की ओर, कभी वे पौराणिक सगुण भाव से भगवान को पुकारते, कभी निर्गुण भाव से, असल में उनका कोई स्थिर तात्विक सिद्धांत नहीं था। कबीर की आध्यात्मिक क्षुधा और अकांक्षा विश्वग्रासी है।वह कुछ भी छोड़ता नहीं चाहती इसीलिए वह ग्रहणशील है, वर्जनशील नहीं। इसीलिए उन्होंने हिन्दू, मुसलमान सुफी, वैष्णव योगी प्रभृति सब साधनाओं को जोर से पकड़ रखा है।" कबीर के समय में विभिन्न धर्म एवं संप्रदाय प्रचालित थे। धर्मों एवं संप्रदायों की विविधता में जिन अनेक रूपों की परिकल्पनाएं रूढ़ थी उनमें कबीर ने काफी कुछ संशोधन प्रस्तुत किए। उन्होंने राम, कृष्ण हरि शिव आदि नामों को अभेद दृष्टि से स्वीकार करते हुए रूप एवं रूप भेद को अस्वीकार कर दिया। कबीर की दार्शनिकता की यह भी विशेषता रही कि जहां कबीर ने अनेक नामों से एक सत्ता की ओर संकेत किया, वहां उसे रूपात्मक विशेषताओं से मुक्त भी कर दिया। यह स्पष्ट ही था कि नानारूपात्मक विशेषताओं ने अवतारवाद की धारणा को जन्म दिया। अवतारवाद द्वैतवाद की प्रमुख धारणा थी लेकिन यहां कबीर ने शंकराचार्य के अद्वैतवाद की मन्यताओं को स्वीकार किया। हालांकि कबीर से पूर्व गोरखनाथ भी ब्रह्म के निरंजन रूप को घोषित कर चुके थे जो कबीर के लिए एक पृष्ठभूमि के रूप में थी।

निराकार निर्विकार सत्ता के अनेक गुणों की प्रतिष्ठा करके उसको प्रेम का आलम्बन बनाने की दिशा में कबीर के प्रयत्न विशेष महत्वपूर्ण है। कबीर के सामने यह भूमिका सूफियों ने प्रस्तुत की थी। कबीर ने जिस परमसत्ता को स्वीकार किया है वह गोरखनाथ की परमजोति से भिन्न नहीं है, किन्तु प्रेम का आलंबन बन कर वह ज्योति विशिष्ट हो गई। वहाँ गोरखनाथ की ज्योति (निरंजनदेव) केवल तटस्य एवं निर्विकार है परन्तु कबीर का ज्योतिस्वरूप राम अनेक गुणों से संपन्न है। उसके गुणों पर कबीर प्रकाश डालते हैं :

सात समंद की मसि करौ, लेखिनि सब वनराइ।

धरती सब कागद करौ, तऊ हरि गुण लिख्या न जाए।

❖ **कबीर का भाषा शिल्प** : कबीर के भाषा शिल्प पर विचार करने से पूर्व इस तथ्य पर ध्यान रखना अति आवश्यक है कि उन्होंने 'मसि कगद' छुआ नहीं था। अर्थात् कबीर की जो वाणी आज लिखित मुद्रित रूप में प्राप्त होती है, इसका लेखन उन्होंने स्वयं नहीं किया था। उन्होंने ने तो सिर्फ वाणी को उच्चारित किया था। उनके पढ़े–लिखे शिष्य थे।

कबीर निर्गुणवादी–ज्ञानमार्गी संत और भक्त थे। निर्गुणवादी और ज्ञानमार्गी संतों ने जिस भाषा का विचार भाव अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग किया है, आम प्रचलित बोलचाल में उसे साथ भाषा या साधुओं की भाषा कहा जा सकता है। आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने 'साध भाषा' पद का सुधार कर कबीर की भाषा के लिए 'साधुक्कड़ी भाषा' पद का प्रयोग किया है। इसका अभिप्रायः स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा है कि कबीर ने अपनी साखियों अर्थात् दोहों में जिस राजस्थानी, पंजाबी संमन्वित खड़ी बोली का प्रयोग किया है उसी को 'साधुक्कड़ी' नाम दिया जा सकता है।

जहां तक कबीर की वाणी के गेय पदों और सैद्वांतिक विवेचनों वाली रमैंनियों की भाषा का प्रश्न है तो वह भी साधुक्कड़ी' ही है पर उसमें पूर्वी हिन्दी के साथ–साथ ब्रजभाषा का समिश्रण हुआ है, राजस्थानी या पंजाबी का नहीं। इस दृष्टि से विद्वानों इतिहासकारों की यह मान्यता सही प्रतीत होती है कि कबीर अपनी बात को जन–जन तक पहुंचाना चाहते थे। इस कारण जहां कहीं भी जाते वहां की भाषा बोलियों के शब्द अपना लेते। उन पर पूर्वी बोली का प्रभाव उनके जन्म स्थान की स्थानीयता की देन है, जबकि ब्रज, राजस्थानी, पंजाबी आदि को भ्रमण का प्रभाव कहा जा सकता है।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. कबीरदास का जन्म कब हुआ?
2. कबीरदास की माताजी का क्या नाम था?
3. कबीरदास की रचना का नाम लिखों
4. कबीर की मृत्यु कब हुई?

1.4 सारांश

इस प्रकार कबीर को किसी एक भाषा का कवि स्वीकार करना किसी भी रूप में तर्कसंगत नहीं है। कबीर की भाषा में अवधि ब्रजभाषा और खड़ी बोली इन तीन भाषाओं का मिश्रण मानना ही अधिक न्याय संगत तथा वैज्ञानिक होगा। इन तीनों के मिश्रित रूप के साथ राजस्थानी, भोजपुरी तथा पंजाबी के रूपों का सहायक रूप में प्रयोग हुआ है।

संत कबीर निरक्षर थे इसलिए उनकी भाषायी योजना को शास्त्रीय कसौटी पर कसना उचित प्रतीत नहीं होता, परन्तु इतना सत्य है कि कबीर की भाषा सैद्धांतिक और वैचारिक दृष्टि से दार्शनिक तत्वों का समावेश रहने के कारण कहीं कहीं विशेष गूढ़ हो गई है। उसे समझने के लिए कई बार योग ज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली से परिधित और उनकी दुरूहता को समझने के लिए नैपुण्य अवश्य होना चाहिए। कबीर के भाषा प्रयोग में यत्र–तत्र अनगढ़ता भी अवश्य विद्यमान है फिर भी वह सीधी हृदय से निकली होने के कारण सीधा हृदय पर ही वार करती है और प्रभाव डालती है। यह उसकी एक सर्वप्रमुख विशेषता रेखांकित की जा सकती है।

1.5 कठिन शब्दावली

समंद – समुद्र

मसि – स्याही

कागद – कागज

करौ – कर

जस – जैसे

तस – वैसे

आनहि – आना है

1.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उतर

1. 1398 ।
2. नीमा ।
3. बीजक ।
4. 1518 ।

1.7 सन्दर्भित पुस्तक

1. डॉ. पारस नाथ तिवारी, कबीर ग्रंथावली।

1.8 सात्रिक प्रश्न

1. कबीरदास का जीवन परिचय लिखें।
2. कबीर की साहित्यिक विशेषता लिखें।

*****

इकाई–2
कबीरदास : व्याख्या भाग

संरचना

2.1 भूमिका

2.2 उद्देश्य

2.3 कबीरदासः व्याख्या भाग

स्वयं आंकलन प्रश्न

2.4 सारांश

2.5 कठिन शब्दावली

2.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भित पुस्तक

2.8 सात्रिक प्रश्न

1.1 भूमिका

हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि कबीरदास ने अपने काव्य में तात्कालीन समय सामाजिक रूढ़ियों तथा सामाजिक बुराईयों का डरकर विरोध किया है।

1.2 उद्देश्य

1. कबीरदास के जीवन परिचय का बोध।
2. कबीरदास की रचनाओं का ज्ञान।
3. कबीरदास की रचनाओं में वर्णित विषय का ज्ञान।

2.3 कबीरदासः व्याख्या

दोहा 1

मसि–कागज छूयो नहिं, कलम गही नहिं हात।
चारिउ जुग को महातम मुखहि जनाई बात ।। 1 ।।

प्रसंग : प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' से लिया गया है।

सन्दर्भः इस दोहे में कवि ने परम्परागत शिक्षा से शून्य बताते हुए भी ज्ञान को अनुभवजन्य होने के कारण महत्वपूर्ण बताया है।

व्याख्याः कबीरदास जी कहते हैं कि उन्होंने कभी कलम हाथ में नहीं पकड़ी और न ही स्याही और कागज़ का कभी प्रयोग किया है। कबीरदास जी कहते हैं कि उन्होंने जो ज्ञान मौखिक रूप से प्राप्त किया हैं उसे जनता तक पहुंचाया है जिसका महत्व चारों युगों तक रहेगा।

विशेषः

1. प्रस्तुत दोहा में कबीर ने अपने ज्ञान अनुभव का चित्रण किया हैं।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. दोहा छंद शैली का प्रयोग।

दोहा–2

केसां कहा बिगाड़िया, जो मूडै सौ बार।

मन कौं कहि न मूड़िए, जामै विषे–विकार।। 2 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि ने कर्मकाण्डों और दिखावे का विरोध किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कबीरदास कर्मकाण्डों का विरोध करते हुए कहते हैं कि केशों को बार–बार मुडाने से बाल बिगाड़ दीए है। अथवा एक बार मुडाने भी सौ के बार है। अर्थात् बार–बार उस्तरे से पूरी तरह सिर के बार साफ करवा देते हो। कबीरदास आगे कहते हैं कि सिर के बाल साफ करने से कुछ नहीं होगा यदि सफाई ही करनी है तो मन की करो जिसमें असंख्य बुराइयां भरी रहती हैं।

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में कबीरदास ने कर्मकाण्डों का विरोध किया है।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।

दोहा–3

बेस्जो भया तो क्या भया, बूझा नहीं विवेक।

छापा–तिलक बनाइ करि, दगध्या लोक अनेक।। 3 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' से लिया गया है।

सन्दर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने बाह्य आडम्बरों का विरोध किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि कबीरदास कहते हैं कि हे साधु! तू अपने को वैष्णव कहता है परन्तु तुम्हें इसमें अन्तर नहीं जान पड़ता। तुम्हारा विवेक ठीक से समझ नहीं पाया। कवि कबीरदास कहते हैं कि तू वैष्णव सम्प्रदाय के चिहों को शरीर पर अंकित करता है और माथे पर तिलक लगाकर घूमता है और अनेक लोगों को जलाता है अर्थात् कष्ट देता है। इस तरह तुम्हारा वैष्णव होना व्यर्थ है, दिखावा मात्र है।

विशेष

1. कबीर बाह्य आडम्बर का विरोध किया है।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।

दोहा 4

बहुत दिनन की जोवती, बाट तुम्हारी राम।

जिव तरसे तुझ मिलन कूं, मनि नाहीं बिसराम ।। 4 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने आत्मा रूपी विरहिणी परमात्मा रूपी प्रिय के दर्शन, मिलन के प्रति अपनी अभिलाषा प्रकट कर रही है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में विरहिणी आत्मा परमात्मा से कहती है कि हे राम ! मैं तो युगों से तुम्हारा इन्तजार कर रही हूं, तुम्हारी राह देख रही हूं न जाने कितनी योनियों में भटकी हूं। मेरा हृदय तुझसे मिलने के लिए तड़पता है और मेरे मन को क्षणभर भी आराम नहीं मिलता अर्थात् हर समय बेचैनी बनी रहती है।

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में विरहिणी आत्मा का चित्रण किया है।
2. भाषा बोलचाल की सधुक्कड़ी बोली है।
3. छंद शैली का प्रयोग है।

दोहा 5

आइ न सकीं तुझपै सकूं न तुझ बुलाइ।
जियरा यों ही लेहूगे, विरह तपाइ तपाइ ।। 5 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' विरहिणी आत्मा का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में विरहिणी आत्मा प्रियतम प्रभु से कहती है कि हे प्रभो! मुझमें इतना सामार्थ्य नहीं कि मैं अपनी इच्छा से तुम्हें पा लूं और न हीं में इतनी सक्षम हूं कि तुम्हें अपने पास बुला सकूं। प्रभो! मैं विरह की आग में निरन्तर जल रही हूं।

विशेष

1. विरहिणी आत्मा की करुणता का चित्रण।
2. भाषा बोलचाल की सधुक्कड़ी बोली है।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।

दोहा 6

कबिरा प्याला प्रेम का, अंतर दिया लगाय।
रोम–रोम में रमि रहा, और अमल क्या खाय ।। 6 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' राम नाम के महत्व का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि कबीरदास कहते हैं कि मैंने तो प्रभु–प्रेम का प्याला अपने हृदय के ओठों पर लगा दिया है अर्थात् मेरा हृदय तो निरन्तर रामनाम का जाप करता रहता है। अब तो राम मेरे रोम–रोम में अर्थात् मेरे शरीर के कण–कण में प्रभु श्रीराम समा चुके हैं। कवि 'कबीरदास' कहते हैं कि ऐसी हालत में मुझे किसी अन्य नशे की जरूरत नहीं है।

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' राम नाम के महत्व का चित्रण किया है।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास, प्रनरुक्ति प्रकाश अलंकारों का प्रयोग।

दोहा 7

काल खड़ा सिर ऊपरे, जागु विराने मीत।
जाका घर है गैल में, सो कस सो निचीत ।। 7 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने नास्तिक मनुष्य को संबोधित करते हुए कहते है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' कहते हैं कि हे मनुष्य! तुम्हारे सिर पर काल का साया मंडरा रहा है अर्थात् तुम्हे मृत्यु कभी भी अपनी आगोश में ले सकती है। तुम लापरवाही से निश्चित होकर सो रहे है जबकि तुम्हारा घर तो मृत्यु के रास्ते में है अर्थात् तुम राम नाम स्मरण से विमुख हुए है। तुम्हे समय रहते राम नाम स्मरण कर लेना चाहिए।

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने नास्तिक मनुष्य का चित्रण किया है।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. दोहा छंद का प्रयोग।

दोहा 8

चलती चक्की देखि के, दिया कबीरा रोय।
दो पट भीतर आय के, साबित गाया न कोय ।। 8 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने संसार की नश्वरता का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने मानव जीवन की नश्वरता का चित्रण करते हुए कहते हैं कि सम्पूर्ण संसार में समय रूपी चलती चक्की को देखकर दुःखी हुए अर्थात् रोने लगे है। वे कहते हैं कि सारा संसार जीवन–मरण के चक्र में फंसा है। जीवन–मरण चक्र के दो पाटों के बीच सारा संसार पिसता रहता है और जीवन–मरण के इस चक्र से कोई बच नहीं सकता। अर्थात् संसार में जो पैदा हुआ है वह मृत्यु को अवश्य प्राप्त होगा यही जीवन की सच्चाई है।

विशेष

1. संसार की नश्वरता का चित्रण किया।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग हुआ है।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।
4. दोहा छंद का प्रयोग।

दोहा 9

हद चले सो मानवा, बेहद चले सो साध।
हद बेहद दोऊ तजे, ताकी बात आगाध ।। 9 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने ज्ञानमार्गी भक्त भक्ति भाव का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' कहते हैं कि समाज में सांसारिक मर्यादाओं, नियमों एवं पारिवारिक जीवन का पालन करने वाला ही सच्चा मनुष्य कहलाता हैं। कवि कहता है कि जो व्यक्ति सांसारिक नियमों एवं पारिवारिक जीवन की मर्यादाओं को तोड़कर योग साधना करता है वह साधु कहलाता है। जो व्यक्ति संसार में इन सभी सीमाओं से उपर रहकर अर्थात् संसार की चिन्ताओं को छोड़कर ईश्वर की भक्ति में मग्न रहते है और ईश्वर के सच्चे रूप को जानते है वह सच्चे भक्त कहलाते हैं।

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने एक सच्चे भक्त की विशेषताओं का चित्रण किया है।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. दोहा छंद का प्रयोग।

दोहा 10

लाली मेरे ली की, जित देखों तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।। 10 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ले प्रभु श्रीराम की महिमा का वर्णन किया है।

व्याख्याः प्रस्तु दोहे में कवि 'कबीरदास' ईश्वर की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि मेरे प्रभु श्रीराम की महिमा चारों दिशाओं में फैली हुई है। जब में अपने प्रियतम, प्रभु श्रीराम की महिमा देखने निकला तो मैं भी उसी के रंग में रंग गया अर्थात मैं भी लाल रंग में रंग गया हूं अर्थात् श्रीराम की भक्ति में भक्तिमय हो गया हूं।

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने प्रभु श्रीराम की महिमा का वर्णन किया है।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।
4. दोहा छंद का प्रयोग।

दोहा 11

लंबा मारग दूरि घर, विकट पंथ बहु मार।
कहो संतौ क्यूं पाइए, दुर्लभ हरि–दीदार ।। 11 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने ईश्वर प्राप्ति के मार्ग की कठिनता का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि कबीरदास कहते हैं कि प्रभु–मिलन का रास्ता बहुत लम्बा है अर्थात् ईश्वर को प्राप्त करने के लिए साधना की आवश्यकता है। प्रभु का घर बहुत दूर अर्थात् उसे पाना बहुत मुश्किल कार्य है। प्रभु–मिलन का मार्ग अत्यधिक कठिन है और बाधाओं से भरा है। कवि कबीरदास कहते हैं कि हे संतो! आप ही बताओं ऐसी हालत में मुश्किल से मिलने वाला प्रभु–दर्शन मुझे कैसे हो सकता है?

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने ईश्वर प्राप्ति के मार्ग को कठिन बताया गया है।
2. भाषा सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।
4. दोहा छंद का प्रयोग।

दोहा 12

माली आवत देख करि, कलियन करी पुकार।
फूले–फूले चुनि लिए, काल्हि हमारी बार ।। 12 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने मानव जीवन और संसार की नश्वरता का वर्णन किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने मानव जीवन और संसार की नश्वरता का वर्णन करते हुए मानव जीवन की तुलना बाग में खिले फूल से कर रहे है। वे कहते हैं कि संसार रूपी बगीचे में तरह–तरह के फूल खिले हुए है। जब माली रूपी मृत्यु मानव रूपी फूलों को तोड़ने के लिए आते है तो मानव रूपी कलियों करुण स्वर में पुकार करने लगी है। कवि संसार की नश्वरता का वर्णन करते हुए कहते है कि संसार में जो भी वस्तु है वे सारी नश्वर है। कवि कहता है कि फूली फूली चुन ली गई है कल हमारी बारी है अर्थात् संसार में जो हमसे पहले आए थे वो चले गए है कल हम भी मृत्यु को प्राप्त हो जाएगे।

विशेष

1. संसार की नश्वरता का वर्णन।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।

दोहा 13

फागुन आवत देखि करि, बन सूना मन मौहिं।
ऊंची डाली पात हैं, दिन–दिन पीले बॉहिं ।। 13 ।।

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने मृत्यु की सत्यता का वर्णन किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने मृत्यु की सत्यता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि फाल्गुन का महीना आ गया है। फाल्गुन माह को आते देखकर पूरा वन मन ही मन बहुत उदास हो रहा है। अर्थात् इस महीने में वृक्षों के पत्ते झड़ जाते हैं और नए पते आते हैं। कवि कहता है कि वृक्षों की ऊंची टहनियों पर जो पत्ते लगे हैं वे सब पीले पड़ जाएंगे और अन्ततः टूट कर बिखर जाएंगे।

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने मृत्यु की सत्यता का वर्णन किया है।
2. साधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. मानवीकरण अलंकारों का प्रयोग।

दोहा 14

> **पात अंडता यों कहै, सुन तरवर बनराइ।**
> **अबके बिछुड़े न मिलें, कहिं दूर पड़ेंगे जाई ।। 14 ।।**

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने संसार नश्वरता का वर्णन किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने संसार की नश्वरता पर का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वृक्ष से झड़ता हुआ पत्ता, वृक्ष को संबोधित करता हुआ कहता है कि 'हे श्रेष्ठ वृक्ष! इस बार मैं तुमसे बिछुड रहा हूं और लगता नहीं कि दुबारा तुमसे मेरा कभी मिलन फिर से होगा। हम तुम एक–दूसरे से बहुत दूर जा पड़ेंगे।

विशेष

1. प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने संसार की नश्वरता का वर्णन किया है।
2. साधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. मानवीकरण अलंकार का प्रयोग।
4. दोह शैली का प्रयोग।

दोहा 15

> **भारी कहीं तो बहु डरों, हल्का कहां तो घूंटा।**
> **में का जाणों रामके, नैनूं कबहूं न दीठा।। 15 ।।**

प्रसंगः प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'कबीरदास' के द्वारा रचित 'कबीरदास के दोहों' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' ने प्रभु की महिमा का वर्णन किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत दोहे में कवि 'कबीरदास' कहते हैं कि मैं ईश्वर को भारी और हल्का नहीं कह सकता क्योंकि यह कहते हुए मुझे डर लगता है कि मेरे पास इसका कोई प्रमाण नहीं है। कवि कहता है कि मैं अपने ईश्वर के विषय में निश्चयपूर्वक कुछ भी नहीं कह सकता क्योंकि मेरी आंखों ने कभी उसे देखा ही नहीं है। अर्थात् मेरे ईश्वर निराकार है उनका कोई रूप, रंग नहीं है।

विशेष

1. निराकार रूप का वर्णन किया है।
2. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।
4. दोह छंद का प्रयोग।

स्वयं आकलन प्रश्न

1. कबीरदास का जन्म कब हुआ?
2. कबीरदास का निधन कब हुआ?
3. कबीरदास के गुरु का नाम लिखिएं।

2.4 सारांश

सारांश रूप में हम यह कह सकते हैं कि कबीरदास भक्तिकाल के प्रसिद्ध कवियों में से एक है। उन्होंने समकालीन समय में फैली सामाजिक बुराईयों का विरोध किया है। इसलिए उनकी पहले समाजसुधारक और बाद में कवि माने जाते है।

2.5 कठिन शब्दावली

मसि – स्याही, **गही** – पकड़ी, **हात** – हाथ, **चारिउ**– चारों, **जुग**– युग, **जनाई**– समझाई, **केसो**– केशों, **बिगाड़िया** – हानि पहुंचाई, **विषे विषय**– वासनाएं, **विकार**– बुराईयां, विकृतियां, **बेरजौ**– वैष्णों, वैष्णव, **विवेक**– अच्छे–बुरे का अन्तर, **दगध्या**– जलाया, नष्ट किया, **दिनन**– दिनों की, **जोवती**– जोहती, निहारती, **बाट**– रास्ता, **बिसराम**– शान्ति, **तुज्झ**– तुम्हारे, **जियरा**– ह्रदय, **तपाइ**– तपाकर, कष्ट देकर, **अंतर**– ह्रदय, **रोम–रोम**– कण में, **रमि रहा**– रमा हुआ है, समाया है, **दुई**– दोनों, **पट**–पाट, पहिए, **कोय**– कोई, **ताकर**– उसका, **मता**– ज्ञान, **अगाध**– अत्यधिक गहरा, **लाली** – प्रकाश, तेज, **विकट**– कठिन, विकराल, **दीदार**– दर्शन, **काल्हि**–कल, **फागुन**– फाल्गुन, **बांहि**– होंगे, **पात**– पत्ता, **अंडता**– टूटता, झरता, **बनराई**– श्रेष्ठ वृक्ष, **दीठा**– देखा।

2.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. 1398 ई.।
2. 1518 ई.।
3. रामानंद।

2.7 संदर्भित पुस्तक

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर ग्रंथावली।

2.8 सात्रिक प्रश्न

1. कबीरदास के दोहे की विशेषताएं लिखिएं।
2. कबीरदास के दोहे का उद्देश्य बताओं।

*****

इकाई–3
घनानंद का जीवन परिचय

संरचना

3.1 भूमिका

3.2 उद्देश्य

3.3 घनानंद का जीवन परिचय

3.3.1 घनानंद की रचनाएं

3.3.2 घनानंद के काव्य की विशेषता

स्वयं आंकलन प्रश्न

3.4 सारांश

3.5 कठिन शब्दावली

3.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भित पुस्तक

3.8 सात्रिक प्रश्न

3.1 भूमिका

रीतिकाल की तीन प्रमुख काव्यधाराओं रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त में धनानन्द अंतिम काव्य धरा के अग्रणी कवि हैं। रीतिवद्ध कवि ग्रंथ रचना नियमों के बंधनों के अनुसार करते थें रीतिसिद्ध कवियों के लिए इस प्रकार की कोई शर्त नहीं थी न ही वे लक्षण ग्रंथों का प्रणयन करते थे लेकिन उनकी काव्यरचना में रीत का पूरा–पूरा प्रभाव था। तीसरे प्रकार के कवि जो न तो रीतिवद्ध थे न रीतिसिद्ध, वे रीतिमुक्त कवि थें इन कवियों का रीति से कोई लगाव नहीं था। अपने हृदय की उमंगपूर्ण, स्वानुभूत भावनाओं को इन कवियों ने उसी रूप में अभिव्यक्त किया, जैसी उनकी अनुभूति थी। फलतः अपनी स्वच्छंद वृत्ति के कारण ये कवि रीतिमुक्त कहलाए। घनानन्द बोधा, ठाकुर आदि इसी धारा के कवि है।

3.2 उद्देश्य

1. घनानंद के जीवन की जानकारी।
2. घनानंद की रचनाओं की जानकारी।
3. घनानंद के काव्य की विशेषताओं का बोध।

3.3 घनानन्द का जीवन परिचय

हिन्दी साहित्य में घनानन्द नाम के अनेक कवियों का विवरण मिलता है। वास्तविक घनानन्द की प्रमाणिकता पर भी विद्वानों में मतभेद है। मुख्य रूप से घनानन्द, आनन्दघन और आनन्द इन तीन नामों में विवाद है। डॉ. ग्रियर्सन ने 'आनन्द' को ही रीतिमुक्त काव्यधारा का घनानन्द माना है परन्तु आधुनिक शोध से यह सिद्ध हो गया है कि 'आनन्द' एक स्वतंत्र कवि थे और उन्होंने 'कोकमंजरी' काव्य की रचना की। आनन्द के पद से इस बात की पुष्टि होती है :

कायथकुल आनंद कवि, वासी कोट हिसार।
कोक कलाइहि रुचि करन जिन यह कियो बिचार।।

रितु बसंत संवत सरस सोरह सौ अरु साठ।
कोकमंजरी यह करी धर्म कर्म करि पाठ।।

आचार्य–विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के मत में ग्रियर्सन के आनन्द और धनानन्द एक नहीं अपितु दो अलग–अलग व्यक्ति है। इन दोनों के रचनाकाल में उन्होंने लगभग 40 वर्षों का अन्तर बताया है। घनानन्द के नामकरण में दूसरा विवाद आनन्दघन नाम को लेकर है। आनन्दधन नाम के तीन व्यक्ति मिलते हैं :–

1. जैनधर्मी घन आनन्द 2. वृदांवन के आनन्दघन और 3. नन्दगांव के आनन्दघन। श्री क्षितिमोहन सेन ने सन 1938 में 'वीणा' में जैनधर्मी आनन्दधन शीर्षक के एक लेख में वृदावन के आनन्दघन और जैनधर्मी घन आनन्द दोनों को एक ही व्यक्ति माना है किंतु आचार्य विश्वप्रसाद मिश्र ने इस विवाद को अपनी पुस्तक 'घनानन्द और आनन्दधन' की भूमिका में अपने स्पष्टीकरण के माध्यम से समाप्त कर दिया है। उन्होंने घनानन्द और आनन्दघन दोनों को भिन्न–भिन्न व्यक्ति माना है। इस मत की पुष्टि में उन्होंने तर्क दिया कि दोनों व्यक्तियों का काव्य रचनाकाल एक नहीं है और न ही उनके काव्य में कोई समानता है। मिश्र ने दोनों व्यक्तियों के रचनाकाल में कम से कम सौ वर्षों का अंतर बताया है। जैनधर्मी घनानन्द का समय विक्रमी संबंत की सत्रहवी सदी का उत्तरार्ध और वृदांवन वासी आनन्द धन का समय विक्रम संवत् की अट्ठाहरवी शताब्दी का उत्तरार्ध है।

जैनधर्मी आनन्द और वृदांवनवासी आनन्दघन के पश्चात् तीसरा नाम नंदगांव के आनन्दघन का बचता है इनका समय श्री चैतन्य महाप्रभु है। उनकी चैतन्य महाप्रभु से सं0 1553 में भेट हुई। इनके बंशज आज भी मथुरा के निकट 'खरोट' गांव में मिलते है। अतः रीतिमुक्त काव्यधारा के घनानन्द वृदांवन के –आनन्दघन सिद्ध होते है। लगता है कवि का मूल नाम आनन्दघन ही रहा होगा, परन्तु छंदात्मक लय विधान इत्यदि के ये स्वयं ही आनन्दघन से घनानंद हो गए। आचार्य शुक्ल ने इनका समय सं0 1746 (सन् 1689) से संवत 1796 (सन् 1739) तक माना है।

नाम की तरह ही घनानन्द की जन्म तिथि, जन्म स्थान और रचनाएं भी विवादस्पद है। लाला भगवानदीन ने घनानन्द का जन्म सं. 1715 (सन् 1658) माना है। आचार्य शुक्ल ने घनानन्द का जन्म संवत 1746 (सन् 1689) माना है। इसी संबत को घनानन्द का जन्म संवत माना गया है। घनानंद की जन्म तिथि आज तक निश्चित नहीं हो पाई है।

जन्म स्थान के संबंध में भी विभिन्न विद्वान एकमत नहीं है। कुछ आलोचक इन्हें हिसार–निवासी मानते है तो अन्य इन्हें बुलदंशहर का मानते है। अधिकांश विद्वानों ने घनानन्द का जन्म स्थान दिल्ली और उसके आस–पास है। जगन्नाथदास रत्नाकर ने भी इन्हे बुलंदशहर का निवासी माना है। घनानंद के काव्य में इसका कोई उल्लेख नहीं है कि वे कहां के रहने वाले थे। ये भटनागर कायस्य थे और दिल्ली छोड़ कर वृदांवन चले गए थे इस बात को सथी अलोचकों ने स्वीकारा है। इन्होंने अपने काव्य में ब्रज और वृंदावन का वर्णन जिस सजीवता के साथ किया है, उससे स्पष्ट है कि इनका अधिकांश समय यहीं बीता।

घनानंद मुहम्मदशाह रंगीला के दरबार में खास–कलम (प्राईवेट सेक्रेटरी) थे। अरबी–फारसी में माहिर थे एक तो कवि और दूसरे सरस गायक। प्रतिभासंपन्न होने पर बादशाह का इन पर विशेष अनुग्रह था। मुहम्मदशाह रंगीले के दरबार की एक नृत्य–गायन विद्या में निपुण सुजान नामक वेश्या से इनका प्रेम हो गया। इधर सुजान की इन अनुरक्ति और दूसरी ओर बादशाह के खास–कलम इन दोनों बातों से घनानंद की उन्नति से सभी दरबारी मन ही मन ईर्ष्या करते थे। अंततः दरबारियों दरबारियों ने बादशाह से कहा कि घनानंद बहुत अच्छा गाते है। उनकी बात मान कर बादशाह ने उन्हें गाने के लिए कहा। घनानंद इतने स्वाभिमानी और मनमौजी व्यक्ति थे कि उन्होंने गाना सुनाने से मना कर दिया। दरबारियों ने मौका पा कर बादशाह से कहा कि सुजान को बुलाया जाए और वह अनुरोध करे तो घनानंद गाना सुना सकते है। बादशाह ने वैसा ही किया। सुजान के अनुरोध पर

घनानंद ने बादशाह की तरफ पीठ तथा सुजान की तरफ मुंह करके इतनी तन्मयता से गाना गया कि सभी दरबारी एवं राजा मंत्र मुग्ध हो गए, मगर बादशाह आनंद विभोर होने पर भी अपनी बेअदबी नहीं सहन कर सके। उन्होंने घनानंद को तुरंत राज्य छोड़ने का आदेश दिया। दरबारियों की चाहत पूरी हो गई। घनानंद ने चलते समय सुजान को अपने साथ चलने के लिए कहा परंतु सुजान ने घनानंद के साथ जाने के लिए मना कर दिया।

जान और जलन दोनों के लूट जाने पर घनानंद ने वृदांवन की ओर मुख किया। जीवन से इन्हें पूर्ण विरक्ति हो गई थी। वृदांवन में इन्होंने निबार्क संप्रदाय में दीक्षा ली। इस संबंध में श्री शंभुप्रसाद बहुगुणा ने लिखा है, "जीवन की विरक्ति उनके लिए प्रेमपूर्ण राधा–कृष्ण के चरणों की अनुरक्ति बन गई। मरते दम तक वे सुजान को नहीं भूल पाए। राधा–कृष्ण को उन्होंने सुजान की स्मृति बना लिया और निरंतर सुजान के प्रेम में आंसुओं क स्वरों में ये गीत सवैये लिखते रहे।

घनानंद प्रेमी होने के साथ–साथ एक उच्चकोटी के भक्त भी थे। संभवतः यह भक्ति उनके जीवन के उतरकाल में परिस्थितिवश आई थी। सुजान के प्रति प्रेम और उनके द्वारा तिरस्कार ये दो बाते उनके जीवन की महत्वपूर्ण घटनाएं रही हैं।

घनानंद के काव्यानुशीलन से ज्ञात होता है कि वे निम्बार्क संप्रदाय में दीक्षित थे। अपने ग्रंथ 'परमहंस वंशावली' में उन्होंने अपने गुरू की परम्परा का वर्णन किया है। घनानंद की भक्ति पर इस संप्रदाय की गोपी या सखी भाव की छाप स्पष्टतः दिखाई देती है। इस संप्रदाय में दीक्षित होकर घनानंद अपनी भक्ति साधना की चरम् सीमा पर पहुंच गए थे। श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने अपनी पुस्तक घनानंद ग्रन्थावली की भूमिका में एक स्थल पर कहा है, "प्रेम साधना का अत्यधिक कंटकपूर्ण पथ पर कर वे बड़े–बड़े साधकों, सिद्धों का पीछे छोड़कर सुजानों की कोटि में पहुंच गए थे।"

3.3.1 घनानंद की रचनाएं

घनानंद ने सर्वप्रथम कौन सी रचना की या शोधकर्ताओं की दृष्टि उनकी कौन सी रचना पर पड़ी यह अति विवादस्पद है। कुछ विद्वानों ने 'घनानंद कवित' को इनकी प्रथम् रचना माना है, जिसका संकलन ब्रजनाथ ने किया। कुछ विद्वान भारतेन्दु हरिशचन्द्र द्वारा सन् 1870 में प्रकाशित 'सुजान शतक' को इनकी प्रथम् रचना मानते है। घनानन्द की कृतियों की विस्तृत सूचना मिश्र बंधुओं ने दी है। मिश्रबंधुओं द्वारा दी गई घनानंद की कृतियों की लंबी सूची के पश्चात् परवर्ती आलोचकों ने इसी आधार पर घनानंद का विस्तृत उल्लेख किया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में दी हुई सूचनाएं मिश्रबंधु विनोद के आधार पर हैं। मिश्रबंधुओं द्वारा प्राप्त सूचना सभा रिपोर्टों और अन्य आलोचनात्मक शोध, उनके व्यक्तिगत और संस्थागत पांडुलिपियों की उपलब्धि के पश्चात् विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने घनानंद की कृतियों की प्रमाणिकता की ध्यान में रख कर उन्हे, 'घनानन्द ग्रंथावली' के नाम से प्रकाशित किया है जो निम्न प्रकार से है :

1. सुजान–हित 2. कृपाकंद 3.वियोग बेलि 4. इश्कलता 5. यमुना यश 6. प्रीति–प्रवास 7. प्रेम–पत्रिका 8. प्रेम–सरोवर 9. ब्रज–विलास 10. रस बसंत 11. अनुभव चंद्रिका 12. रंग–बधाई 13. प्रेम पद्धति 14. बृषभानुपुर सुषमा वर्णन 15. गोकुल–गीत 16. नाम माधुरी 17. गिरिपूजन 18. विचार–सार 19. दान–घटा 20. भावना–प्रकाश 21. कृष्ण कौमुदी 22. धाम चमत्कार 23. प्रियप्रसाद 24. वृंदावन मुद्रा 25. ब्रज स्वरूप 26. गोकुल चरित्र 27. प्रेम–पहेली 28. रसना यश 29. गोकुल विनोद 30. ब्रज प्रसाद 31. मुरलिका मोद 32. मनोरंजन मंजरी 33. ब्रज व्यवहार 34. गिरिमाया 35. पदावली 36. प्रकीर्णक (स्फुट) 37. छंदाष्टक 38. प्रिमंगी 39. परमहंस वंशावली। उपर्युक्त सूची देने के पश्चात् मिश्र ने लिखा है कि घनानंद की कुल 41 कृतियां है। 39 के पश्चात दो अन्य कवित–संग्रह और ब्रज वर्णन। इसमें ब्रज वर्णन जो अभी अप्राप्य है के संबंध में मिश्र ने संभावना व्यक्त की है कि यह शायद ब्रज स्वरूप का ही दूसरा नाम हो सकता है। यदि यह सही हुआ तो घनानंद की सभी कृतियों को उपलब्ध समझना चाहिए।

आजीवन भक्ति, प्रेम एवं सृजन में रत घनानंद की मृत्यु के संबंध में भी विवाद है। कई विद्वानों ने उनकी मृत्यु नादिरशाह के आक्रमण में बताई है परन्तु विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने अपने शोध एवं तर्कपूर्ण निष्कर्ष के आधार पर स्पष्ट किया कि नादिरशाह ने संवत 1796 अर्थात सन् 1739 में दिल्ली पर आक्रमण किया था मथुरा परनहीं। उनके अनुसार घनानंद की मृत्यु अहमदशाह अब्दाली के मथुरा पर किये गए द्वितीय आक्रमण संवत 1817 (सन् 1760) में हुई। इन आक्रमणों में अनेक महान हस्तियों व संतों का बध कर डाला था। सं0 1817 (सन् 1760) में चाचा हितवृदावनदास जी ने घनानंद का शव अपनी आंखों से देखा और उनके शव पर दुःखी होते हुए इस प्रकार वर्णन किया :

विरह सौं तायौ तन निवाह्यौ गत सांचौपन
धन्य आनन्दधन मुख गाई सोई करी है।
एहो ब्रजराज कुँवर धन्य–धन्य तुम हूं कौ
कहा नीकी प्रभु यह जंग में बिस्तरी है।
गाढ़ौं ब्रज उपासी जिन देह अंत पूरी पारी
रज़ की अभिलाष सौ तहां ही देह धारी है।
वृंदावन हिम रूप तुमहूं हरि उड़ाई धूरी
ऐ पै साँची निष्ठाजन ही की लखि परी है।

घनानन्द की अभिलाषा थी कि वे ब्रज की रज में लोटते हुए प्राण त्याग करें। इस संबंध में रोचक तथ्य है कि आक्रमणकारी उनके पास गए तो उन्होंने घनानंद से जर, जर, जर अर्थात् धन मांगा। धनानंद ने जर–जर अर्थ अर्थ रज, रज समझ कर तीन मुट्ठी धूल की उन पर फेंक दी। इससे गुस्साए सिपाहियों ने उनके हाथ काट डाले। तलवारों के बारों के साथ घनानंद ब्रज की रज में लोटते रहे और इस तरह अपने प्राणों का त्याग किया।

3.3.2 घनानन्द के काव्य की विशेषता

रीतिमुक्त काव्यधारा के कवि घनानंद के प्रेम को जानने के लिए उस युग पर दृष्टिपात करे तो ज्ञात होगा कि वह युग रीतिकाल का युग था। जहां साहित्य में रीति हो प्रमुख थी। रीतिवाद कवियों ने प्रेम का काव्य तो खूब लिखा परन्तु उनका प्रेम तो उधार का प्रेम था, उनके आंसू अपने नहीं थे यदि ये तो जबरदस्ती लाए गए थे। इसी कारण उनका प्रेमकाव्य रीतिमुक्त कवियों के सामने फीका दिखाई पड़ता है। घनानंद ने इन कवियों की रचनाओं को आत्मप्रवणता की दृष्टि से हल्का ठहराया है क्योंकि उन्होंने तो विधि को प्रेम से श्रेष्ठ माना था। घनानंद के काव्य से यह स्पष्ट होता है कि प्रेम में तो प्रेमी इतना डूब जाता है कि रहनि और करनी दोनों अटपटी हो जाती है। व्यथा हो उसका जीवन होता है और संयोग में भी विछोह की आशंका से अधीर रहता है। जब हृदय इतना व्याकुल रहता है प्रेमी को अपनी ही सुध नहीं होती, तब कहां रह जाता है सुनियोजित मार्ग, रीति, नीति और नियम के बधन। सच्चेप्रेम का मार्ग तो अत्यंत सीधा है जिसमें जरा भी वक्रपन नहीं होता।

हिन्दी साहित्य में कदाचित ही कोई घनानंद सा प्रेमी कवि हुआ हो। विद्वानों ने घनानंद की प्रेम संवेदना की तुलना तीन कवियों से की है– विद्वानों ने घनानंद की प्रेम संवेदना की तुलना तीन कवियों से की है– जायसी की नागमती, मीरा की विरहाकुलता और सूर की वियुक्ता गोपियां, परन्तु घनानंद सा दर्द, वेदना को तीव्रता और तड़फ, प्रेम में भी विछोह की आशंका आदि ऐसी विशेषताएं है, जो प्रेम जगत में उन्हे, सर्वोच्च पद पर अधिष्ठित करती है। अपनी प्रेयसी का नाम उन्होंने कृष्ण में मिला दिया। भक्ति की भी तो सुजान नाम से। घनानंद की प्रेम श्रेष्ठता का इससे बड़ा उदाहरण और क्या हो सकता है। घनानंद के काव्य में वैसे तो प्रेम का ही साम्राज्य है फिर भी वर्ण्य विषय की दृष्टि से उसके दो भाग किए जा सकते है। सुजान प्रेम काव्य अर्थात् लौकिक प्रेम पक्ष ओर दूसरा कृष्ण भक्ति काव्य अर्थात् अलौकिक प्रेम पढा। घनानंद के काव्य में अधिकांशतः अलौकिक प्रेम पक्ष का ही

प्रधान्य है। डॉ. कृष्णचन्द्र वर्मा ने इस विषय में अपना मत देते हुए कहा है, "उनके समस्त काव्य साहित्य का चतुर्यांश या उससे भी कम अंश सुजान प्रेम से संबंधित है। शेष तीन चौथाई अंश कृष्ण प्रेम और कृष्ण भक्ति से ओत–प्रोत है। प्रेम का स्वरूप चाहे लौकिक हो या अलौकिक घनानंद ने सच्चे प्रेम को अति सरल बताया है। जिसमें जरा भी छल–कपट, दुराव–झिझक आदि का कोई काम नहीं होता। प्रेम में प्रेमी लोक मर्यादा का त्याग कर केवल प्रेम मर्यादा ही निभाता है, वह भी छिप कर नहीं अपितु साहस के साथ।

घनानंद ने अपनी प्रेम विषयक दृष्टि को स्पष्ट करने के लिए स्वतंत्र रूप से कोई काव्य नहीं लिखा। प्रेम–संबंधी कुछ सैद्धांतिक कवित्त उनकी कृति 'सुजान हित' में मिलते है। वे भी सायाम प्रयत्न नहीं है। इस कृति के 507 कवितों में से मात्र सात या आठ कवित्त ऐसे है जिसमें प्रेम का सैद्धांतिक स्वरूप झलकता है। प्रेम के संबंध में उनका मानना है प्रेम चाहे लौकिक हो या अलौकिक सच्चा सनेही इस विश्व में मिलना असंभव है क्योंकि प्रेम मार्ग में इतनी भीषण यातनाएँ झेलनी पड़ती है कि कोई भी अंत तक इस मार्ग पर नहीं चल सकता। व्यक्ति का अहं भाव इतना प्रबल होता है कि शुद्ध आत्मसमर्पण संभव ही नहीं हो सकता। इस विश्व में जितना प्रेम है वह सब श्रीहरि और राधा से ही उत्पन्न हुआ है। और उन्हीं में ही उसे देखा जा सकता है। राधा कृष्ण का प्रेम विशाल सागर के समान है और इस संसार में व्याप्त प्रेम उसी राधा–कृष्ण प्रेम का कण है। इसी लिए घनानंद ने प्रेम रहित व्यक्ति के संसर्ग पर भी आपति की है क्योंकि वह सदा दूसरों के दोष ही देखता है। प्रेमी कभी भी ऐसे लोगों की परवाह नही करता, वह तो अपनी टेक पर अड़िग रहता है :

टरै नहीं टेक एक घनानंद जौ
निरक अनेक सीस खीसनि परै।

घनांनद की दृष्टि में प्रेम का पंथ ज्ञान–पंथ से ऊंचा है क्योंकि ज्ञान मार्ग में साधक को यह ज्ञान रहता है कि वह और साध्य दो व्यक्ति है। वह भगत है ओर अराध्य भगवान, परन्तु प्रेम क्षेत्र में शारीरिक रूप से ही प्रिय और प्रेमी दो होते है, परन्तु वस्तुतः वह एक ही होते है। प्रेम अपने आप में एक ऐसी शुद्ध और निर्मल वृत्ति है जिसको धारण करले ही समस्त लौकिक वासनाओं का लोप हो जाता है।

घनानंद ने प्रेमविहीन मनुष्य को तुच्छ माना है क्योंकि उसमें विवेक नहीं होता। वह दूध और दही दोनों को रंग साम्य के कारण एक मान लेता है। कोयला और काग उसको दृष्टि में एक हैं। इसलिए धनानंद ऐसे मनुष्यों से दूर रहने की नसीहत देते हैं :

मही–दूध सम गने, हंस बक भेद न जानैं।
कोकिल काम न ज्ञान, कांच मनि एक प्रमानैं।।
चंदन ढाक समान, राग रूपौ सम तोलैं।
बिन विवेक गुन–दोष, मूढ कवि ब्यौरि न बोलैं।।
प्रेम–नेम हित चतुराई, जे न बिचारत नेकु मन।
सपनेहु मन विलंबिये, छिन तिन ढिग आनन्द धन।।

घनानंद ने प्रेम विहीन मुनष्य के लिए भिन्न–भिन्न संज्ञाएं दी है। उनकी दृष्टि मं समस्त प्रेम का मूल राधाकृष्ण है और प्रेम विहीन मनुष्य का अर्थ राधाकृष्ण विहीन मनुष्य है।

वास्तव में घनानंद के मन में प्रथम बार प्रेम स्फुरण सुजान से साक्षात्कार के समय हुआ था। सुजान को देख तो देखते ही रह गए। वे जैसे–जैसे सुजान का देखते, उसे उस–उस समय पर सुजान पहले से सुंदर दिखाई देती थी। हर दर्शन पर सुजान की सौन्दर्य छटा निराली थी :

रावरै रूप की रीति अनूप, नयो–नयो लागत ज्यो–ज्यो निहारियै।
त्यों इन आंखिन बानि अनोखी, अधानी कहूं नहीं आनि तिहारियै।।
एक ही जीव हुतौ सु तौ वारयौ, सुजान संकोच और सोच सहारियै।
रोकी रहै न दहै धन आनन्द, बावरी रीझ कै हायनि हारियै।।

घनानंद के रोम–रोम में सुजान का प्रेम बसा हुआ था। उन्होंने प्रेम के अद्भव के पश्चात् जो भी लिखा, प्रेमी कवि होने के नाते लिखा। घनानंद को सुजान से इतना प्रेम था कि वे स्वयं उसे पूर्ण रूप में अभिव्यक्त करने में असमर्थ थे, परन्तु सुजान को उनसे कितना प्रेम था यह कहा नहीं जा सकता। घनानंद ने सैकड़ों छंदो में सुजान से शिकायत की पर उसकी उपेक्षा को उसका दोष न मानकर अपने भाग्य का खेल मान लिया। घनानंद कहते हैं :

कैसे घन आनन्द अदोशनि लगाय खोरि,
लेखनी लिलार की परेखनी मुरति है।

अपनी प्रेमिका के लिए तनिक भी बुरा भला घनानंद के लिए सह्य नहीं था। वे तो अपने प्रेम को चातक समतुल्य मानते थे परन्तु वे यह स्पष्ट करते हैं कि प्रेम के मार्ग में अत्याधिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। यही रीतिमुक्त कवि घनानंद के प्रेम की विशेषता भी है। घनानंद प्रेम भी करते है और यतनाएं भी सहते हैं। घनानंद ने प्रेम के मार्ग को अत्यन्त सीधा माना है। उसमें किसी प्रकार के स्वार्थ का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। उस मार्ग में सिर्फ 'अनन्यता' की ही अपेक्षा होती है। जो भी इस सीधे मार्ग पर चलना चाहे, उसे अपने मन का समस्त मैल धोना अनिवार्य हे अन्यथा वह उस मार्ग कीा अधिकारी नहीं हो सकता। घनानंद इसी प्रकार प्रेम मार्ग की व्यंजना करते हैः

अति सुधो सनेह को मारग है, जहां नेकु सयानप बाँकपन नहीं।
तहां साँचे चलै तजि अपुनपो, झिझकै कपटी जे निसाँक नहीं।
धन आनन्द प्यारै सुजान सुनौ, इत इक ते दूसरो आँक नहीं।
तुम कौन सी पाटी पढे ही लला, मन लेहु पै देहु छटांक नहीं।

घनानंद ने अपने काव्य में अनेक स्थलों पर ऐसे भाव व्यक्त किये है जिसमें उसके कष्ट एवं वेदना के चित्र स्पष्ट झलकते हैं। यही कारण है कि घनानंद काव्य में वियोग पक्ष का एकमुश्त साम्राज्य है। इसका दूसरा कारण यह है कि घनानंद का सुजान के साथ संयोग समय अति अल्प मात्रा में गुजरा है। इसी लिए प्रेम के संयोग पक्ष का कम ही चित्रण है।

घनानंद प्रेम की पीर के कवि थे। तड़प ही उनका जीवन था और सुजान स्मृति उसका पाथेय फिर भी उन्होंने प्रेम के जिस संयोग पक्ष का वर्णन किया है उसमें सुरूचि की प्रधानता है। रीतिबद्ध कवियों की कुत्सा, कुंठा, अश्लीलता का उसमें कहीं लेश मात्रा नहीं है। प्रेम के संयोग पक्ष में उनका ध्यान स्थूल शारीरिक चेष्टाओं की अपेक्षा मानसिक दशा पर अधिक है। इसलिए शुद्ध कामुकता का उनमें सवर्था अभाव है। घनानंद तो सिर्फ रिह्य के कवि थे, तभी तो उनमें संयोग में भी वियोग दिखाई देता है। घनानंद ने प्रेम परम्परा की उलटते हुए संयोग की अपेक्षा वियोग में भी प्रेम की चरमावस्था को प्राप्त किया है।

घनानंद का विरह वर्णन ही उसके काव्य की पूंजी है। घनानंद की विरह व्यथा, उसकी पीड़ा मधुर है। वह ऐसी अवस्था है जिससे वह मुक्ति नहीं पाना चाहता। सुजान का सानिध्य उससे छिन गया है लेकिन उसकी स्मृति को वह किसी भी कीमत पर नहीं खोना चाहता है। यही घनानंद के प्रेम की विलक्षणता है। आचार्य शुक्ल ने घनानंद के प्रेम के संबंध में ठीक ही लिखा है, यद्यपि इन्होंने संयोग और वियोग दोनों को लिया है, पर वियोग

की अंतर्दशाओं की ओर ही इनकी दृष्टि अधिक है। इसी से इनके वियोग संबंधी पद प्रसिद्ध है। वियोग वर्णन भी अधिकतर अंतवृत्ति निरूपक है।, बाह्यार्थ निरूपक नहीं। घनानंद ने न तो बिहारी की तरह विरह–ताप को बाहरी माप से मापा है, न बाहरी उछल–कूद दिखाई है। जो कुछ हलचल है वह भीतर है बहार से वह वियोग प्रशांत और गंभीर है, न उसें करवटें बदलना है, न सेज का आग की तरह से तपना है। न उछल–उछलकर भागना है। उनकी तो मौनमधि पुकार है।" अंततः कहा जा सता है कि लौकिक प्रेम के प्रस्फुरण को घनानंद ने राधा कृष्ण के अलौकिक प्रेम में परिवर्तित कर दिया। सुजान स्मृति और राधाकृष्ण भक्ति का अदभुत समन्वय है। उनकी सुजान प्रीति और स्मृति श्री कृष्ण की तरफ खिंच गई है। घनानंद ध्यान केन्द्रिता को व्यक्त करते हैं :

सब ओर ते ऐचि कै कान्ह किसोर में,
राखि भलो थिर आस करे।

घनानंद की प्रेमाभिव्यक्ति अत्यंत गंभीर है। उसकी थाह पाना साधारण सहृदय के वश के बाहर की बात है। वास्तव में उनका प्रेम असाधारण था। विरह असाधारण था और प्रेम का उदातकिरण अलौकिक था। उनकी इस मूल्यवान निधि को ब्रजनाथ ने भली प्रकार समझा और ठीक ही लिखा है :

नेही–महा ब्रजभाषा प्रवीण औ,
सुंदरतानि के भेद को जानै।
जन वियोग की रीति में कोबिद,
भावना–भेद स्वरूप को ठानै।।
चाह के रंग में भीज्यौ हियौ,
बिछुरे मिले प्रीतम सांति न मानै।
भाषा–प्रवीण, सुछंद सदा रहै,
सो धन जी के कवित बखानै।।

❖ घनानंद की काव्य भाषा :

रीति–स्वच्छंद काव्यधारा के अग्रणी कवि घनानंद के काव्य में अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों स्तर पर लीक से हट कर चलने की परम्परा स्पष्ट लक्षित है। उनकी कविता उनके व्यक्तित्व से पूर्णतः मेल खाती है। उनकी कथनः

लोग है लागि कवित बनावत, तोहि तौ मेरे कवित बनावत। उनके संपूर्ण काव्य पर घटित होता है। उसे उसी प में कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त करने में ही कलाकार की सफलता है। घनानंद ने जैसा अनुभव किया, उसी रूप में अभिव्यक्त कर दिया है।

काव्य शिल्प की दृष्टि से यदि घनानंद के काव्य का आंकलन किया जाए, तो सर्वप्रथम, दृष्टि भाषा पर ही जाती है। रीति युग ब्रज भाषा के परिमार्जन का युग रहा। इस समय ब्रजभाषा की कलात्मकता अपेक्षाकृत अधिक हो गई थी। उसमें जो मार्मिकता, लाक्षणिकता और भावप्रवणता है। वह अपने युग की विशेष देन मानी जानी चाहिए।

इस प्रकार साहित्यिक भाषा में जितने गुण होने चाहिए, कविता की भाषा की समृद्धि के समस्त उपकरण घनानंद की काव्य भाषा में मिलते हैं। घनानंद की काव्य भाषा ब्रज थी। ब्रजभाषा में उनसे पूर्व अनेक महारथी रीतिबद्ध और रीतिसिद्ध रीति में काव्य रचना कर चुके थे। इसके बावजूद भी उनकी रचनाओं में लालित्य मिलता है, ऐसी मधुरता धुली हुई है, जो उनके पूर्व नहीं मिलती है। घनानंद के प्रशस्तिकार ब्रजनाथ ने उनके संपूर्ण काव्य का अत्यंत सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए लिखाः

नेही महा ब्रजभाषा प्रवीण औ सुन्दर तानि के भेद की जाणैं।

जोग वियोग की रीति मैं कोविद भावना भेद स्वरूप को ठानै।

चाह के रंग मैं भीज्यौ हियो, बिछुरैं मिले प्रीतम सांनि मानै।

भाषा प्रवीन सुछन्द सदा रहै, सो धन जी के कवित्त बखानै ब्रजनाथ का उपर्युक्त पद्य घनानंद के काव्य की लगभग समस्त विशेषताओं को अपने में समेट लेता है। डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना ने घनानंद की काव्य भाषा पर लिखाहै, घनानंद का भाषा पर इतना अधिकार दिखाई पड़ता हे कि वह कवि की वशवर्तिनी को कर उसके इशारे पर नाचती है उनके कहने पर चलती है और उनके आदेश पर कार्य करती है।" घनानंद ने ब्रजनाथ के ठेठ रूपों का प्रयोग किया, परन्तु इसके साथ ही साथ अन्य भाषाओं के शब्द भीउनके काव्य में मिलते हैं जैसे पंजाबी, अरबी, राजस्थानी, खड़ीबोली संस्कृत आदि। विभिन्न भाषाओं के शब्द–समूह के आ जाने से उनकी भाषा में कोई दोष नहीं आया अपितु इससे उनकी भाषा और अधिक समृद्ध हो गई है।

घनानंद की भाषा का स्वरूप साहित्यिक होते हुए भी ठेठ ब्रजभाषा के शब्दों से युक्त है। अनेक ऐसे शब्दों जैसे औटपाय (उपद्रव) आवस (भाप) औंड (गहरी), तेह (क्रोध) न्यार (चारा) इत्यादि कई शब्द देखने को मिलते हैं। ठेठ ब्रजभाषा के साथ–साथ घनानंद ने ऊक (लुक) गादरौ, (शिथिल) अंगेट सौनि (कुंदन) रयो (लोन होना), बहीर (सेना का सामान) इत्यदि शब्दों का भी प्रयोग किया है।

भाषा प्रवीण घनानंद ने संस्कृत के तत्सम् भी खूब प्रयोग किये है जैसे मनि, पंकज, प्राण, विष, कुंज, कुरंग, मलय, हृदय अर्क इत्यादि। घनानंद एक कुशल शिल्पी थे इसलिए जो शब्द उन्हे भावानुसार सही लगा वह चाहे किसी भाषा का भी हो उसे अपना लिया। चूंकि घनानंद एक मुस्लिम शासक के दरबारी थे इसलिए उनकी रचना में अरबी और फारसी शब्दों का आगमन स्वभाविक ही था यथाः

यारा गोकुलचंद सलोने दिया चस्मदा धटका है।

ढोरि दिया घनानंद जानी हुसन सराबी पक्का है।।

सैन–कटारी आसिक उर पर तैं यारा झुक झारी है।

महर लहर ब्रजचन्द्र यार दी जिद असाड़ा ज्यारी है।।

इसी प्रकार पंजाबी शब्द प्रयोग का एक सुन्दर उदाहरण देखा जा सकता है

मुरली वाले ने असाड़ा दिल लीता नी।

रत्त–दिहाड़े कियाई न लगदा की जागां क्या कीत्ता नी।

सांवली सूरति भाभी अक्खी डाढ़ा चेटक दीता नी।

आनंदधन बल होया पपीहा इस्क पियाला पीता नी।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. घनानंद का जन्म कब हुआ?
2. घनानंद की प्रेमिका का नाम लिखों।
3. घनानंद की रचना का बताओं।

3.4 सारांश

घनानंद का सम्पूर्ण काव्य ब्रजभाषा में लिखा हुआ है ब्रज भाषा की प्रमुख विशेषता है कोमलकांत–पदावली और मसृणता । अपनी कविता की भाषा को कवि ने इस गुण से पूरी तरह समृद्ध किया है। कवित और सवैया की मधुरता का कारण कोमल वर्ण योजना है। प्रसिद्ध है कि घनानंद एक बहुत अच्छे संगीतज्ञ थे। इसी संगीत के

कारण उन्हें घर और सुजान से भी हाथ धोना पड़ा था। संगीतकार होने की कारण वे प्रत्येक वर्ण के प्रयोग को उसके वजन को पहचानते थे। इसी से उनके काव्य में स्वर लालित्य अप्रतिम हो उठा है। अंततः शुक्ल के शब्दों में कहा जा सकता है "इनकी सी विशुद्ध और सरस तथा शक्तिशाली ब्रजभाषा लिखने में और कोई समर्थ नहीं हुआ। भाषा की दृष्टि से उनका कोई भी कवित्त उठाकर देख लो, उसमें मधुरता के सिवा और कुछ नहीं मिलेगा।

3.5 कठिन शब्दावली

टोरी– ढोना, **सांवली**– काली सूरत, **सूरति**– शक्ल, **आसिक**–प्रेमी, **क्याकीत्ता**– क्या किया, **प्रवीण**– निपुर्ण, **उपासी**– उपासक।

3.6 स्वयं आकलन प्रश्न के उत्तर

1. 1689।
2. सुजान।
3. सुजान शतक।

3.7 सन्दर्भित पुस्तक

1. रामदेव शुक्ल, घनानंद का काव्य।

3.8 सात्रिक प्रश्न

1. घनानंद का परिचय लिखों।
2. घनानंद का साहित्यिक परिचय बताओं।

*****

इकाई–4
घनानंद : व्याख्या भाग

संरचना

4.1 भूमिका

4.2 उद्देश्य

4.3 घनानंद : व्याख्या भाग

स्वयं आंकलन प्रश्न

4.4 सारांश

4.5 कठिन शब्दावली

4.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भित पुस्तक

4.8 सात्रिक प्रश्न

4.1 भूमिका

हिन्दी साहित्य में घनानंद रीतिकाल के प्रसिद्ध कवियों में से एक है उन्होंने अपने काव्य प्रेम की आत्माभिव्यक्ति की है।

4.2 उद्देश्य

1. घनानंद के जीवन परिचय का बोध।
2. घनानंद की रचनाओं का ज्ञान।
3. घनानंद की रचनाओं में वर्णित विषय का ज्ञान।

4.3 घनानंद : व्याख्या भाग

1 पद

लाजनि लपेटि चितवनि भेद–भाव भरी, लसति ललित सोल–चख–तिरछानि मैं।
छवि को सदन गोरो बदन, रुचिर भाल, रस निचुरत मीठी मुदु मुसक्यानि में।
दसन–दमक फैलि हियें मोती–माल होति, पिय सों लड़कि प्रेम–पगी बतरानि मैं।
आनंद की निधि जगमगति छबीली बाल, अंगनि अनंग–रंग ढूरि मुरि जानि मैं।।

प्रसंग : प्रस्तुत कवित्त हमारी हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक–मध्यकालीन हिन्दी कविता' में संकलित कवि 'घनानंद' द्वारा रचित 'घनानंद कवित' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत कवित्त में घनानंद ने नायिका के रूप–सौन्दर्य एवं उनकी भव–भंगिमाओं का वर्णन किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कवित्त में घनानंद ने नायिका के रूप–सौन्दर्य का चित्रण करते हुए कहते हैं कि नायिका शरमातें हुए अर्थात् लज्जा–भाव में बहुत सुन्दर लग रही है। उसके सुंदर और चंचल की तिरछी भोहें बहुत सुन्दर और अत्यन्त रमणीय प्रतीत होती है। अर्थात् शर्माती हुई नायिका अत्याधिक सुंदर लग रही है। उसका गौरा वर्ण, सुन्दर मुख सुंदर मस्तिष्क को देखकर लगता है मानों सौन्दर्य का भण्डार है अर्तात् सुन्दरता का

साक्षात् घर है। उसकी मृदु मुस्कान से मानों मधुर रस टपक रहा हो। जब वह धीरे–धीरे मुस्कराती है तो उसकी मुस्कान वक्षस्थल पर फैले मोतियों की माला के समान प्रतीत होती है। जब वह अपने प्रियतम से प्रेम रस से भरी बातें करती है तब उसकी दन्तावलि की कान्ति उसके वक्षस्थल पर फैल कर मोतियों की माला के समान प्रतीत होती है। कवि कहता हैं कि अंग–अंग में जो काम–जन्य छटा छिटकती है, उससे उसका उसका रूप सौन्दर्य सुन्दर एवं आकर्षक लगता है।

विशेष

1. प्रस्तुत कवित्त में घनानंद ने नायिका का 'नख–शिख' वर्णन किया है।
2. सरल, सहज व भावपूर्ण ब्रज भाषा का प्रयोग हुआ।
3. अनुप्रास एवं उत्प्रेक्षा अलंकारों का प्रयोग।
4. कवित्त छंद का प्रयोग है।

2 पद

झलकै अति सुन्दर आनन गौर, छके दृग राजत काननि छवै।
हंसि बोलनि में छवि–फूलन की बरषा उर–ऊपर जाति है हवै।
लट लोल कपोल कलोल करै कल कंठ बन जलजावलि द्वै।
अंग–अंग तरंग उठे दुति की परिहै मनौ रूप अबै धर वे।।

प्रसंग : प्रस्तुत कवित्त हमारी हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक 'मध्यकालीन हिन्दी कविता' में संकलित कवि 'घनानंद द्वारा रचित 'घनानंद कवित्त' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों में कविवर घनानन्द ने नायिका के रूप–सौन्दर्य का चित्रण किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत पंक्तियों में कविवर घनानन्द ने नायिका के रूप–सौन्दर्य का चित्रण करते हुए कह रहे हैं कि नायिका का गौर वर्ण मुख रूप की छवि से झिलमिला रहा है। यौवन के उन्माद में उन्मत बड़ी–बड़ी आंखों कानो का स्पर्श करती हुई अत्यन्त सुशोभित हो रही हैं। जब नायिका मुस्करा कर, हंस–हंस कर कुछ बोलती है तो उसके वक्षस्थल पर सौन्दर्य के फूलों की वर्षा हो जाती है। कवि घनानन्द कहते है कि उसके चंचल तथा सुन्दर लटें नायिका के कपोलों पर क्रीड़ा कर रही है। उसके सुन्दर बाल उसकी गर्दन में मोतियों की माला की तरह शोभायमान है। उसके शरीर के एक–एक अंग में रूप–सौन्दर्य की लहरें उठती हैं, मानों उसका सौन्दर्य अभी–अभी पृथ्वी पर बिखर जाएगा।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने नायिका के रूप–सौन्दर्य का चित्रण किया है।
2. सरल, सहज व भावपूर्ण ब्रज भाषा का प्रयोग हुआ है।
3. अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग।
4. सवैया छंद का प्रयोग है।

3. पद

छवि को सदन मोद मंडित वदन–चंद तृषित चखनि लाल, कब धौ दिखाय हो।
चटकीली भेख करें मटकीली भांति सो ही मुरली अधर धरे लटकत आय हो।
लोचन ढूराय कछू मृदु मुस्क्याय, नेह भीनी बतियानी लड़काय बतराय हो।
विरह जरत जिय जानि, आनि प्रानप्यारे, कृपानिधि, आनंद को घन बरसाय हो।।

प्रसंग : प्रस्तुत कवित्त हमारी हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक 'मध्यकालीन हिन्दी कविता' में संकलित कवि 'घनानंद द्वारा रचित 'घनानंद कवित्त' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत कवित्त में घनानंद श्रीकृष्ण के प्रति गोपी की अभिलाषा का वर्णन किया है।

व्याख्या : गोपियां कहती है कि हे श्री कृष्ण। आप कब पधारोगे? सौन्दर्य–सदन प्रसन्नता से सुशोभित अपना मुख–चन्द इन प्यासी आंखें को कब दिखाओगे? हे श्रीकृष्ण! तुम भड़कीली वेशभूषा अर्थात् पीलेवस्त्र धारण करके चटक–मटक चाल के साथ अर्थात् मस्ती में झूमते हुए और होठों पर मुरली धारण किए हुए इधर कब आओगे? अर्थात् हमारी प्यासी आंखे आपके दर्शनों की अभिलाषी हैं। हे मधुसुदन! आप अपनी आंख मटकाते हुए, कोमल मुस्कराहट मेरे मन में ललक पैदा करने वाली बाते कब करोगे? हे स्वामी आप मुझे अपने विरह में जानबूझकर जलाते हो। कवि घनानंद कहते है कि हे प्राणप्रिय! हे कृपा के सागर! आप मुझ दीन पर कब आनन्द के बादल की बर्षा करोगे? अर्थात् मेरी विरहाग्नि को कब बुझाओगे?

विशेष

1. प्रस्तुत कवित्त में घनानंद ने गोपियों के विरह वेदना का चित्रण किया है।
2. सरल, सहज व भावपूर्ण ब्रज भाषा का प्रयोग।
3. रूपक, श्लेश अलंकारों का प्रयोग।
4. कवित्त छंद का प्रयोग है।

4 पद

वहै मुसक्यानि, वहै मृदु बतरानि, वहै लड़कीली बानि आनि उर में अरति है।
वहै गति लैन, औ बजावनि ललित बैन, वहै हंसि दैन, हियरा तें न टरति है।
वहै चतुराई सों चिताई चाहिबे की छवि, वहै छैलताई न छिनक बिसरति है।
आनन्दनिधन प्रानप्रीतम सुजान जू की, सुधि सब भांतिन सों बेसुधि करति है।।

प्रसंग : प्रस्तुत कवित्त हमारी हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक 'मध्यकालीन हिन्दी कविता' में संकलित कवि 'घनानंद द्वारा रचित 'घनानंद कवित्त' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों में घनानन्द ने नायिका के रूप सौन्दर्य एवं उनकी भाव–भंगिमाओं का वर्णन किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि नायिका के विरह की वेदना का चित्रण करते हुए कहता है कि हे प्राणप्रिय! तुम्हारे साथ बिताए गए प्रत्येक क्षण याद आते हैं। कवि कहता है कि तुम्हारी वह मुस्कान, वही बच्चों वाली कोमलतायुक्त बातें मेरे ह्रदय में बस गई है। उनकी वह मधुर, मस्त चाल, सुन्दर बांसुरी बजाना, बात–चीत पर हंसना ह्रदय से निकलता ही नहीं। अर्थात् मुझे आपके साथ बिताए हुए हर पल याद आ रहे हैं। कवि आगे कहते हैं कि तुम्हारी वह चतुरता से प्रेरित उनकी नायिका की ओर देखने की छटा एवं वह छैलापन क्षणभर के लिए भी भुलाए नहीं भूलता, सदैव ध्यान में चढ़ा रहता है।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्तियों में कवि के विरह वेदना का चित्रण हुआ है।
2. सरल, सहज व भापूवर्ण ब्रज भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग।
4. कवि छंद का प्रयोग।

5 पद

> **जासों प्रीति ताहि निठुराई सों निपट नेह, कैसे करि जिय की जरनि सो जताइयै।**
> **महा निरदई दई कैसे कैं जिवाऊं जीव, बेदन की बढ़वारि कहां ल दुराइयै।**
> **दुःखको बखान करिवै कौ रसना कै होति, ऐपै कहूं वाको मुख देखन न पाइयै।**
> **रैन दिन चैन को न लेस कहं पैये भाग, आपने ही ऐसे दोष काहि धौ लगाइयै।।**

प्रसंग : प्रस्तुत कवित्त हमारी हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक 'मध्यकालीन हिन्दी कविता' में संकलित कवि 'घनानंद द्वारा रचित 'घनानंद कवित्त' में से लिया गया है।

संन्दर्भ : प्रस्तुत कवित्त में घनानंद ने प्रेम की एकनिष्ठता एवं नायिका की निष्ठुरता, कठोरता का चित्रण किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कवित्त में घनानंद नायिका की निष्ठुरता, कठोरता का चित्रण करते हुए कहते है कि जिससे मैंने प्रेम किया, उसने मेरे साथ निष्ठुरता, कठोरता वाला व्यवहार किया अर्थात् उसने मुझसे प्रेम नहीं किया। कवि कहता है कि इस उपेक्षा भाव से मेरे ह्रदय में जलन होती है तुम्हे मैं कैसे बताऊं। वह कठोर ही नहीं, बल्कि अति निर्मम है। अपने ह्रदय से उस निष्ठुरता और निर्मम को कैसे जीने दूं। अर्थात् मैं उसे अपने ह्रदय से निकाल दूं अर्थात् कैसे भूला दूं? कवि कहता है कि मैं अपने विरह वेदना को कहां–कहां तक छिपाता फिरता रहूं। यह पीड़ा तो निरन्तर बढ़ती ही जाती है। अब तो यह पीड़ा इतनी अधिक बढ़ गई है कि छिपाने से भी नहीं छिपती। कवि आगे कहता हैं कि लाज के कारण इस पीड़ा का तो वर्णन भी नहीं किया जाता। विरह की वेदना इतनी अधिक हो गई है जो सहाय है। कवि कहते है कि यदि प्रिय का मुख देख पाऊं तभी संतोष प्राप्त होगा। अर्थात् रात–दिन चैन नहीं है, मन तड़पता रहता है। इसका प्रिय को दोष नहीं दिया जा सकता। यह तो सब अपने भाग्य का ही दोष है। इसीलिए मुझे ऐसी विरह–वेदना सहनी पड़ रही है।

विशेष

1. प्रस्तुत कवित्त में घनानंद नायिका की निष्ठुरता, कठोरता का चित्रण किया है।
2. भावपूर्ण ब्रज भाषा का प्रयोग।
3. कवित्त छंद का प्रयोग है।

6 पद

> **भोर ते सांझ लै कानन और निहारति बावरी नेकु न हारति।**
> **सांझ तें भोर लौ तारनि ताकिबो तारनि सो इकतार न टारति।**
> **जौ कहूं भावतो दीठि परै घनानंद आंसुनि औसर गारति।**
> **मोहन–मोहन जोहन की लगियै रहै आंखिन के डर आरति।।**

प्रसंग : प्रस्तुत कवित्त हमारी हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक 'मध्यकालीन हिन्दी कविता' में संकलित कवि 'घनानंद द्वारा रचित 'घनानंद कवित्त' में से लिया गया है।

सन्दंर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि घनानंद ने नायिका के विरह की व्याकुलता का वर्णन किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत पंक्तियों में नायिका की सखी किसी अन्य सखी को कहती है कि सुबह से सांय तक बावली, पगली वह वन की ओर देखती रहती है और इस प्रकार देखने में वह तनिक भी थकान अनुभव नहीं करती। अर्थात् अपने नायक की आने की राह देखती रहती है। सखी कहती है वह पागल की तरह अपने नायक की राह से सांयकाल से प्रातःकाल तक अपनी आंखों को नहीं हटाती। अर्थात् नायक के आने की उम्मीद में वह

रास्ता देखती रहती है। कवि कहते हैं कि नायिका टकटकी लगाकर नायक का रास्ता देख रही है उसका नायक कब और किधर से आ जाएं। कवि नायिका की मानसिक स्थिति का चित्रण करते हुए कहते है कि नायिका नायक के विरह में आंखों से आंसू बहा नहीं सकती। अर्थात् यदि वह नायक के विरह में आंसू बहाती है तो उसे डर है कि उसकी आंखों से आंसू बहते रहने के कारण उसकी आंखों की दृष्टि धुंधली न हो जाए और वह प्रिय को देख नहीं पाए। अर्थात् प्रिय के रूप दर्शन का अवसर ही खो बैठती है। कवि घनानंद कहते है कि इस प्रकार मनमोहन प्रिय को सामने देखने की इच्छा उसके नेत्रों के भीतर सदैव बनी रहती है।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्तियों में नायिका की विरह–वेदना का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है।
2. सरल ब्रज भाषा का प्रयोग।
3. सवैया छंद का प्रयोग हुआ है।

7 पद

भए अति निठुर, मिटाय पहचानि डारी, याही दुःख हमै जक लागी हाय हाय है।
तुम तो निपट निरदई, गई भूलि सुधि, हमै सूल सेलनि सो क्योह न भलाय है।
मीठे–मीठे बोल बोलि ठगी पहिलें तौ तब, अब जिय जारत कहौ धौ कौन न्याय है।
सुनी है कै नाहीं, यह प्रगट कहावति जू, काहू कलपाय है सु कैसे कल पाय है।।

प्रसंग : प्रस्तुत कवित हमारी हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक 'मध्यकालीन हिंदी कविता' में संकलित कवि 'घनानंद' द्वारा रचित 'घनानंद कवित' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत पद में कविवर घनानन्द ने विरह में तड़पती हुई विरहिणी नायिका का चित्रण किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत पद में विरहिणी नायिका अपने प्रियतम को उपालम्भ देती हुई कहती है कि – हे प्रिय! तुम अत्यन्त निष्ठुर हो गए हो। तुम मुझे भूल गए हो। तुमने मेरी पिछली जान–पहचान को भी पूरी तरह मिटा दिया है। अर्थात् तुम्हे उसका स्मरण कभी नहीं हो सकता। कवि घनानंद कहते हैं कि मुझे तो तुम्हारे विरह की पीड़ा की कसक किसी भी प्रकार नहीं भूलती। अर्थात् यह विरह वेदना मेरे हृदय को बार–बार पीड़ित करती रहती है। कवि घनानंद कहते है कि पहले तो तुमने अपनी मीठी–मीठी बातों से मुझे फांस लिया और अब मुझसे दूर रहकर अपने विरह की अग्नि में मेरे हृदय को जलाते हो। कवि कहते है कि अब तुम्हीं बताओ यह कैसा न्याय है। कवि घनानंद कहते है कि क्या तुमने यह प्रसिद्ध कहावत नहीं सुनी कि जो किसी को तड़पाता है, जो कष्ट देता है, वह स्वयं भी सुख–चैन हीं पाता। अर्थात् वह भी दुखी रहता है।

विशेष

1. प्रस्तुत पद में कविवर घनानंद ने संयोग एवं वियोग की अवस्था का चित्रण किया है।
2. सरल, सहज ब्रज भाषा का प्रयोग।
3. कवित्त छंद का प्रयोग।

8 पद

हीन भएं जल मीन अधीन, कहा कुछ मो अकुलानि समाननै।
नीर–सनेही को लाय कलंक, निरास है कायर त्यागत प्राने।
प्रीति की रीति सु क्यौ समुझै, जड़ मीत के पानि परें कों प्रमानै।
या मन की जु दसा घन आनंद, जीव की जीवन जान ही जानै।।

प्रसंग : प्रस्तुत कवित्त हमारी हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक 'मध्यकालीन हिन्दी कविता' में संकलित कवि 'घनानंद द्वारा रचित 'घनानंद कवित्त' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत पद में घनानंद ने सच्चे एवं आत्मनिष्ठ प्रेम का वर्णन किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत पद में घनानंद कहते हैं कि मछली जल के बिना जीवित नहीं रहती और जल के अध ीर होती है। वह जल की व्याकुलता में अपने प्राण त्याग देती है। परन्तु मेरी व्याकुलता मछली की व्याकुलता के समान नहीं है अर्थात् वह मेरी बराबरी नहीं कर सकती। कवि घनानंद कहते हैं मछली अपने प्रिय जल से अलग होकर कायरतापूर्वक अपने प्राणों को बलिदान कर देती और अपने प्रेमी और प्रेम को कलंकित करती है। परन्तु मैं कायरता या निराशा में अपने प्राणों का बलिदान नहीं कर सकता। अर्थात् मेरा प्रेम सच्चा और पवित्र है। मैं प्रेम को कलंकित नहीं कर सकता। कवि कहता है कि मछली प्रेम की प्रकृति और रीति को नहीं समझती इसलिए वह अपने प्राण त्याग देती है जबकि प्रेम में तो मिलन और इंतजार का भाव रहता है। अर्थात् प्रेम तो जीवन को जीवन–दान देने वाली संजीवनी है। कवि घनानन्द कहते हैं कि मेरे इस मन की जो दशा है उसको समझने वाली संजीवनी स्वरूप सुजान ही जानती है।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्तियों में कवि घनानन्द ने अपनी प्रेयसी सुजान की निष्ठुरता का उल्लेख किया है।
2. भावपूर्ण ब्रज भाषा का प्रयोग।
3. वक्रोक्ति अलंकार का प्रयोग।
4. कवित्त छंद का प्रयोग है।

स्वयं आकलन के प्रश्नः

1. घनानन्द किस काव्य धारा से सम्बंधित थे?
2. घनानंद की एक रचना का नाम लिखों?
3. घनानंद किसके दरबारी कवि थे?

4.4 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि घनानन्द ने अपने काव्य में अपनी प्रेमिका सुजान के प्रेम को अभिव्यक्ति किया है।

4.5 कठिन शब्दावली

चितवनि – दृष्टि। **लसति** – सुशोभित। **ललित**– सुन्दर, मनोहर। **लोल–चख** – चंचल नयन। **सदन**– घर। **निचुरत** – निचुड़ता है। **दसन–दमक**– दांतों की चमक। **छबीली** – छवियुक्त, सुन्दर। **आनन**– मुख। **राजत** – सुशोभित। **काननि छबै** – कानों को छूते हुए। **कलकंठ** – सुन्दर गर्दन। **चटकीली** – भड़कीली। **तृषित** – प्यासी। **लटकत** – प्रेम की मस्ती से झूमते हुए। **नेह भीनी** – से सिक्त। **लड़काय** – ललक पैदा करके। **कृपानिधि**– कृपा के सागर। **बतरानि** – बातें। **ललित** – सुन्दर। **बैन**– बांसुरी। **टरति** – टलती। **छिनक** – क्षण भर भी। **बिसरति** – भूलती। **सुधि** – स्मृति। **बेसुधि**– होश–हवास खो देना। **निठुराई** – निष्ठुरता, कठोरता। **जरनि**– जलन। **जिवाऊं**– जिलाऊं। **दुराइयै**– छिपांऊ। **बावरी** – बावली। **न हारति** – थकती नहीं। **ताकियां न टारति**– देखना नहीं छोड़ती। **आंसुनि औसर गारति** – आंसुओं से अवसर खो देती है, रो–रो कर अवसर गंवा देती है। **निठुर**– निष्ठुर, कठोर। **सूल–सेलनि** – वेदना की टीस। **जिय जारत**– ह्दय जलाते हो। **पायहै**– पाएगा। **हीन भएं जल** – जल से वियुक्त होकर। **मीन अधीन**– मछली विवश होती है, व्याकुल हो जाती है। **पानिपऐं** – हाथों में। **जान** – सुजान, प्रेमिका।

4.6 आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. रीतिकाल की रीतिमुक्त काव्य धारा।
2. घनानंद कवित्त।
3. मुहम्मद शाह रंगीला।

4.7 संदर्भित पुस्तक

1. लल्लन राम – घनानंद।

4.8 सात्रिक प्रश्नः

1. घनानंद का जीवन परिचय लिखों।
2. घनानंद की काव्यगत विशेषताओं का चित्रण कीजिए।

*****

इकाई–5
सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

संरचना

5.1 भूमिका

5.2 उद्देश्य

5.3 निराला का जीवन परिचय

स्वयं आंकलन प्रश्न

5.4 सारांश

5.5 कठिन शब्दावली

5.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

5.7 सन्दर्भित पुस्तक

5.8 सात्रिक प्रश्न

5.1 भूमिका

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला आधुनिक हिन्दी साहित्य के सुदृढ़ स्तंभ कहे जाते है। उन्होंने अपने विपुल साहित्य के द्वारा आधुनिक हिन्दी को समृद्ध बनाया और उसे गौरवान्वित किया। उनका जीवन स्वयं अपने आप में एक साहित्य है। प्राचीन और मध्यकालीन कवियों की तरह निराला की जन्मतिथि उलझी हुई है। यद्यपि उनकी जयंती माघ शुक्ला पंचमी (अर्थात् वसंत पंचमी) को मनाई जाती है। फिर भी इसे प्रमाणिक नहीं माना गया है।

5.2 उद्देश्य

1. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला के जीवन परिचय बोध।
2. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की रचनाओं का बोध।
3. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की काव्यगत विशेषताओं का ज्ञान।

5.3 निराला का जीवन परिचय

रामनरेश त्रिपाठी निराला का जन्म माघ सुदी एकादशी संवत 1955 (सन् 1898) में मानते हैं। डॉ0 श्यामसुंदर दास निराला का जन्म माघ सुदी एकादशी संवत 1953 (सन् 1896) को मानते है। तृतीय वर्ग में डॉ. रामविलास शर्मा, डॉ0 बच्चन सिह, राहुल सांकृत्यायन है जो वसंत पंचमी संवत 1953 (सन्1896) को निराला की जन्म तिथि मानते हैं।

निराला जी के शिष्य डॉ. शिवगोपाल मिश्र का कथन है कि यद्यपि निराला का जन्म संवत विवादस्पद है किन्तु स्वयं महाकवि अपनी स्मृति के आधार पर सं0 1953 (सन् 1896) के आसपास अपना जन्म बताया करते थे। महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने जब निराला का साक्षात्कार लिया तो निराला ने सन् 1896 ई. को ही अपना जन्म संवत स्वीकार किया था। वसंत पंचमी के दिन निराला के जन्म का क्या आधार है, इसे विद्वान आज तक स्पष्ट नहीं कर पाए है हालांकि महाकवि निराला की जयन्ती आज भी वसंत पंचमी को ही मनायी जाती है। निराला के जीवन में भी लोग इसी दिन निराला की जयंती मनाते थे और स्वयं निराला ने भी उसमें कई बार भाग लिया। अतः वर्तमान समय में वसंत पंचमी अर्थात् माघ शुक्ला पंचमी संवत 1953 (सन् 1896) को माना जाता है।

महाकवि निराला का जन्म बंगाल के मेदिनीपुर परिक्षेत्र के महिषादल नामक स्थान पर हुआ था। महिषादल को तो संयोगवश महाकवि के जन्म स्थान होने का गौरव प्राप्त हो गया, अन्यथा जिस भूमि का गौरव उनकी धमनियों में व्याप्त था वह तो बैसवाडे की भूमि थी। निराला के पिता उत्तर प्रदेश में स्थित बैसवाडे (उन्नाव जिले के अन्तर्गत) के छोटे से ग्राम गढ़ाकोला के रहने वाले थे और महाकवि के जन्म के कुछ समय पूर्व ही महिषादल में नौकरी करने आए थे।

भावुक ह्रदय निराला माता की ममता को बांछित रूप से न पा सके, क्योंकि उनकी ममतामयी मां अपने प्रिय पुत्र को तीन वर्ष की अल्पायु में छोड़कर परलोकगामिनी हो गई थी। निराला की दो माताओं का उल्लेख मिलता है इनकी पहली माता का रुकमणी था। निराला का जन्म दूसरी माता से हुआ था जो फतेहपुर जनपद के चांदपुर गांव के दुबे वंश की अत्यन्त रूपवती कन्या थी। निराला के पिता का नाम पं0 रामसहाय त्रिपाठी था। पं. रामसहाय अक्खड़ और कठोर स्वभाव के व्यक्ति थे। उनकी कठोरता के संबंध में निराला ने स्वयं लिखा है पीटते वक्त पिताजी इतने तन्मय हो जाते थे कि वे यह भूल जाते थे कि वह (निराला) दो विवाह के बाद पाए गए इकलौते पुत्र को मार रहे है। मैं भी स्वभाव न बदल पाने के कारण मार खाने का आदी हो गया था। चार–पांच साल से अब तक एक ही प्रकार के प्रहार की हद भी मालूम हो गई थी। निराला में पिता जी के इस आचरण से सहनशीलता आ गई थी। इसलिए बड़े बड़े सामाजिक एवं साहित्यिक प्रहारों के अपने ऊपर सहा। इसी के साथ अक्खड़ता और उद्धतता के गुण भी उन्हें पिता जी से मिले थे।

निराला को लोग निराला नाम से ही जानते हैं। इनका पूरा नाम पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी निराला था। निराला इनका उपनाम था। निराला का जन्म रविवार को हुआ और उनकी माता इनके जन्म के लिए रविवार का व्रत रखती थी। इसलिए इनका बचपन का नाम सूर्यकुमार रखा गया। बाद में स्वयं अपना नाम बदल का सूर्यकांत कर लिया। 'मतवाला' पत्र में सूर्यकांत 'निराला' छद्म नाम से हिन्दी लेखकों के गलत प्रयोगों पर कटाक्ष किया करते थे किन्तु बाद में यह रहस्य खुल गया। इस प्रकार इन्होंने अपने नाम से 'निराला' उपनाम जोड़ लिया। निराला 'मतवाला' पत्र में गरजसिंह वर्मा के नाम से भी समालोचनाएं लिखा करते थे।

निराला की माता का देहांत उनके जन्म के तीन वर्ष पश्चात् हो गया था। अतः निराला के पालन–पोषण का भार महिषादल के राजा साहब ने अपने पुत्रों का पालन करने वाली धाय को सौंप दिया। इस प्रकार बंगाल में निराला का वचपन राजकुमार की तरह बीता। जब वे पांच वर्ष के हो गए तो इनके अध्ययन के साथ साथ व्यायाम का भी प्रबंध किया गया। प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात उन्हे महिषादल में ही राज्य के हाईस्कूल में दाखिल करवाया। बंगला ही इनकी मातृभाषा रही। हिन्दी के नाम पर वह केवल घर में बोली जाने वाली अवधि से ही परिचित थे। हिन्दी का परिमार्जित ज्ञान इन्हे आगे चल कर अपनी पत्नी से मिला। अंग्रेजी का ज्ञान इन्हें हरिपद घोषाल से मिला। संस्कृत में इनकी रुचि दर्शनशास्त्र और भारतीय संस्कृति में झुकाव के कारण थी। नवीं कक्षा में बंगला के साथ अंग्रेजी, संस्कृत, इतिहास और गणित इनके अध्ययन के विषय थे। नवीं कक्षा तक इन्होंने जम कर पढाई की थी लेकिन इसी समय इनका विवाह होने पर पढ़ाई से इनका मन उचटने लगा। परिणामस्वरूप इन्होने दसवीं की परीक्षा नहीं दी। इसके अलावा किसी ने इनके दिमाग में यह बात भर दी कि बड़े व्यक्ति बनने के लिए अधिक पढ़ना, लिखना जरूरी नहीं, क्योंकि बड़े व्यक्ति कम ही पढ़े–लिखे होते है।

एक परीक्षा के निबंध में यह प्रश्न आया था कि तुम बड़े होकर क्या बनोगे? निराला ने उत्तर दिया कि मैं बड़ा होकर निराला बनूंगा।" इस प्रकार स्कूली शिक्षा इनकी नवीं कक्षा तक ही हुई। आगे की कमी को इन्होंने अपने अध्यवसाय से पूरी की। इन्होंने जहां एक ओर वेदांत दर्शन और विवेकानन्द के साहित्य का गहन अध्ययन किया वहां दूसरी ओर वे संस्कृत बंगला, हिन्दी और अंग्रेजी के साहित्य के अध्ययन में भी मनोयोग पूर्वक प्रवृत हुए। इनके साथ ही संगीत शास्त्र व्याकरण शास्त्र का ज्ञान भी उन्होंने अर्जित किया। संगीतशास्त्र में तो वे पूर्ण दक्ष थे।

सन् 1912 में इनका विवाह चांदपुर (फतेहपुर) के निवासी पं. रामदयाल द्विवेदी की पुत्री मनोहरादेवी से हुआ। इसके श्वसुर नवावी युग के रईस मिजाज के व्यक्ति थे। उन्होंने निरालाजी का विवाह काफी दान—दहेज देकर काफी शान—शौकत से डलमऊ में ही संपन किया। विवाह के एक वर्ष पश्चात् इनका गौना कर दिया गया। गौना हो जाने के पश्चात् इनके पिता अपने पुत्र और पुत्रबधु को महिषादल ले गए।

विवाह के पश्चात् पढाई छोड़ने के कारण निराला के पिता इनसे काफी क्षुब्ध थें उन्होंने निराला को अपन पैरों पर खड़े होने का आदेश दे दिया। परिणाम स्वरूप निराला अपनी पत्नी सहित डलमऊ चले गए और छः मास तक वहीं रहे। ससुराल में इनकी काफी खातिरदारी हुई और निराला के जवीन के सबसे मधुर दिन बीते। इनकी पत्नी अति सुन्दर और विदुषी थी। हिन्दी सीखने और कविता लिखने की प्रेरणा इन्हें अपनी पत्नी से ही मिली थी।

वैवाहिक जीवन इनका अधिक देर तक नहीं चला। डलमऊ से इनके पिता जो इन्हें और पुत्रवधु को मना कर ले गए। सन् 1914 में इन्हें एक पुत्र रामकृष्ण तथा सन् 1917 ई. में एक पुत्री सरोज का जन्म हुआ। पुत्री के जन्म के एक वर्ष पश्चात् सन् 1918 में इनकी पत्नी मनोहरा देवी की देश में फैली महामारी इन्फलुएंजा से मृत्यु हो गई।

पत्नी की मृत्यु के बाद तो जैसे कवि के जीवन से समस्त मधुरताओं का अंत हो गया। निराला को अपनी पत्नी की मृत्यु का समाचार अकस्मात ही मिला था। जब वे घर पहुंचे तो इनके चचेरे भाई बदलूप्रसाद, भाभी, चाचा की भी मृत्यु हो चुकी थी। इन्हीं दिनों इनके पिता जी की भी मृत्यु हो गई। निराला का घर उजड़ गया। इनके ऊपर अपने दो तथा चचेरे भई के चार बच्चों के लालन—पालन की जिम्मेदारी आ गई। आर्थिक समस्या के कारण वे न अपने पुत्र के लिए उचित शिक्षा का प्रबंध कर सके और न अपनी पुत्री सरोज का विवाह समुचित ढंग से कर सके।

दुःख ही जिसके जीवन की कथा रही उसने न जाने कितने दुःखों के निर्मम वार अपने ऊपर सहे। सन् 1935 ई. में इनकी प्राण प्रिय बेटी सरोज भी इनको छोड़ कर चली गई तो इनका बज्र हृदय विदीर्ण हो उठा। उनकी याद में लिखी सरोज स्मृति कविता विश्व का प्रसिद्ध शोक गीत है।

निरंतर संघर्षों, अभावों और दुःखों से जूझते रहने के कारण निराला का मस्तिष्क कुछ असंतुलित हो गया था। उन असंतुलित व्यवहार को देख कर लोग इन्हे 'पागल' भी कह देते थे। इनके मानसिक असंतुलन का एक कारण यह भी रहा कि उन्होंने निरंतर अभावों और दुःखों का गरल पिया। स्वभाव से अहंवादी एवं आत्मसम्मानी थे। अपने अहं पर चोट लगने से ये प्रायः असंतुलित हो जाते थे। इनके स्वभाव को असाधारणता का एक अन्य कारण स्वामी शारदानंद का प्रभाव भी माना जाता है। निराला ने स्वयं स्वीकार किया कि वे मिशन के स्वामी शारदानंद को हनुमान का अवतार मानते थे और अनेक लेखों में उन्होंने स्वामी के चमत्कारी प्रभावों का उल्लेख किया है और अपने को उनसे प्रभावित माना है। उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि शारदानंद के दर्शन मात्र से मैं सुध—बुध खो बैठता था और फिर उनका मन पक्षी न जाने कहां उड़ने लगता था। चूंकि वेदांत का प्रभाव उन पर सर्वाधिक पड़ा था। अतः इन मिथ्या संसारी जीवों में वे पूरी तरह रम नहीं पाते थे। इन्हीं सव कारणों से उसे निराला कहा जाता था।

निराला बहुमुखी प्रतिमा के धनी थे। उन्होंने साहित्य की लगभग सभी विद्याओं पर सृजन किया। निराला द्वारा सृजित साहित्य को काव्य साहित्य, निबंध और प्रबंध, कथा साहित्य जीवनी तथा अनूदित साहित्य में विभाजित किया जा सकता है।

काव्य साहित्य : इनके काव्य साहित्य में 'अधिवास' (सन् 1916) 'जूही की कली' (सन् 1916), तुलसीदास (सन् 1923), परिमल (सन् 1930) 'गीतिका' (सन् 1936), तुलसीदास (सन् 1938), अणिमा (सन् 1943) कुकुरमुत्ता (सन् 1942), अपरा (सन् 1946), नये पत्ते (सन् 1946) 'बेला' (सन 1946), अर्चना (सन् 1950), अराधना (सन् 1953), गीत गुञ्ज (सन् 1954) तथा कवित्री (सन् 1955) में प्रकाशित हुई।

निबंध और प्रबन्ध : हिन्दी बंगला का तुलनात्मक व्याकरण (1919), कविवर श्री चंडीदास (सन् 1920), चरखा विश्वकवि रवीन्द्रनाथ और महात्मा गांधी (सन् 1925), रवीन्द्र कविता कानन (सन् 1928), प्रबन्ध पद्य (सन्1934) प्रबन्ध प्रतिमा (सन्1940), पंत और पल्लव (सन् 1949), चाबुक (सन् 1919), चयन (सन् 1957) निराला के ये निबंध एवं प्रबंध रचनाएं है। इसके अलावा निराला ने कथा साहित्य की भी रचना की है। उनका कथा साहित्य इस प्रकार से हैः

कथा साहित्य :

अप्सरा (सन् 1932), अलका (सन् 1933) लिली (सन् 1934) निरूपमा (सन् 1936), प्रभावती (सन् 1936) समर्पण (सन् 1936) कुल्ली भाट (सन् 1936) चमेली (सन् 1942), विल्लेसुर बकरिहा (सन् 942), चतुरी चमार (सन् 1945), सुकुल की बीवी (सन् 1942) चोटी की पकड़ (सन् 1947), देवी (सन् 1948) काले कारनामे (सन् 1950)।

निराला द्वारा रचित जीवनियां इस प्रकार से हैं :

भक्त ध्रुव (सन् 1926), महाराणा प्रताप (सन् 1925), भक्त प्रहलाद (सन् 1925), भीष्म (सन् 1926)।

निराला ने बहुत सी रचनाओं के अनुवाद भी किये है जो इस प्रकार से हैंः महाभारत (संक्षिप्त) 1939, श्री रामकृष्ण वचनामृत 3 भाग, (सन् 1942), रामायण (विनय खंड) (सन् 1948), भारत में विवेकानन्द (सन् 1948), तथा 'गीत गुंज' के आरम्भ में अनूदित साहित्य है। निराला ने बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय कृत ग्यारह रचनाओं का भी हिन्दी में अनुवाद किया। उन्होंने हिन्दी बङ्गला शिक्षक' का भी बंगला से हिन्दी में अनुवाद किया।

निराला अपने जीवन के अंतिम क्षण तक विभिन्न दुःखों एवं आर्थिक अभावों को झेलते रहे। इन्हें जब भी कभी अच्छी राशि मिली तो उसे दान में दे दिया। यहां तक मुंह के आगे पसरी थाली एक बुढिया के लिए नागपंचमी मनाने हेतु दे दी। इन विकट परिस्थितियों में भी उन्होंने साहित्य का दामन नहीं छोड़ा और जीवन भर साहित्य सृजन में प्रवृत रहे। अगस्त 1960 में वे बीमार पढ़ गए और फिर कमी स्वस्थ नही हुए। 24 अक्तूबर सन् 1961 को रविवार के दिन प्रातः 9:00 बजकर 23 मिनट पर हिन्दी साहित्यआकाश का यह सूर्य सदा के लिए अस्त हो गया।

❖ निराला की काव्यगत विशेषताः

निराला के मुक्त छंद

मुक्त छंद हिन्दी काव्य को निराला जी की एक महत्वपूर्ण देन है। मुक्त छंद के प्रयोग के संबंध में हिन्दी काव्याकाश मं निराला का उदय एक धूमकेतु के समान हुआ जिसे देखकर काव्यमर्मज्ञ महारथी सहसा चौंक पड़े। सन् 1916 में उनकी कविता 'जुही की कलो' की रचना इसी छंद में हुई। इस छंद का परिहास करते हुए काव्य जगत में इसे 'खड छंद' स्वच्छन्द छंद, केचुआ छंद, कंगारू छंद आदि कई नाम दिए गए और मह छंद काव्य जगत में गहन चर्चा का विषय बन गया। इस अभिनव छंद प्रयोग को लेकर उस समय निराला का चारों ओर डट कर विरोध भी हुआ।

मुक्त छन्द का निराला द्वारा प्रयोग यद्यपि हिन्दी के लिए नया था किन्तु अंग्रेजी और यहां तक बंगला में भी उसका प्रयोग प्रर्याप्त पहले से हो रहा था। इस प्रकार निराला इस छन्द के अविष्कारक न होकर हिन्दी में प्रथम् प्रयोक्ता थे। गहन विरोध के होते हुए भी उन्होंने अपने काव्य में सफलता पूर्वक इस छंद का प्रयोग किया।

निराला के मुक्त छन्द का संबंध वेदों से स्थापित किया हुआ भी माना जाता है। गायत्री मंत्र को उन्होंने आर्यों की स्वच्छ प्रकृति का सबसे बड़ा परिचायक माना है। संभव है, मुक्त छंद के प्रयोग में निराला जी बंगला से प्रभावित न होकर वेड़ों से प्रभावित हुए है किन्तु प्रतीत यह होता है कि मुक्त छंद के विदेशी प्रभाव के कारण अपना घोर विरोध होते डुए देखकर उन्होंने खोज की ओर उसका मूल वेड़ों में पा लिया हो।

मुक्त छंद क्या है? इस संबंध में बहुत भ्रम है। प्रायः भिन्न तुकांत या अतुकांत छन्दों को मुक्त छंद समझ लिया जाता है किन्तु केवल अतुकान्तता से मुक्त छन्द नहीं रचा जाता। अतुकांतता वर्णिक, मात्रिक तथा गणवृत्तों में भी मिलती है किन्तु वे सब एक सीमा में बन्धे हुए है। अतः वे मुक्त छंद नहीं है। गणवृत्तों में गणों की श्रृखंला मात्रिक वृत्तों में मात्राओं की समता और वर्णवृत्तों में वर्णों का एक विशेष क्रम या समानता मिलती है। इस प्रकार के नियमों में बंधकर चलने बाले छंद मुक्त छंद नहीं है। श्री जयशंकर प्रसाद, रूपनारायण पाण्डेय, मैथिलीशरण गुप्त, सियाराम शरण गुप्त और पंत जी ने इन भिन्न तुकांत और अतुकांत छन्दों का प्रयोग किया है, किन्तु वे सब मुक्त छन्द की कोटि में नहीं आते। मुक्त छंद के संबध में निराला स्वयं कहते है, मुक्त छन्द तो वह है जो छंद की भूमि में रहकर भी मुक्त है।... मुक्त छन्द का समर्थक उसका प्रवाह ही है। वही उसे छन्द सिद्ध करता है और उसका नियम–साहित्य उसकी मुक्ति है। छन्द और मुक्त छंद में विभेद करते हुए अन्यत्र उन्होंने कहा है, "छन्द भी जिस तरह कानून के अन्दर सीमा के सुख में आत्म–विस्मृत हो सुन्दर नृत्य करते, उच्चारण की शृखंला रखते हुए श्रवण–माधुर्य के साथ ही साथ श्रोताओं को सीमा के आनन्द में भी भुला रखते है, उसी तरह मुक्त छंद भी अपनी विषय गाति में एक ही साम्य का अपार सौन्दर्य देता है जैसे एक ही अनन्त महासमुद्र के ह्रदय की सब छोटी–बड़ी तरंगे हो, दूर प्रसारित दृष्टि में एकाकार, एक ही गाति में उठती और गिरती हुई।" मुक्त छन्द पदो, गीतों, प्रगीतो और वर्णवृतों से तो भिन्न ही है, अपने ही क्षेत्र में भी वह कई प्रकार के ढांचों से भी भिन्न होता है अंत में तक न मिलने मात्र से भी वह कई प्रकार के ढाचों से भी भिन्न होता है। अंत में तुक न मिलने मात्र से भी कोई छन्द स्वच्छंद नहीं हो जाता।

मुक्त छंद सब प्रकार के बंधनों से मुक्त होता हैं पंक्तियों का आकार छोटा बड़ा होना भी मुक्त छन्द का लक्षण नहीं हैं। स्वयं निराला का विख्यात काव्य 'कुकुरमुत्ता' मुक्त छन्द का उदाहरण नहीं है। उसके चरण विषय अवश्य है पर उसमें भी तुकें मिलती चलती है, जैसे :

अबे सुन वे, गुलाब
भूल मत जो पायी खुशबु रंगों आब,
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,
डाल पर इतरा रहा कैपिटलिस्ट।

इस प्रकार मुक्त छंद गणों, मात्राओं और शब्दों की समानता बाले अतुकांत छन्दों से ही भिन्न नहीं होता, वह उन छोटे बड़े आकार वाले चरणों के छंद से भी भिन्न होता है जिनके अंत में तुक मिलते है।

मुक्त छंद न तो छंद के बंधन को अपनाता है और न तुक के आग्रह को। वह केवल लय पर आधारित रहता है। मुक्त छंद के चरण विषय रहते है।

वह अतुकांत रहता है तथा उसका मुख्याधार किसी प्रकार की लय है। निम्न उदाहरण दृष्टव्य है :

मुक्ति नहीं जानता मैं, भक्ति रहे काफी है।
सुधाकर की कला में अंशु यदि बनकर रहूं
तो अधिक आनन्द है।
अथवा यदि होकर चकोर कुमुद नैश गंध
पीता रहूं सुधा इंदु सिंधु से बरसती हुई
तो सुख मुझे अधिक होगा?
इसमें संदेह नहीं,
आनन्द बन जाना हेय है
श्रेयस्कर आनन्द पाना है।

निराला ने परम्परागत छंदों के प्रचलित ढांचो पर कुठाराधात करके अपने घोर विरोध से तनिक भी विचलित न होते हुए मुक्त छंद की नई लीक डालकर बड़े जीवट से काम लिया। छंद प्रयोग के क्षेत्र में यह एक क्रांतिकारी चरण था। उनकी 'जुही की कली', 'अनामिका', 'नये पत्ते', 'संध्या सुन्दरी', 'भिक्षुक', 'विधवा', 'पंचवटी–प्रसंग', महाराज शिवाजी का पत्र', जागो फिर एक बार', 'शेफालिका', आदि मुक्त छंद में लिखी अमर कविताएं हैं।

❖ निराला के काव्य में वर्ग संघर्ष की चेतना :

निराला में वर्ग के भाव बहुत पहले से ही थे। यह कुछ तो अवध की मिट्टी का संस्कार था और कुछ महिषादल के रहने के कारण संभव हुआ। महिषादल में नौकरी करते हुए उन्होंने किसान और भूमिपतियों के संबंध की सारी जटिलताएं देखी थी। इसी कारण उन्हें अपनी नौकरी छोड़नी पड़ी थी। निराला किसान के बेटे थें किसान सिपाही हो गया था लेकिन किसान के संस्कार नहीं मिटे थे। इस दशा में निराला जमींदार के मुलाजिम होकर किसानों से किस प्रकार निपट सकते थे। इसीलिए उन्होंने नौकरी छोड़ थी। यह उनके मन में निहित वर्ग चेतना के कारण ही संभव हुआ।

महिषादल के बाद भी निराला का संपर्क गांव के किसानों खेतिहारों और निम्न वर्ग के लोगों से बना रहा। जब वे देहात में रहते थे तो उनका घर साधारण जनों का अड्डा (House of Commons) बना रहता था। ऐसा उन्होंने 'चतुरी–चमार' में लिखा है। जब निराला कुछ दिनों के लिए गांव से बाहर जाते थे तो किसान आन्दोलन एकदम निर्बल पड़ जाता था। वे किसान आन्दोलन के प्रबल समर्थक थे। अन्याय सहना उनके स्वभाव के विरुद्ध बात थी।

'कुकुरमुत्ता' मूलतः वर्ग–चेतना और वर्ग–संघर्ष का काव्य है। जिस समाज और काल में निराला रह रहे थे वर्ग–चेतना और वर्ग संघर्ष उस समाज और उस काल की प्रमुख विशेषता थी। ऐसी विशेषता जिसकी ओर कोई भी वस्तुवादी विचारक या कलाकार आंखें नही मूंद सकता। उसका उल्लेख न करना उस समय की सामाजिक सच्चाई को झुठलाना है। इसीलिए निराला ने 'कुकुरमुत्ता' में वर्ग–चेतना या वर्ग संघर्ष को स्पष्ट वाणी दी। यह तो मात्र शुरूआत भर थी जिसका विकास आगे की कविताओं विशेषकर 'नये पत्ते' और 'वेला' में हुआ। वर्ग चेतना की दृष्टि से 'नये पत्ते' की कविता 'थोड़ों के पेट में बहुतों की आना पड़ा' ध्यान देने योग्य है।

वर्ग चेतना प्रधान काव्य में शोषण के मूलभूत कारणों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। जनता वास्ताविकताओं, आर्थिक संबंधों, शोषणों, स्वार्थों को जान जाए और यह चेतना उसके मन में लोहे की कनी सी चुभे, यही वर्ग चेतना के लक्षण हैं। निराला ने अपनी वर्ग चेतना मूलक कविताओं में ऐसा ही किया है। उन्होंने यह कविताएं उस समय लिखी जब देश पराधीन था। इस प्रकार जनता पर दोहरा भार था। एक ओर विदेशों सत्ताधारी थे और दूसरी ओर अपने ही देश के पूंजीपति स्वार्थी जमींदार और अंग्रेजों के नमक हलाल। जनता इन दोनों ही पक्षों को, उनके स्वार्थों और असलियतों को पहचानती थी। कवि ने इन दोनों के स्वस्थ और स्वभाव की वास्तविकता स्पष्ट की है :

बानिज के राज ने लक्ष्मी को हर लिया
टापू में ले चल कर रखा और कैद किया
एक का डंका बजा
बहुतों की आंख झंपी
लहलही धरती पर रेगिस्तान जैसा तपा
जोत में जल छिपा
धोखा छिपा, छल छिपा।

यहां जनता की दृष्टि में कवि ने विदेशी शासन की वास्तविकता स्पष्ट कर दी है। यह वास्तविकता बोध ही वर्ग चेतना है। यही उन्हें अपनी स्थिति और सामाजिक स्वरूप पर विचार करने के लिए प्रेरित करती है। विदेशी शासन के स्वार्थपूर्ति वाले रवैये से निराला के सख्त नफ़रत है। स्वार्थपूर्ति हेतु विदेशियों ने यहां के लोगों (भारत के) को अपने जाल में फंसाया है। इस प्रकार ऐसे चापलूस लोगो की प्रवृति को निराला जनता के सामने स्पष्ट करते है। 'राजे ने अपनी रखवाली की' कविता में वे ऐसा ही एक चित्र उभारते हैं :

कितने ब्राह्मण आये
पोथियों में जनता को बांधे हुए
कवियों ने उसकी (राजा की) बहादुरी के गीत गाये
लेखकों ने लेख लिखे
ऐतिहासिकों ने इतिहास के पन्ने भरे
नाट्य कलाकारो ने कितने नाअक रचे
रंगमंच पर खेले।

इस प्रकार राजा लोगों को वरगलाकर, झांसा पट्टी देकर या टुकड़ों का लालच दिखाकर जनता से अलग करता है। एक विशेष दशा तक जब तक जनशक्ति जागृत नहीं होती। इस प्रकार देशी और विदेशी उच्च वर्गो के लोगों द्वारा शोषण की प्रक्रिया जारी रहती है। वर्ग चेतना में जहां शोषक के स्वार्थी, उसकी चालवाजियों, शोषण–यंत्रों और प्रक्रियों का ज्ञान आवश्यक है वहां निजी शोषित स्वरूप पर ध्यान जाना भी आवश्यक है। 'दगा की' कविता में जनता वर्ग चेतना के आलोक में अपना चेहरा साफ देखती है :

चेहरा पीला पड़ा
रीढ़ झुकी। हाथ जोड़े
आंख कमा अंधेरा बढ़ा
सैंकड़ों सदियां जुजरी।

जब तक जनता की अपने इस दयनीय रूप का बोध नहीं होता, जन चेतना बलवती नहीं होती। 'नये पत्ते' की कविताओं में सामाजिक वैषम्य और अव्यवस्था के बीच जन की विवशता, कुंठा और असहायता का अच्छा चित्रण हुआ है। विवशता, कुंठा और असहायता का अच्छा चित्रण हुआ है। विवशता का चुभता हुआ बोध अन्ततः कर्म की प्रेरणा देता है और उसका कारण होता है।

'नये पत्ते की कविताओं में जनता के विविध शोषकों का रूप खुलकर स्पष्ट हुआ हैं कवि ने व्यापारियों, बनियों और वैश्यों किसी को नहीं छोड़ा है। जनता की आंखों से झका शोषक रूप नहीं छिप सकता। एक ओर तो जन–साधारण दिन–दिन गरीब होते जा रहे है और दूसरी ओर ये पूंजी बढाते है और स्वच्छ विहार करते है :

बालों के नीचे पड़ी जनता बलतोड़ हुई
माल के दलाल ये वैश्य हुए देश कें
सागर भरा हुआ
लहरों से बहल रहे
किसे समंदर पर पड़ती कैसी दिखी
लहरों के झूले झूले
कितना बिहार किया कानूनी पानी पर।

वर्ग संघर्ष में पहली स्थिति है। निर्यमयता और निर्भीकता की। शोभित शोषक से आंखे मिला सके और उसकी राह रोक कर खड़ा हो यह आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है, लेकिन यह तभी हो सकता है जब आपस में ध्येय और लक्ष्य की एकता हो। ऐसी स्थिति में वादविवाद परे रख देने होंगे। मध्यम के लोगों की तरह जबांदराजी नही करनी होगी। तभी हम कामयाब हो सकते हैं। ऐसा होने पर ही दुश्मनों के पैर नहीं जमेंगे। निराला का जन साधारण यही कहता है।

जनता के स्वभाव की निराला ने 'कुता भौंकता रहा' कविता के माध्यम से स्पष्ट किया है कि प्राकृतिक अपदा में सारी फसल तवाह है। गांव का जीवन जड़ हो गया है लेकिन शोषकों को इससे क्या लेना देना है। कंधे पर लट्ठ डाले एक सिपाही आता है और कह जाता है

डेरे पर थानेदार आए है
टिप्पी साहब ने चन्दा लगाया है
एक हप्ते के अन्दर देना है
चलो एक बात दे आओ।

शोषितों को ये चुप्पी ही शोषकों को शोषण का मौका दे रही है। इस बात की सांकेतिक अभिव्यक्ति निराला करते हैं:

कौडे से कुछ हट कर
लोगों को साथ कुता खेतिहर का बैठा था
चलते सिपाही को देखकर खड़ा हुआ
और भौंकने लगा।

गांधीवादियों की जमींदारी सांठ–गांठ को भी निराला सिरे से नकारते है और कहते हैं :

देश की भक्ति से
निर्विरोध भाक्ति से
राज अपना होगा
जमींदार साहुकार अपने कहलायेंगे
शासन की सत्ता हिल जाएगी
हिन्दू और मुसलमान
वैर भाव–भूल कर जल्द गले लगेंगे।

इस प्रकार निराला स्पष्ट करते हैं कि गांधीवादियों की बगुलाभक्ति जनता खूब पहचानती है। उसमें सूक्ष्म वर्ग चेतना है क्योंकि सता की पकड़ बलि जमींदार इच्छानुसार कामगारों पर गोलियां दागते है।

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व कांग्रेस का जो स्वरूप और स्वभाव था उसमें बड़े लोगों के जो निहित स्वार्थ थे उनको तत्कालीन बहुसंख्यक जनता ने भले ही न समझा हो लेकिन हिन्दी के साहित्यकारों ने खूब समझा है। प्रेमचंद के उपन्यासों में भी पूंजीपतियों और भूपतियों से समझौता किये हुए नेताओं के चित्र है।

वर्ग संघर्ष के ऐसे अवसरों पर किसानों और खेतिहारों का साथ देने वाले कुत्ते और मेंढ़क है। शोषितों के लिए उनके हृदय में जो करुणा और सहानुभूति है, पूंजीवादी समाज व्यवस्था में स्वार्थ भावना से प्रेरित मानव ह्रदय में उसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. निराला का जन्म कब हुआ?
2. निराला की पत्नी का नाम बताओ?
3. निराला की मृत्यु कब हुई?

5.4 सारांश

अंततः कहा जा सकता है कि निराला ने अधिकांशतः अपनी रचनाओं में वर्ग संघर्ष की चेतना को निर्भीकता के साथ अभिव्यक्त किया है। अपनेसम में व्याप्त शोषण को उन्होंने एक सर्जक प्रगतिशील एवं सामाजिक चिंतक होने के नाते समाज से उखाड़ फैकने की भरङ्गस्क कोशिश की है। मात्र वे कलम तक ही सीमित नहीं थे। उन्होंने इस दिशा में व्यवहारिक प्रयोगशीलता को भी निभाया है।

5.5 कठिन शब्दावली

अशिष्ट– शिष्टता न होना। **डाल**– पौधा। **इतरा**– झुमना। **पोथियों**– पुस्तक। **झुले**– झुलना।

5.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. 1896।
2. मनोहरा देवी।
3. 1961

5.7 सन्दर्भित पुस्तक

1. रामविलास शर्मा– निराला की साहित्य साधना।

5.8 सात्रिक प्रश्न

1. निराला का जीवन परिचय लिखों।
2. निराला की काव्यगत विशेषता बताओं।

*****

इकाई–6
सूर्यकांत त्रिपाठी निरालाः व्याख्या भाग

संरचना

6.1 भूमिका
6.2 उद्देश्य
6.3 सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला : व्याख्या भाग
6.3.1 'वह तोडती पत्थर' कविता व्याख्या भाग
6.3.2 'विनय' कविता व्याख्या भाग
स्वयं आंकलन प्रश्न
6.4 सारांश
6.5 कठिन शब्दावली
6.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
6.7 सन्दर्भित पुस्तक
6.8 सात्रिक प्रश्न

6.1 भूमिका

तोड़ती पत्थर कविता 'निराला जी की प्रगतिचेतना का मूर्त रूप मानी जाती है। यह उनके काव्य संग्रह अनामिका में संकलित है।' इस कतिवा में गर्मियों की भरी दुपहर में पत्थर तोड़ने में तल्लीन युवती का संपूर्णता में चित्र प्रस्तुत किया गया है।

6.2 उद्देश्य

1. निराला के जीवन परिचय का बोध।
2. निराला की रचनाओं का ज्ञान।
3. निराला की रचनाओं में वर्णित विषय का ज्ञान।

6.3 सूर्यकांत त्रिपाठी निराला : व्याख्या भाग

6.3.1 'वह तोड़ती पत्थर' कविता व्याख्या भाग

वह तोड़ती पत्थर;
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर–
बह तोड़ती पत्थर।
कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;
श्याम तन, भर बंधा यौवन,
नत नयन प्रिय, कर्म–रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,

करती बार–बार प्रहार
सामने तरु–मालिका अट्टालिका, प्राकार।
चढ़ रही थी धूपः
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूपः
उठी झुलसाती हुई लू
रुई ज्यों जलती हुई भू,
गर्म चिनगीं छा गईं,
प्रायः हुई दुपहर
वह तोड़ती पत्थर।
देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार;
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोई नहीं,
सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो थी सुनी झंकार
एक क्षण के बाद वह कॉपी सुधर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा–
मैं तौड़ती पत्थर।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला' के द्वारा रचित कविता वह 'तोड़ती पत्थर' में से लिया गया है।

सन्दर्भ : प्रस्तुत कविता में कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने मध्यम वर्गीय परिवार की आर्थिक स्थिति का चित्रण किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि 'सूर्यकांत त्रिपाठी निराला' कहते है कि दिन की खरी दुपहरी में मैंने एक महिला को इलाहबाद के रास्ते में पत्थर तोड़ने का कार्य करते हुए देखा। वह बिना रूके कार्य कर रही थी अर्थात् मजदूरी कर रही हैं। वह मजदूरनी दिन की कड़कती धूप में सड़क के किनारे पर पत्थर तोड़ने का कार्य निरंतर कर रही थी। सड़के के किनारे कोई छायादार पेड़ नहीं था जिसकी छाया में बैठकर यह गर्मी को दूर कर लेती अर्थात् आराम करती। उस महिला का सांवला वर्ण का शरीर और पूर्ण जवानी में थी, उसकी आंखें झुकी हुई थीं और उसका मन अपने काम में लीन था। उसके हाथ में भारी हथौड़ा था जिससे वह पत्थर पर बार–बार चोट करती थी। उसके सामने पेड़ों की पंक्ति ऊंचे भवन तथा उनकी चारदीवारी थी।

कवि आगे कहता हैं कि दिन चढ़ रहा है और गर्मी के दिन थे। दोपहर की तेज धूप के कारण दिन का तापमान बढ़ गया था। तेज धूप के कारण शरीर को झुलसाती लू चलने लगी थी। कड़कती धूप में पृथ्वी ऐसे जल रही थी जैसे रूई जलती है। तेज धूप से वातावरण में धूल के कण छा गए है। धूल के कण के कारण ऐसा प्रतीत होता हैं मानों सम्पूर्ण वातावरण जलने लगा हो। कवि कहता है कि खरी दोपहरी में वह पत्थर तोड़ रही थी।

कवि कहता है कि वह नारी अपने कार्य में लीन थी तभी उसे वहां पर किसी के खड़े होने का आभास होता है और वह गंभीर नजर से क्षण भर के लिए मेरी तरफ देखती है और फिर अपनी दृष्टि सामने बने बड़े भवन की तरफ देखती है मानों उसकी नजर कह रही है कि उसने जीवनभर संघर्ष किया है। अर्थात् दुःख झेले है, परन्तु रोई नहीं अर्थात् अपने दुःख को किसी के सामने प्रकट नहीं किया है। कवि आगे कहता है कि उसने मुझे सहानुभूति की दृष्टि से देखा तो मैंने उसकी भावनाओं की वीणा से झंकृत होने वाली ऐसी ध्वनि सुनी जो मैंने आज तक कभी नहीं सुनी थी। अर्थात् उसके चेहरे पर ऐसे करुणापूर्ण भाव झलकने लगे, जो मैंने कभी नहीं देखे थे। यह क्षण भर देखने के पश्चात् उसका मन विचलित हुआ और उसके मांथे से पसीने की बूंदें टपकने लगी पुनः अपने काम में लीन हो गई मानों यह कह रही हो कि मैं तो पत्थर तोड़ने वाली है।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि 'सूर्यकांत त्रिपाठी निराला' ने 'सामने तरु मालिका अट्‌टालिका प्राकार' में पूंजीवादियों की सम्पन्नता का चित्रण किया है।
2. प्रस्तुत कविता में कवि ने मजदूर वर्ग की स्थिति का करुणामय चित्रण किया है।
3. प्रस्तुत कविता में कवि ने शोषित वर्ग से सहानुभूति का चित्रण किया है।
4. भाषा सरल, सहज तथा भावपूर्ण खड़ी बोली का प्रयोग।
5. 'हथौड़ा हाथ, 'बार–बार प्रहार', 'सजा सहज सितार' में अनुप्रास अलंकार है।
6. कविता में मुक्त छंद का प्रयोग।

6.3.2. 'विनय' कविता का व्याख्या भाग

❖ विनय कविता का सार

विनय कविता निराला जी द्वारा बादल को संबोधित करके लिखी गई है। इस लघु कविता में निराला जी के बादल को संबोधित करते हुए उसने निवेदन किया है कि वह उसके जीवन को अधिक उत्साह एवं उमंग से भर दे। उसके जीवन को आंनद से परिपूर्ण कर दे। उसके जीवन में सौंदर्य का निवास कर दे।

विनय

पथ में मेरा जीवन भर दो
बादल है अनंत अंबर के
बरस सतिल, गति उर्मिल कर दो
तट हो विटप छाँह के, निर्जन
सस्मित–कतिदत–चुम्बित–जलकण
शीतल–शीतल बहे समीण,
कूजें दुम–विहंगगण, वर दो
दूर ग्राम की कोई बामा,
आए मन्द चरण अभिरामा,
उतरे जल में अवसन श्यामा,
अंकित उर छवि सुन्दरतर हो।

प्रसंग : प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला' के द्वारा रचित 'कविता वह तोड़ती पत्थर' में से लिया गया है।

सन्दर्भ : प्रस्तुत कविता में कवि 'सूर्यकांत त्रिपाठी निराला' ने बादल को संबोधित कर अपने जीवन में उत्साह, उमंग, आनंद, स्वच्छता व सौंदर्य से भर देने की विनय किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि 'सूर्यकांत त्रिपाठी निराला' बादल को संबोधित करते हुए कहते हैं कि हे अनन्त आकाश में मंडराने वाले बादल! तुम तो जीवन अर्थात् जल के अक्षय भण्डार हो। तुम मेरे जीवन को भी और अधिक उत्साह और उमंग से भरकर नया जीवन प्रदान करो। तुम जल की बरखा करके मेरे जीवन की यात्रा को स्वच्छ कर दो। कहने का भाव यह है कि कवि स्वच्छ जीवन जीना चाहता है। कवि कहता है कि मेरे जीवन रूपी तालाब के तट पर वृक्षों की घनी छाया हो मुस्कुराते हुए। फूलों की कलियों की पंखुड़ियों का जल घूमता रहे अर्थात् जीवन में सुख की वर्षा हो। जीवन रूपी तालाब पर सुखों की सुरभित शीतल मन्द वायु निरन्तर बहती रहे। इसके किनारे लगे वृक्षों पर पक्षियों के झुण्ड निरन्तर मधुर गीत गाते रहे। हे बादल! मुझे यही वरदान दो। किसी दूर के गांव से कोई श्याम वर्ण की युवती आए और धीरे–धीरे कदम रखती हुई मेरे जीवन के तालाब में निस्संकोच उतर जाए निरवस्त्र होकर उतरे। मेरे हृदय में उसकी अत्यधिक सुन्दर छवि अंकित हो जाए। कहने का भाव यह है कि कवि सौन्दर्य का उपासक है इसलिए जीवन में सौंदर्य का निवास भी वरदान स्वरूप–मांगता है।

विशेष

1. कवि ने बादल से अपने जीवन में आनंद, उत्साह, उमंग एवं सौंदर्य भर देने का विनय किया है।
2. भाषा साहित्यिक खड़ी बोली है।
3. मानवीकरण अलंकार का प्रयोग।
4. कविता में मुक्त छंद का प्रयोग।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. 'तोड़ती पत्थर' कविता के रचयिता का नाम बताइए।
2. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का जन्म कब हुआ?
3. निराला जी का निधन कब हुआ?

6.4 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि 'तोड़ती पत्थर' कविता 'निराला जी की प्रगतिचेतना का मूर्त रूप मानी जाती है। पत्थर तोड़ती युवती शोषित वर्ग की प्रतीक है, तो शोषक वर्ग को प्रतीक रूप में भव्य भवन के रूप में दिखाया गया है। कविता में प्रगतिशील चेतना, मानवीय संवेदना, बिम्बात्मकता और सहजता की विशेषताएं हैं।

6.5 कठिन शब्दावली

श्यामतन – शरीर से सांवली। **नत–नयन**– आंखें नीची किए हुए। **कर्मरत**– मन काम में जीन मन। **तरु मालिका**– पेड़ों की पंक्ति। **अट्‌टालिका**– ऊंचे भवन। **प्राकार**– चारदीवारी। **छिन्न तार**– फटे–पुराने वस्त्र। **सीकर**– पसीने की बूंदें। **लीन**– तल्लीन। **अनन्त** – असीम। **अम्बर**– आकाश। **सलिल**– जल। **उर्मिल** – स्वच्छा। **विटप**–वृक्ष। **समीरण**– वासन्ती पवन। **कूजें**– चहचहाएं। **विहंगगण**– पक्षियों का समूह। **बर दो**– वरदान दो। **बामा**– स्त्री। **अभिरामा**– सुन्दर। **अवसन**– वस्त्र विहीन। **श्यामा**– श्याम रंग की नारी।

6.6 आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला।
2. सन् 1896।
3. सन् 1861।

6.7 संदर्भित पुस्तक

1. राम विलास शर्मा– निराला की साहित्यक साधना।

6.8 सात्रिक प्रश्न

1. 'तोड़ती पत्थर' कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।
2. 'विनय' कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।

*****

इकाई–7
बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का जीवन परिचय

संरचना

7.1 भूमिका

7.2 उद्देश्य

7.3 बालकृष्ण शर्मा नवीन का जीवन परिचय

स्वयं आंकलन प्रश्न

7.4 सारांश

7.5 कठिन शब्दावली

7.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

7.7 सन्दर्भित पुस्तक

7.8 सात्रिक प्रश्न

7.1 भूमिका

बालकृष्ण शर्मा नवीन हिन्दी साहित्य में श्रेष्ठ कवियों में से एक कवि है। उन्होंने अपने काव्य में समाज तथा लोगों को जागृत करने के विषय को प्रमुखता से लिया है।

7.2 उद्देश्य

1. नवीन के व्यक्तित्व की जानकारी।
2. नवीन की रचनाओं की जानकारी।
3. नवीन के काव्य की विशेषताओं का बोध।

7.3 बाल कृष्ण शर्मा नवीन का जीवन परिचय

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का जन्म विक्रमी संवत 1954 की माघ पूर्णिमा तदनुसार 8 दिसंबर 1897 को तत्कालीन मध्य भारत के शुजालपुर जिला के भयाना गांव में एक विपन्न ब्राह्मण परिवार में हुआ। उनके पिता श्री जमुनादास शर्मा बल्लभ मत के अनुयायी थे और नाथद्वारा के मंदिरों में पुरोहित करते थे। पुरोहिती पेशा यद्यपि संपन्नता का द्योतक था मगर जमुनादास और ही प्रकार के पंडित थे। इसलिए आर्थिक विपन्नता सदा बनी रही। यहां तक कि घर के लिए दैनिक वस्तुओं का भी काफी अभाव रहता था। घंटो चक्की पीस कर मां थोडे से पैसे जुटाती, तब जाकर कहीं बच्चे को दूध मयस्सर हो पाता।

शैशव पार कर जब बालकृष्ण बचपन की ओर बढ़े और उनकी उम्र 11 वर्ष की हो गई तब पिता को बेटे के पठन–पाठन और अध्ययन की फिक्र हुई। इस बा से यह अभिप्रायः नहीं था कि बालकृष्ण के पिता शिक्षा का महत्त्व नही जानते थे। अतः विलम्ब से ही सही वे बालकृष्ण को शिक्षा और अध्ययन के पथ पर ले जाने के लिए कृत संकल्प थे। इसी उद्देश्य से बालक को नाथद्वारा लाया गया। वहां विधिवत उनकी शिक्षा आरम्भ हुई और जननी की वत्सल छाया में विद्यालय जाने का सिलसिला शुरू हुआ।

अंग्रेजी मिडल तक की पढाई उनके अपने गृह जनपद के परगना स्कूल में ही हुई। मिडल के बाद आगे की पढाई के लिए उन्हें उज्जैन भेजा गया और उज्जैन के माधव कॉलज में प्रविष्ट होकर वे मैट्रिक की पढ़ाई करने लगे।

मिडल पास करे के पश्चात बालकृष्ण के आस–पास की घटनाओं ने प्रभाव डालना शुरू कर दिया। अभी पन्द्रह साल की कुल उम्र थी, किशोरावस्था भी अभी पूरी नहीं हो पायी थी कि उनका विवाह हो गया। उन दिनों विवाह के उपरांत, गौना होने तक नववधु को मायके में ही रखा जाता था। इस प्रकार बदु मायके रही और बालकृष्ण मैट्रिक की पढ़ाई के साथ–साथ माधव कॉलेज और उज्जैन के राष्ट्रीय–साहित्यिक वातावरण से बौद्धिक व रचनात्मक उर्जा प्राप्त करने में तल्लीन रहे।

इसी बीच नियति का कुल ऐसा चक्र घूमा कि उनकी नवविवाहिता पत्नी गौने से पूर्व ही प्लेग की चपेट में आकर स्वर्ग सिधार गई। इस घटना के साथ–साथ उज्जैन के हलचल युक्त वातावरण ने बालकृष्ण के जीवन में एक नवीन मोड़ ला दिया।

शर्मा माधव कालेज, उज्जैन के अपने अध्ययन काल में ही युगीन साहित्यिक वातावरण और राष्ट्रीय आन्दोलन की हलचलों में प्रर्याप्त दिलचस्पी लेने लगे थे और उस सबका उनके युवोचित मानस पर। एक अ–प्रकट प्रभाव भी दर्ज हो रहा था। कानपुर से गणेश शंकर विद्यार्थी के संपादन में निकलने वाले राष्ट्रीय पत्र 'प्रताप' और खंडवा से कालूराम गंगराडे के संपादन में प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'प्रभा' वहां उन्हें सुलभ थी। बालकृष्ण उनका नियमित अध्ययन करते थे। एक दिन 'प्रताप' के एक अंक में उन्होंने लोकमान्य तिलक के व्याख्यान का एक अंश प्रकाशित देखा। उनमें उन्होंने सर्वसाधारण से अधिक से अधिक संख्या में लखनऊ कांग्रेस में पहुंचने का आह्वान किया था लोकमान्य की अपील ने बालकृष्ण के अशांत युवामन पर इसका सीधा असर हुआ। उन्होंने इसमें शामिल होने का पक्का इरादा कर लिया। यह सन् 1916 के अंतिम महीने, दिसंबर की बात है। मैट्रिक की परीक्षाओं में अभी कुछ ही महीने की देर थी।

बालकृष्ण इसी पक्के इरादे के साथ ठिठुरती ठंड में लखनऊ की यात्रा पर चल पड़े। उनके पास महज एक कंवल एवं एक डंडा था। यहां तक कि इस ठिठुरती ठंड में पांव में कोई जूता या चप्पल नहीं थी। उस समय बालकृष्ण के मन में यह कल्पना तक नहीं थी कि यह यात्रा उनके जीवन का अंतिम मोड हो सकती है। इसे संयोग ही कहा जा सकता है कि बालकृष्ण की उस लम्बी यात्रा के दौरान आकस्मिक रूप से उन्हें श्री माखन लाल चतुर्वेदी एक भारतीय आत्मा का सानिध्य मिल गया। जी न सिर्फ उस यात्रा वल्कि जीवन के अगले महत्त्वपूर्ण निर्णयों की दृष्टि से अत्यंत उपयोगी और मूल्यवान सिद्ध हुआ। यद्यपि –'प्रभा' के माध्यम से वे चतुर्वेदी को सामान्य स्प से तो जानते थे लेकिन एक भारतीय आत्मा के रूप में उन्हें जानने का पता लखनऊ जा कर ही चला। वे यहीं इनके सानिध्य में रहे वरना इतनी ठिठुरन भरी राते ये कैसे गुजार सकते थे। इतना ही नहीं चतुर्वेदी के माध्यम से ही वे मैथिली शरण गुप्त से भी मिले और तदनंतर अपने भावी जीवन के कर्णाधार गणेश शंकर विद्यार्थी के स्नेह संपर्क में आए। गणेश शंकर की सदाशयता से कांग्रेस अधिवेशन में विधिवत भाग ले सकने का प्रवेश टिकट भी उन्हे मुक्त सुलभ हो सका जबकि दास रूपये वाला टिकट पचास रूपये में भी आकाश कुसुम बना हुआ था।

लोकमान्य के प्रति आकर्षण का भाव इसी बात से स्पष्ट था कि वे भयंकर आर्थिक अभाव के होते हुए भी लखनऊ पहुंचे। इस आकर्षण की दूसरी वानगी तब मिली जब जुलूस में तिलक की गाड़ी को श्रद्धालु देशभक्तों द्वारा खीचा जाता देखकर वे स्वयं उसमें जुत गए। इस समय बालकृष्ण कहां जानते थे कि इस शोभा यात्रा में ऐसा भी देशभक्त जुटा है जिसे अगले ही दशक में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध एक रोमांचक अध्याय को नेतृत्व कर फांसी का फंदा चुमना है और राष्ट्रीय मुक्ति के इतिहास में अमर शहीद पर पाना है। वे दूसरे व्यक्ति थे काकोरी कांड से जुड़े क्रांतिकारी प्रकरण के प्रकल्प और सरफरोशी की तमन्ना वाले राम प्रसाद विस्मिल।

लखनऊ से लौटते समय बालकृष्ण ने गणेश शंकर विद्यार्थी से काफी बातें की उस चर्चा का मुख्य विषय था मनुष्य की कर्मशीलता और उसकी संचालक वृतियां। जिज्ञासा और चिंतन के जो बीज जो उनके आंतरिक व्यक्तित्व में पहले ही विद्यमान थे वे यहां आकर प्रस्फुटित होते दिखाई दिए। गणेश शंकर के लिए यह पहुंचानते

देर न लगी कि यह व्यग्र मन वाला युवक कभी न कभी अपनी अभिव्यक्ति का मार्ग ढूंढ ही लेगा। वापस लौट कर वे पुनः मैट्रिक की पढ़ाई में व्यस्त हो गए और उन्होंने वह परीक्षा भी पास कर ली। अब वे जीवन के चौराहे पर खड़े थे लेकिन उन्होंने जीवन का मार्ग तत्क्षण हो ढूंढ लिया और अपने माता–पिता से यह कह कर कि वह अगली पढाई के लिए ग्वालियर जा रहा है लेकिन वे सीधे टिकट लेकर कानपुर पहुंच गए। यहों से उन्होंने अपने जीवन के आगामी पड़ावों की शुरूआत की।

विद्यार्थी जी ने पहला काम बालकृष्ण शर्मा की ट्यूशन के प्रबंध का किया जिससे होने वाली आय से वह इंटर को अगली पढ़ाई जारी रख सके। बीस रूपए की आमदनी भर के ट्यूशनों की व्यवस्था हो जाने के बाद उन्होंने उन्हे कानपुर क्राइस्ट चर्च कॉलेज में इंटर में दाखिला दिला दिया इस प्रकार बालकृष्ण की शिक्षा की गाड़ी पुनः पटरी पर आ गई।

अब उनका अंतर्मानस आत्माभिव्यक्ति के उपयुक्त माध्यम के अन्वेषण की दिशा में प्रयत्नशील हो उठा।

अपने बाल्यकालीन मित्र की दिवंगत स्मृति से जुड़ कर एक कानी के रूप में उन्होंने अपनी प्रथम रचना 'कलमबंद' की थी और 'संतू' शीर्षक देकर उसे 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशन के लिए भेज दिया। इस रचना के साथ उन्होंने अप नाम बालकृष्ण शर्मा नवीन दिया। यह 'नवीन' उप बाद में हिन्दी साहित्य के आकाश में सूर्य बन कर चमका। उनकी यह पहली रचना सरस्वती पत्रिका में जनवरी 1918 में ससम्मान छपी। इसी दौर में उन्होंने दो तीन और कहानियां लिख डाली। इंटर की पढ़ाई के दौरान ही उनका रूझान कविता लेखन की ओर था।

उनकी प्रथम् कविता मुरादाबाद से प्रकाशित होने वाली पत्रिका प्रतिमा के मुख पृष्ठ पर छपी। कवि रूप में नवीन का प्रथम परिचय हिन्दी जगत को इसी रचना के माध्यम् से मिला। बाद में कहानी लेखन का सिलसिला तो गया कितु कविता के क्षेत्र में नये से नये क्षितिज उन के लिए उद्घाटित होने लगे। इस दिशा में 'प्रभा' पत्रिका की काफी भूमिका रही।

सन् 1921 में जब नवीन वी.ए. अंतिम वर्ष के छात्र में उसी समय महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन का नया नारा दिया और युवाओं को अपना अध्ययन स्थगित करने का अह्वान किया। नवीन और उनके साथी उमाशंकर दीक्षित, द्वारिकाप्रसाद मिश्र पर गांधी का सीधा असर हुआ। ये सब पढ़ाई छोड़ कर व्यवहारिक राजनीति के क्षेत्र में आ गए। जल्दी ही सत्याग्रह ने उग्र रूप धारण कर लिया इलाहावाद स्थित कांग्रेस कार्यालय आनंद भवन से जब पचपन सत्याग्रहियों का जो पहला जत्था गिरफ्तार किया गया उसमें तत्कालीन चोटी के कांग्रेसी नेताओं के साथ वालकृष्ण शर्मा नवीन भी थे। यहीं से शुरू हो गया, नवीन जी की यात्राओं का सिलसिला चला और अंत अर्थात् सन् 1942 के ऐतिहासिक भारत छोड़ों आन्दोलन तक चलता रहा। इस प्रकार कुल छह जेल यात्राओं में जिन्दगी के नौ साल 'नवीन' जी ने जले की चारदिवारी के पीछे गुजारे।

अपनी महत्त्वकांक्षी छ' सर्गों वाली कृति जो महाकाव्य स्वरूप में थी उसका प्रणयन भी जेल यात्राओं के दौरान हुआ। उर्मिला के अलावा उनकी अन्य अधिकांश रचनाओं का प्रणयन करागार के शन्य कक्ष में हुआ। जेल से बाहर 'नवीन' जी कुछ विशेष नहीं लिख पाए। जो भी लिखा वो विशेषतः 'प्रताप' और 'पत्रकारिता' की अवश्यकताओ से प्रेरित गद्य था। 'शिमला समझौते में निराशा का अवतरण' 'मुसलमान' 'भाईयों की खिदमत में, तुम्हारे उपवास की चिन्ता' एक ही थैली के चट्टे–बट्टे आदि शीर्षकों में जो असंख्य अग्रलेख और निबंध जेल से बाहर के अपने जीवन में नवीन ने लिखे वे 'प्रता' और 'प्रभा' के प्रकाशित होकर सतत चर्चाओं के केन्द्र में रहे। इससे नवीन के अन्दर न केवल एक कवि बल्कि एक गद्यकार या पत्रकार के चेहरा भी मिलता है। इसीलिए गणेश शंकर जी के वलिदान के पश्चात ये अगले 10–12 वर्षों तक 'प्रताप' के एकछत्र संपादक एवं संरक्षक रहे।

❖ रचनाएं

हमेशा उनकी रचना के प्रकाशन एवं प्रणयन में काफी अंतर रहा है अपने वाल्यकाल की उद्‌भावनाओं को उन्होंने 'कुंकुम' कविता संग्रह में संग्रहित किया जिसका प्रकाशन काफी देरी से सन् 1939 में जा कर हुआ जबकि उनका रचना समय 1930 के आप–पास का है। लंबे अंतराल के पश्चात 1951 में 'रश्मिरेखा' और सन् 1953 में 'अपलक' तथा 'क्वासि' संग्रह प्रकाशित हुए। 1955 में 'विनोवा स्तवन' और 1957 में अत्यंत विलंबित कृति 'उर्मिला' सामने आई। गणेश शंकर विद्यार्थी के बलिदान पर केन्द्रित खंड काव्य 'प्राणार्पण' तो नवीन के जीवन काल में प्रकाशन का मुंह तक नहीं देखा सका। ऐसा ही हाल उनकी अन्य स्फुट रचनाओं का भी रहा।

इसके अलावा वे स्वतंत्र भारत की सविधान सभा के सदस्य भी रहे। सन् 1951 के प्रथम् जनचुनावों में वे कानपुर से लोकसभा के लिए निर्वाचित हुए। सन् 1955 में संसद द्वारा नियोजित भाषा आयोग के सदस्य रहे। सन् 1957 में रात्य सभा के लिए उत्तर प्रदेश से निर्वाचित होकर आए तथा सन् 1960 में दुबारा राज्य सभा के सदस्य बने। अनेक मित्रों के विरोध करने पर भी इन्होंने 51 वर्ष के आयु में जाति, प्रांत और आयु के बंधन को तोड़ कर दूसरी शादी की।

नवीन के अंतिम दिन अति कष्टमय रहे तन का रोग और मन का क्लेश दोनों असहनीय ने मिलकर नवीन को निरीह बना दिया। सन् 1955 से लेकर मृत्यु पर्यन्त वे बीमार ही रहे। दीर्घ काल तक उसहनीय वेदना और कष्ट सहने के पश्चात अंततः इस महामानव ने 29 अप्रैल सन् 1960 के तीसरे पहर अंतिम सांस ली।

❖ विशेषताएं

● बालकृष्ण शर्मा नवीन की राष्ट्रीयता

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जी एक कवि बाद में लेकिन एक राष्ट्रभक्त स्वतंत्रता सेनानी पहले थे। उनके लेखन का आरम्भ ही जेल यात्राओं के दौरान हुआ था। राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के कारण तथा अपने गद्य के कारण नवीन जी राष्ट्रीय एवं प्रगतिवादी कवि के रूप प्रख्यात रहे। उनकी कुछ राष्ट्रीय एवं प्रगतिशील रचनाएं अत्यन्त प्रसिद्ध हो गई थी। उस समय भारत–भारती के पद्यों की तरह ही नवीन की ओजपूर्ण कविताएं भी जनता के मन को आन्दोलित करती रहती थीं। कई बार उनकी एक पंक्ति भी जना को आत्मबलिदान के लिए प्रेरित कर देती थी। यथा

चढ़ चल चढ़ चल, रुक मत रे तू बलिदानों के पुंज,
देख कहीं न लुभावे तुझको, यह जीवन का कुंज
मधुर मृत्यु का नृत्य देख के देने लग जाता ताल,
अपना शीश पिरोपकर कर दे पूरी मां की माल
हे जीवन अनित्य, कट लेने दे तू मोहक बंध
कर दे पूरा आत्म निवेदन का आज तू प्रबंध।

राष्ट्र धर्म एवं राजनीति की एकता का नहीं, भावनाओं एवं संस्कारों की एकात का प्रतीक होता है। सांस्कृतिक एकता राष्ट्र का मूल तत्व है। संस्कृति के प्रति उच्चतम भक्तिभाव ही राष्ट्रीयता का आधार है। अलबत्ता यह अनेक रूपों में प्रकट होता है। अपने भूत के प्रति पूर्ण श्रद्धा, भविष्य के प्रति अदम्य आस्था, देश की उन्नति के प्रति पूर्ण व्याकुलता, आततायियों से देश की रक्षा करने की आतुरता, देश की भीतरी–बाहरी शत्रुओं को ललकारने का साहस, देशभक्तों का यशगान तथा उसे हर प्रकार से समृद्ध देखने की लालसा उनके काव्य में सर्वत्र विद्यमान है।

उनकी कविताएं राष्ट्रीय आन्दोलन का काव्यमय इतिहास प्रस्तुत करती है। 'नवीन' की राष्ट्रीयता बौद्धिक न होकर आंतरिक एवं भावात्मक है और तभी उसमें प्राण फुंकने का सामर्थ्य है। देश को परातंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा देखकर वे उत्तेजित होकर हूक कर उठते है। उनके सहज कोमल प्राण विप्लव और विद्रोह गा उठते हैं:

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल–पुथल मच जाए,
एक हिलोर इधर से आए, एक हिलोर उधर से आए,
प्राणों के लाले पड़–त्राहि–त्राहि रव नम से छाये,
नाश और सत्यानाशों का धुंआधर जग में छा जाए
बरसे आग, जलद जल जाए, मस्मसात मूधर हो जाए
पाप–पुण्य सद असद भावों की धूल उड़ उठे दायं बाये
नभ का वक्षस्थल फट जाए, तारकहन्द विचल हो जाये
कवि कुछ ऐसी तान सुनाओं जिससे उथल–पुथल मच जाए।

परातंत्रता की स्थिति में सच्चे देश सेवक का सर्वप्रथम् कत्तव्य यह हो जाता है कि सब कुछ दांव लगाकर देश को परतन्त्रता के पाश से मुक्त करने का प्रयत्न करे। नवीन को अपने देश के स्वातन्त्रय सैनिकों पर पूर्ण विश्वास था, उन्हें मालूम था कि वे कभी पीछे नहीं हट सकते। जब कभी भी कांग्रेस पीछे हटी 'नवीन' जी को काफी दुःख हुआ।

गांधी ने चौरीचौरा के बाद जब सत्याग्रह बंद का दिया तो वे कितने दुःखी और उद्विग्न हुए थे उन्होंने इसमें कितने ही अपमान और लज्जा का अनुभव किया था। यह उनकी कविताओं से प्रकट होता है। उन्होंने 'पराजय गीत' में लिखाः

घूम गया जो चक्र उसी की ओर देखता जाता हूँ,
इधर–उधर सब तरफ पराजय की ही मुद्रा पाता हूँ
आंखों का ज्वलंत क्रोधानल आज दैन्य का नीर हुआ
आज खडग की धार कुष्ठिता है, खाली तूणीर हुआ।

नवीन के अनुसार अंधकारमय भूतकाल को भुला देने और उज्जवल भविष्य की रट लगाने की अपेक्षा हमें पूरा ध्यान वर्तमान पर केन्द्रित करना चाहिए अर्थात् नवीन जी केवल अंग्रेजी शासन की कुत्सित नीतियों पर ही नहीं अपितु भारत की मूढ़ परम्पराओं और उनकी वर्गगत आर्थिक व्यवस्था पर भी प्रहार करने से नहीं चुकते थे।

विफलता के मूल में वे सामाजिक वैषम्य, पारस्परिक वैमनस्य एवं अराष्ट्रवादी भावनाओं को देखते है। रूढि और रीतियों में फंसी भारतीय जनता का दैन्य दारिद्रय देखकर उनकी आंखे सजल हो जाती थी। शोषण अत्याचार विषमता एवं अत्याचार क नग्न नृत्य देखकर आस्तिक 'नवीन' ईश्वर के अस्तित्व तक में संदेह करने लगते है और मानव को अपने पैरों पर खड़े होने की प्रेरणा देते है :

लपक चाटते झूठे पत्ते जिस दिन देखा मैंने नर को,
उस दिन सोचा क्यों न लगा दे, आज आग इस दुनिया भर को,
यह भी सोचा, क्यों न टेंटुआ घोंटा जाए स्वयं जगपति का,
जिसने अपने ही स्वरूप को स्वरूप दिया इस घृणित विकृति का,

मानव ही मानव का शोषण करे, मानव ही मानव का काल बने इससे बड़ी बिडम्बना और क्या हो सकती है। नवीन इस अधर्म को मिटा कर मानवता का मस्तक ऊंचा करने की प्रेरणा देते हैंः

हे मानव! कब तक मेटोगे, यह निर्मम महा भयंकरता,
बन रहा आज मानव देखो, मानव का ही भक्षणकर्त्ता,
है दुनिया बहुत पुरानी यह, रच डालो दुनिया एक नई,
जिसमें सर ऊंचा कर विचरें दुनिया में बेताज कई।"

इसे नवीन का प्रगतिवाद में कह सकते हैं किन्तु यह वास्तव में उनकी राष्ट्रीयता का ही एक रूप है। नवीन जी की राष्ट्रीयता एवं प्रगतिशीलता उत्तरोत्तर परिष्कृत होती हुई अंत में विश्व मानवता में परिणत हो जाती है। यों समय पर वे विभिन्न वादों से प्रभावित भी रहे है। यों समय पर वे विभिन्न वादों से प्रभावित भी रहे है। लेकिन वे किसी 'वाद' में नहीं फंसे।

उन्होंने लिखा, "मानव मानव है, वह केवल सामन्तवाद, पूंजीवाद वर्गवाद, भौतिकवाद आदि का मुरब्बा मात्र नहीं है।" उस समय के अत्यंत, प्रतिष्ठित निर्मम नैतिकता के कठघरे में बन्द होकर रहना "नवीन" जैसे सरस भावुक, वेलाग और बहादुर आदमी के बस की बात नही। उनकी स्वच्छंद किन्तु कल्याणकारी मति के छूटे—छपाटे में जहां देखिए वहां विधि निषेध और परम्पराओं के दुर्ग ढहते नजर आते हैं :

'कूजे दो कूजे में बुझने वाली मेरी प्यास नही,
बार—बार ला ला कहने का समय नहीं अभ्यास नहीं
अरे! वहा दे अविरल धारा, बूंद—बूदं का कौन सहारा,
मन भर जाए, जिया उतराए, डूबे जग सारा का सारा।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बाल कृष्ण शर्मा 'नवीन' ने अपने जीवन के व्यवहारिक पक्षों के अनुभव को एक देशभक्त, एवं स्वतंत्रता सेनानी होने के नाते क्रांतिकारी अह्वानों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैं उनका जीवन और काव्य का एकमात्र लक्ष्य या भाव देश की विषम और परातंत्र परिस्थितियों की जकड़नों को समाप्त करना था। अंततः वे मानव को एक इंसान के रूप में देखने के पक्षपाती थे। मानव द्वारा मानव का शोषण उन्हे किसी भी रूप में स्वीकार्य नहीं था। इसी लिए क्रांतिकारी भावों की भूमि पर रचित उनका काव्य अंत में मानवता की मावभूमि पर जा कर समाप्त होता है।

❖ विप्लव गायन कविता का भाव पक्ष

विप्लव गायन बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की एक थे। वे मात्र कलम से ही स्वतंत्रता की लड़ाई नहीं लड़ रहे थे। अपने जवीन का आरम्भ ही उन्होंने अपने आप को स्वतंत्रता आन्दोलन की आहूति में डाल कर किया था। वे कई बार जेलों में गए। भारतीय समाज आंतरिक विगलन को देखा। विदेशी हकूमतों के अत्याचारों को सहा और उनके दमन चक्र में पिसती साधारण जनता को देखा। विदेशी हुकूमतों के देशी चमचों ने अपने ही देश की जनता को पूरी तरह से निचोड़ दिया था। एक सचेत देशभक्त कवि नवीन के लिए यह स्थिति असहय थी। वे पूर्णतः अनुभव करते हैं कि अब इस देश में सुधार का कोई रास्ता ही नहीं बचा है। भारतीय समाज चारों ओर से ह्रसोन्मुख हो चुका है। ऐसी स्थिति में वे अपनी ओजस्वी वाणी से इस विगलति समाज के नष्ट ही हो जाने का भाव व्यक्त करते हैं।

कवि नवीन इस प्रकार के समाज के विध्वंस के लिए एक सर्जक या कवि का अह्वान करते है। वे कवि से कहते है कि इस तरह से कुछ लिखो या गाओ कि चारों तरफ भयंकर उथल—पुथल मच जाए। जीर्ण—शीर्ण सब तबाह हो जाए क्योंकि इस संसार में अब सुधार की कोई गुंजायश ही नहीं रह गई है। इसीलिए अब इसका पूर्ण रूप से ध्वस्त हो जाना ही उचित है। इन्हीं भावों को कवि अपनी सुप्रसिद्ध पंक्तियों में कहते हैं :

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल—पुथल मच जाए,
एक हिलोर इधर से आए, एक हिलो उधर से आए,
प्राणों के लाले पड़ जाए,
त्राहि—त्राहि रव नम मे छाए,
नाश और सत्यनाशो का
धुआंधार जग में छा जाए।

इस प्रकार कवि इस विध्वंस के स्वरूप को भी स्पष्ट करते हैं कि कवि के द्वारा ऐसा क्रांतिकारी लेखन करने से इस तरह का विध्वंस हो तक हरेक प्राणों को अपने–जीवन को संभालना अति मुश्किल हो जाए। चारो तरफ सिर्फ विनाश ही विनाश की ज्वाला और उससे उठता हुआ छुआं दिखाई पड़े।

इतना ही नही इस आकाश से बादल पानी की जगह आग की वर्षा करे ताकि यह धरती जल कर राख हो जाए। कवि इस धरती के दूषित एवं अनुपयोगी हो चुके वातावरण को पूर्णतः जलाकर राख कर देना चाहता है। ताकि क्रांति के बाद फिर से एक नवजीवन स्वच्छ रूप से विकसित किया जा सके।

नवीन के ये विचार तत्कालीन भारतीय जन समाज के स्वरूप को देखकर स्वभाविक ही थे क्योंकि तत्कालीन भारतीय समाज में भयंकर आडम्बर एवं रूढ़ियां पनप चुकी थी। अंधविश्वासों एवं राजाओ, सामंतों ने अपनी एय्याशी के लिए पूरे समाज को अपनी गिरफ्त में ले लिया था। एक तरह से जनता अवचेतन या जड़ स्थिति में पहुंच गई थी। उनके विचारों में इतनी शक्ति नहीं रह गई थी कि वह इन सामंतों, राजाओं अंधविश्वासों कुरीतियों के साथ–साथ विदेशी हुकूमत का विरोध कर सके। इसीलिए नवीन को एक रचनाशील एवं संवेदनशील कवि पर ही भरोसा हो जो इस समाज की इस मूढ़ता का नाश कर उनमें चेतना भर सकता है। यथाः

एक ओर कायरता कांपे
गतानुगाति विगलित हो जाए
अन्धे मूढ़ विचारों की वह
अचल शिला विचलित हो जाए।

इस प्रकार कवि नवीन के लिए उस समय के समाज के लिए महाविनाश से कम कुछ भी स्वीकार्य नहीं है। उन्हें पूरा विश्वास भी है कि उनका महाविनाश का यह सपना अवश्य पूरा होगा जहां कंण–कंण में सिर्फ विनाश की ही ज्वाला धधक रही होगी। यहां जीवन दायनी मां से दूध की जगह जहर निकल रहा होगा। अर्थात् भाव यह है कि पूरा वातावरण ही विषाक्त है तो मां उस विषाक्त वातावरण में दूध कहां से पिलाएगी। नवीन का मानना है कि जब ऐसी स्थिति होगी तो संसार क्रांतिकारियों के प्रहार को नहीं सहन कर पाएगा। जिन शक्तियों ने एकछत्र साम्राज्य स्थापित किये हैं वे टूट कर टुकड़े टुकड़े हो जाएगी। यथाः

विश्वमूर्ति। हट जाओ!! मेरा
भीम प्रहार सहे न सहेगा
टुकड़े–टुकड़े हो जाओगी
नाममात्र अवशेष रहेगा।

इस प्रकार भारतीय पराधीन समाज में एक भयंकर क्रांति की लहर जगाना इस कविता का मुख्य भाव है। क्योंकि जहां शिव की सुन्दरता की कोई आशा नहीं होती वहां तांडव या प्रलय ही एक उपाय बचता है। वास्तव में नवीन ओज के कवि रहे है।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. नवीन का जन्म कब हुआ?
2. नवीन का पूरा नाम क्या है?
3. नवीन की किसी एक रचना का नाम लिखों।

7.4 सारांश

वे समझौता वादी नहीं लिखते थे। वे इस संसार अर्थात् भारत देश की स्वतंत्रता के लिए इन्कलाब के हिमायती थें वे विदेशी ताकतों व स्वदेशी कुत्साओं एवं रूढ़ियों को पूर्णतः उखाड़ फेंकने के पक्षपाती रहे हैं ताकि ऐसी चीजें पुनः पनप ही न सके। इस कविता ने कवि ने अति सुन्दर भावानुरूप ओजपूर्ण वाणी का प्रयोग किया है। उत्तम शब्दवली ने काव्य भाव को और पुष्ट किया है। तुकात्मकता के प्रयोग से इसमें गीतात्मकता का गुण आ गया है। उत्साह व ऊर्जावान कविता के रूप में विप्लब गायन एक अद्वितीय कविता है।

7.5 कठिन शब्दावली

चढ़–चढ़ना। **बलिदान**– आत्मसर्म्पण। **पुंज**–थोड़ी सी रोशनी। **मोहक**– महक या सुगंध।

7.6 स्वयं आकलन प्रश्नों का उत्तर

1. 1897।
2. बालकृष्ण शर्मा नवीन।
3. कुंकुम।

7.7 सन्दर्भित पुस्तक

1. सिद्धेश्वर प्रसाद– छायावादोत्तर काव्य।

7.8 सात्रिक प्रश्न

1. बालकृष्ण शर्मा नवीन का जीवन परिचय लिखिए।
2. नवीन की साहित्यिक विशेषता बताओं।

*****

इकाई–8
बालकृष्ण शर्मा नवीन : व्याख्या भाग

संरचना

8.1 भूमिका

8.2 उद्देश्य

8.3 बालकृष्ण शर्मा नवीन : व्याख्या भाग

स्वयं आंकलन प्रश्न

8.4 सारांश

8.5 कठिन शब्दावली

8.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

8.7 सन्दर्भित पुस्तक

8.8 सात्रिक प्रश्न

8.1 भूमिका

बालकृष्ण शर्मा नवीन राष्ट्रवादी काव्य धरा के कवि है। उन्होंने अपने काव्य में राष्ट्र चेतना तथा सामाजिक जागरण से सम्बन्धित काव्य का सृजन किया है। उन्होंने अपने कविता विप्लव गायन में कवि के कर्तव्य का चित्रण किया है।

8.2 उद्देश्य

1. बालकृष्ण शर्मा नवीन के जीवन परिचय का बोध।
2. बालकृष्ण शर्मा नवीन की रचनाओं का ज्ञान।
3. बालकृष्ण शर्मा नवीन की रचनाओं में वर्णित विषय का ज्ञान।

8.3 बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' व्याख्या भाग

विप्लव गायन

1. **कवि कुछ ऐसी तान सुनाओं जिससे उथल–पुथल मच जाए।**
एक हिलोर इधर से आए, एक हिलोर उधर से आए,
प्राणों के लाले पड़ जाएं, त्राहि–त्राहि स्वर नभ में छाए;
नाश और सत्यानाशों का धुआंधार जग में छा जाए,
बरसे आग, जलद जल जाएं, भस्मसात् भूधर हो जाएं;
पाप पुण्य सदसद् भावों की धूल उड़ उठे दाएं–बांए,
नभी का वक्षस्थल फल जाए, तारे टूक–टूक हो जाएं;
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओं, जिसे उथल पुथल मच जाए।

2. माता की छाती का अमृतमय पय कालकूट हो जाए,
आंखों का पानी सूखें, हां वह खून की घूंट हो जाए,
एक ओर कायरता कांपे, गतानुगति विगलित हो जाए,
अंधे मूढ़ विचारों की वह अचल शिला विचलित हो जाए;
और दूसरी ओर कंपा देने वाला गर्जन उठ धाए;
अंतरिक्ष में एक उसी नाशक तर्जन की ध्वनि मंडराए,
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओं, जिससे उथल–पुथल मच जाए।

3. नियम और उपनियमों के ये बंधन टूट–टूक हो जाएं,
विश्वभर की पोषण वीणा के सब तार मूक हो जाएं,
शांति–दंड टूटे, उस महा रुद्र का सिंहासन थर्राए,
उसकी पोषक श्वासोच्छवास, विश्व के प्रांगण में घहराए;
नाश! नाश! हां, महानाश!! की प्रललयकारी आंख खुल लाए,
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओं, जिससे उथल–पुथल मच जाए।

4. ''सावधान! मेरी वीणा में चिनगारियां आन बैठी हैं,
टूटी हैं मिज़राबें, युगलांगुलियां ये मेरी ऐंठी हैं:
कंठ रूका जाता है महानाश का गीत रुद्ध होता है,
आग लगेगी क्षण में, हृत्तल में अब क्षुब्ध युद्ध होता है;
झाड़ और झंखाड़ व्याप्त हैं इस ज्वलंत गायन के स्वर से,
रुद्ध गीत की क्षुब्ध तान निकली है मेरे अंतरतर से!

5. ''कण–कण में है व्याप्त वहीं स्वर, रोम–रोम गाता है वह ध्वनि,
वही तीन गाती रहती है कालकूट फणि की चिंतामणि;
जीवन–ज्योति लुप्त है अहा! सुप्त हैं संरक्षण की घड़ियां,
लटक रही हैं प्रतिफल में इस नाशक संभक्षण की लड़ियां;
चकनाचूर करो जग को, गूंजे ब्रह्मांड नाश के स्वर से,
रुद्ध गीत की क्रुद्ध तान निकली है मेरे अंतरतर से!

6. दिल को मसल–मसल मेंहदी रचवा आया हूं मैं यह देखो–
एक–एक अंगुलि–परिचालन में नाशक तांडव को पेखो।
विश्वमूर्ति! हट जाओ, यह वीभत्स प्रहार सहे न सहेगा,
टुकड़े–टुकड़े हो जाओगी, नाश मात्र अवशेष रहेगा;

आज देख आया हूं जीवन के सब राज समझ आया हूं,
भू–विलास में महानाश के पोषक सूत्र परख आया हूं;
जीवनगीत भुला दो, कंठ मिला दो मृत्युगीत के स्वर से,
रुद्ध गीत की क्रुद्ध तान निकली हैं मेरे अंतरतर से।

7. **''जीवर में जंजीर पड़ी खन–खन करती है मोहक स्वर से–**
'बरसों की साथिन हूं–तोड़ोगे क्या तुम अपने इस कर से?'
अंदर आग छिपी है, इसे भड़क उठने दो एक बार अब,
ज्वालामुखी शांत है, इसे कड़क उठने दो एक बार अब;
दहल जाए दिल, पैर लड़खाड़ाएं, कंप जाय कलेजा उनका,
सिर चक्कर खाने लग जाए, टूटे बंधन शासन–गुण का;
नाश स्वयं कह उठे कड़ककर उस गंभीर कर्कश से स्वर से–
'रुद्ध गीत की क्रुद्ध तान निकली है मेरे अंतरतर से!''

प्रसंग : प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला' के द्वारा रचित 'कविता 'तोड़ती पत्थर' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत कविता में कवि ने अपने भीतर के कवि से कहते हैं कि हे कवि कुछ ऐसी कविता का सृजन करों जिससे चारों तरफ प्रलय हो जाए।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि ने अपने अंदर के कवि को संबोधित करते हुए कहता है– हे कवि! तुम कुछ ऐसी तान सुनाओं, अर्थात् ऐसे गीत की रचना करों जिससे पूरे विश्व में भयकर उथल–पुथल मच जाए। विनाशक लहरें चारों दिशाओं में फैले और सर्वनाश हो जाए। कवि कहता है कि विनाशक गीत की ध्वनि इतनी तेज हो की प्रत्येक प्राणी को अपने प्राणों को बचाने के लिए इधर–उधर भागेगे। अपने प्राण को सुरक्षित करने के लिए बचाओं! बचाओं की आवाज सम्पूर्ण आकाश में गूंज उठे। सारे संसार में नाश और सर्वनाश धुआ छा जाए। कवि अपने अंदर के कवि से कहता है कि तुम ऐसा गीत सुनओं जिससे की आकाश से आग बरसने लगे और जल बरसाने वाले बादल भी उस आग से जल उठें। विशालकाय पहाड़ अर्थात् भूमि को धारण करने वाले हिमालय भी जलकर राख हो जाएं। पाप–पुण्य, अच्छे–बुरे विचार एक साथ सर्वनाश की आग में जलकर नष्ट हो जाए। पाप–पुण्य और अच्छे–बुरे विचारों की धूल चारों दिशाओं में बिखर जाए अर्थात् छा जाए। कवि कहता है। हे कवि! ऐसी तान सुनाओं जिससे आकाश की छाती अर्थात् ह्रदय फट जाए और आकाश के तारे टूट कर गिरने लगे। है कवि! कुछ ऐसी तान भरों जिसे सुनकर चारों और उथल–पुथल मच जाए।

2. कवि अपने अन्दर के कवि से आगे कहता है कि हे कवि! ऐसी तान सुनाओं जिससे मां का दूध जो बच्चे को नवजीवन देता है वह कालकूट हो जाए अर्थात् विष में बदल जाए और आंख के आंसू जो दया और करुणा के प्रतीक हैं, वह भी सूख जाए। आंखों का पानी खून के घूंट बन जाए। अर्थात् मानव की स्वार्थपरक स्वाभाव पूरी तरह छिन्न–भिन्न हो जाए। नष्ट हो जाए। कवि अपने अंदर के कवि से ऐसा गीत गाने को कहता है कि जिसकी हुंकार सुनकर विनाश कायरता भी कांप उठे। भूत और भविष्य दोनों ही नष्ट हो जाए। अन्धविश्वास पर आधारित मुर्खतापूर्ण विचारों की अचल चट्ानें अपने स्थान से हिल जाएं। अर्थात् सदियों पुराने

अन्धविश्वास और अज्ञानता पर आधारित परम्पराएं नष्ट हो जाएं। अर्थात् कुछ भी रोष न रहे। दूसरी ओर सभी को भय से कंपा देने वाली गर्जना चारों दिशाओं में गूंज उठे। अंतरिक्ष में एकमात्र उसी विनाशकारी गर्जन की आवाज सुनाई दे। कवि अपने अंदर के कवि को संबोधित करते हुए कहते है कि हे कवि! आज कुछ ऐसी तान सुनाओं जिससे और उथल–पुथल मच जाए।

3. कवि आगे कहता है कि कवि कुछ ऐसी तान सुनाओं जिसे सुनकर संसार को चलाने वाले सारे नियम और उपनियम के बंधन टूट जाएं अर्थात् सृष्टि की सारी व्यवस्था भंग हो जाए। संसार का पालन करने वाले भगवान विष्णु की पालन–पोषण करने वाली वीणा के सारे तार टूट जाएं और वह गूंगी हो जाए। कहने का भाव यह है कि भगवान विष्णु संसार का पालन करने का दायित्व भूल जाएं संसार में शान्ति व्यवस्था बनाए रखने वाला तन्त्र पूरी तरह नष्ट हो जाए अर्थात् चारों और अशान्ति फैल जाए। कवि कहता है कि इस महाविनाशक से भगवान शिव का सिंहासन भी हल उठे अर्थात् ये भी शान्त मुद्रा छोड़कर क्रोधित हो उठें। भगवान शिव की आग अरसाने वाली सांसे पूरे विश्व में छा जाएं। कवि अपने अंदर के कवि को संबोधित कर कहता है, हे कवि! आज तुम कोई ऐसा गान सुनाओं जिससे प्रलय आ जाए। तुम्हारे गीत को सुनकर प्रलय की महाविनाशकारी आंखें खुल जाएं और चारों दिखाओं में नाश और सर्वनाश ही दिखाई दे।

4. प्रस्तुत कविता में कवि संसार के लोगों को संबोधित करते हुए कहते है कि हे संसार के लोगों सावधान हो जाओं आज मेरी वीणा के संगीत में जगह जलती हुई चिंगारियां आ बसी हैं। अर्थात् मधुर संगीत की जगह मेरी वीणा प्रलय की चिंगारियों की वर्षा कर रही है। मेरी वीणा की मिजराबें टूट गई हैं और बीणा को बजाते हुए मेरी अंगुलियां ऐंठ गई हैं। कवि कहता है कि मेरा गला उल्साह और उमंग में रूक गया है और इससे महानाश का संहारक गीत निकलना मुश्किल हो रहा है क्षणभर के लिए रुका हुआ है। मेरे ह्रदय में महाविनाशक गीत जो रुका हुआ है वह मेरे ह्रदय में भयंकर आग सी दहका रहा है जिससे मेरे ह्रदय के अंदर की शंकाओं, चिन्ताओं का झाड़–झंखाड़ जल चुका हैं। कवि कहता है कि मेरे ह्रदय से जलता हुआ गीत फूटने वाला है।

5. कवि आगे कहता है कि आज मेरा प्रलय गीत संसार के कण–कण में फैल गया है। कवि का रोम–रोम प्रलयकारी गीत गा रहा है। भयंकर विषधर की चिन्ताओं को हरने वाली मणि से भी आज विनाश का ही गीत फूट रहा है। कवि यह देखेर आनन्दित है कि जीवन का प्रकाश संसार से मिट रहा है और संसार को सुरक्षित करने वाली पड़ियां भी सुप्त अवस्था में है अर्थात् समाप्त होने वाली है। कवि हर क्षण सृष्टि के विनाश की कामना करते है। कवि अपने भीतर के कवि से कहता है कि ऐसा गीत गाए जिससे संसार चकनाचूर हो जाए और महाविनाश का स्वर चारों और गूंजने लगे। कवि अपने ह्रदय में दबे गीत की क्रुद्ध तान को बाहर निकालने को कह रहे है। कवि आगे कहता है। मैंने अपने ह्रदय को मसल–मसल कर मेंहदी तैयार की है। अर्थात् कवि ने अपने सारे अरमानों, इच्छाओं को समाप्त करके प्रलय का गीत तैयार किया है। कवि कह रहा है कि मृत अरमानों की मेंहदी से रसे हाथों से विनाशक वीणा को बजा रहा हूं, उसकी एक–एक अंगुली की गति से विनाशकारी ताड़व नृत्य जन्म दे रही है। कवि संसार को संबोधित करते हुए कहता है कि हे संसार। आज तुम मेरे समाने से हट जाओं, मेरा यह भयंकर प्रहार तुम सहन नहीं कर पाओगे। तुम इस गीत को चोट से टुकड़े–टुकड़े होकर बिखर जाओंगे तुम्हारे केवल अवशेष ही शेष रह जाएगें। कवि आगे कहता है कि आज मैंने सृष्टि के सारे भेद जान लिए हैं और देख लिए हैं। आज मैंने प्रलय की तिरष्ठी पड़ती भौंहों में पलने वाले महाविनाश के चिह्नों को देख लिया है। अर्थात् प्रलय आने ही वाली है। हे मेरे कवि। मुझे जीवन का सार समझ में आ गयाहै। आज मैंने प्रलय की तिरछी भोहें में पलने वाले महाविनाश के चिह्नों को भी देख आया हूं। कवि कहता है कि तुम भी जीवन का गीत नाना बन्द करों और मृत्यु के गीत के स्वर में तुम भी अपना स्वर मिला दो। कवि कह रहा है कि आज मेरे दिल में रुद्धे कंठ गीत क्रुद्ध तान ह्रदय की गहराई से निकलकर बाहर आ गई है।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि संसार को पूरी तरह नष्ट कर नई सृष्टि का सपना देखता है।
2. कविता में कवि सृष्टि के सर्वनाश के लिए अपने अंदर के प्रलयकारी कवि को कविता लिखने का आह्वान करता है।
3. कविता में भाषा सरल सहज व भावपूर्ण खड़ी बोली है।
4. अनुप्रास, वीप्सा अलंकारों का प्रयोग हुआ है।
5. कविता में ओजपूर्ण भाषा का प्रयोग।
6. प्रस्तुत कविता में कवि प्रलय के पश्चात् पुनर्निमार्ण की परिकल्पना करता है।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. बालकृष्ण शर्मा नवीन का जन्म कब हुआ?
2. बालकृष्ण शर्मा का उपनाम बतओं।
3. 'विप्लव गायन', कविता के रचयिता का नाम लिखिए।
4. नवीन जी के प्रथम काव्य–संग्रह का नाम बताइए।
5. नवीन जी का देहावसान किस वर्ष हुआ?

8.4 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि विप्लव नायक कविता में बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' द्वारा लिखित है इसमें कवि प्रलय अथवा महाविनाश की कल्पना के साथ नवनिर्माण की उम्मीद रखता है। प्रस्तुत कविता में कवि कहते है कि इस सब्सर ने मां का जीवनदायी दूध जहर बन जाएगा, दया–माया क्रोध में बदल जाएगी। आकाश में बिजली की चमक गड़गड़ाहट धरती को कंपा देगी, बिजलियां गिरेगी। विष्णु संसार का पालन करना छोड़ देंगे, शिव तांडव द्वारा महाकवि करेंगे। साक्षात शेषनाग की मणि भी अब जीवन देने में असमर्थ होगी। जिससे सम्पूर्ण संसार नष्ट हो।

8.5 कठिन शब्दावली

हिलोर– लहर। **त्राहि–त्राहि**– बचाओं–बचाओं। **भस्मसात्**– जलकर रख। **वक्षस्थल**– छाती। **शोषित**– रक्त। **गतानुगति**– भूत और भविष्य। **विचलित**–हिल जाए। **विश्वम्भर**–संसार के पालक विष्णु। **पोषक**–पालने वाली। **महारुद्र**–भगवान शिव। **दाहिका**–जलाने। **प्रलयकारी**–प्रलय ला देने वाली। **मिजराबें**–तार का छल्ला जिससे वीणा के तार छेड़े जाते हैं। **मारकगीत**–संहार करने वाला गीत। **रुद्र**–रुक जाना, बाधित होना। **दग्ध**–जल जाना। **कालकूट**–विषैले। **संभक्षण**–पुरी तरह खा लेना। **अवशेष**–खण्डहर, मलवा। **भू–बिलास** –भौंहों में बल पड़ना, क्रोध आना। **पोषक**–पलने वाले। **रुद्ध**–रुका हुआ।

8.6 आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. 1897।
2. नवीन।
3. बालकृष्ण शर्मा नवीन।
4. कुंकुम।
5. 1960।

8.7 संदर्भित पुस्तक

1. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी–समकालीन हिन्दी कविता।

8.8 सात्रिक प्रश्न

1. विप्लव गायन कविता, कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।
2. विप्लव गायन कविता, कविता का प्रतिपादय अपने शब्दों में लिखों।

*****

इकाई–9
सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय परिचय

संरचना

9.1 भूमिका
9.2 उद्देश्य
9.3 अज्ञेय का जीवन परिचय
स्वयं आंकलन प्रश्न
9.4 सारांश
9.5 कठिन शब्दावली
9.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
9.7 सन्दर्भित पुस्तक
9.8 सात्रिक प्रश्न

9.1 भूमिका

हिन्दी साहित्य में कालक्रमानुसार विभिन्न धाराओं एवं वादों का उदय एवं आरम्भ होता रहा है। विभिन्न विद्वान भिन्न–भिन्न वादों के प्रवर्तक के रूप में जाने जाते है। पच्चास के दशक के उभरे एक बाद जिसे प्रयोगवाद के नाम से जाना जाता है का प्रवर्तक सुप्रसिद्ध, प्रयोगशील कवि 'सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' को माना जाता है। एक स्तर पतक तो अज्ञेय और प्रयोग को एक–दूसरे का पर्याय भी माना गया है। अतः अज्ञेय प्रयोगवाद और नयी कविता के विशिष्ट कवि हैं। इस धारा के कवियों में अज्ञेय का स्वर सबसे अधिक वैविध्यपूर्ण है। उनका स्वर प्रेम से लेकर दर्शन तक, अहम् से लेकर समाज तक, आदिम गन्ध से लेकर वैज्ञानिक चेतना तक, यान्त्रिक सभ्यता से लेकर लोक–परिवेश तक, यातना बोध से लेकर विद्रोह की ललकार तक, प्रकृति सौन्दर्य से लेकर मानव सौन्दर्य तक फैला हुआ है। अज्ञेय में संवदेना के साथ एक सजग बौद्धिकता है। यह बौद्धिकता उनकी संवेदना को नियन्त्रित तो करती ही है, कई बारउनकी अनुभूतियों को प्रभावहीन बना देती है।

9.2 उद्देश्य

1. अज्ञेय के व्यक्तित्व की जानकारी।
2. अज्ञेय के काव्य का बोध।
3. अज्ञेय की साहित्यिक विशेषताओं का ज्ञान।

9.3 अज्ञेय का जीवन परिचय

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय का जन्म 7 मार्च, 1911 ई. को उत्तर प्रदेश में गोरखपुर से लगे हुए देवरिया जिले के कसिया नामक ग्राम में हुआ। कसिया को संस्कृत में 'कुसा नगर' भी कहते हैं, इसी स्थान पर भगवान बुद्ध को निर्वाण प्राप्त हुआ था। इनके पिता कानाम श्री हीरानन्द वात्स्यायन था जो सारस्वत गोत्रीय पंजाबी ब्राह्मण थे। श्री हीरानन्द पुरातत्व विभाग में एक उच्च पदाधिकारी थे। अतएव अज्ञेय को बचपन से ही श्रीनगर, नालन्दा, पटना, लाहौर, लखनाऊ, बड़ौदा, ऊटकमंड और मद्रास आदि स्थानों पर घूमने का अवसर मिला। इसी प्रकार अपने पिता के कारण अज्ञेय को विद्वानों का सम्पर्क भी सर्वदा सुलभ रहा लेकिन सन् 1946 में श्री हीरानन्द जी की मृत्यु गुरूदापुर में हो गई।

सम्पूर्ण भारत का भ्रमण उनकी रग–रग में बस गया था। देशवासियों की वास्तविक स्थिति को समझने में इस भ्रमण ने अपनी तरह से योगदान दिया। वे देवरिया (उत्तर प्रदेश) में पैदा हुए, बिहार में बढ़े, पले, किशोरावस्था दक्षिण में गुजरी और तरुणाई लाहौर में। भारतवर्ष का यह समय राजनीतिक दृष्टि से विस्फोट का समय था। बचपन में उमड़ी अग्रेंजी शासकों के प्रति विद्रोह वृत्ति ने बी.एस.सी. पास करते–करते और एम.ए. अग्रेंजी में प्रवेश लेने के साथ ही जेल–यात्रा के लिए प्रेरित कर दिया। जेल प्रवास में ही उन्होंने अपना पहला काव्य–संकलन 'भग्न–दूत' और उपन्यास 'शेखर एक जीवनी' की रचना की । जेल–जीवन से मुक्ति मिलने के बाद उन्होंने साहित्य और पत्रकारिता की दिशा में कदम बढ़ाए। पत्रकारिता के क्षेत्र में उन्होंने अपनी पहचान आगरा के साप्ताहिक 'सैनिक' के माध्यम से बनायी, फिर बनारसीदास के आमन्त्रण पर कलकत्ता से निकलने वाले 'विशाल भारत' में सम्पादक हुए। अपनी सम्पादकीय टिप्पणियों के माध्यम से उन्होंने जो नया तेवर, नए विचार, नयी शैली हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में निर्मित की, उससे पाठकों का विशेष वर्ग उनका भक्त हो गया।

अज्ञेय अपने प्रारम्भिक जीवन से ही यायावरी रहे हैं। कलकता से आकर अज्ञेय ने इलाहाबाद से ऋतुधर्मी पत्र 'प्रतीक' का सम्पादन कार्य प्रारम्भ किया। प्रतीक के माध्यम से उन्होंने इलाहाबाद की मानसिकता को समझने काप्रयास भी किया। तथा नयी पीढ़ी के बहुत बड़े समुदाय को अपनाप शिष्यत्व भी प्रदान किया। 'नयी कविता' का प्रकाशन इसी कड़ी का विकसित रूप है। इसी बीच तारसप्तक का सम्पादन करके उन्होंने अपनी पहचान बनाने के साथ नवोदित कवियें को भी आगे आने का अवसर दिया। नए जीवन का अनुभव प्राप्त करने के लिए वे 1943 ई के युद्ध में प्रवेश किए और कैपटन वात्स्यायन के रूप में 1945 ई. तक कोहिमा फ्रंट पर रहे। 1970 ई. तक समाचार साप्ताहिक के सम्पादक थे। इसके बाद वे जोधपुर विश्वविद्यालय में भारतीय साहित्य विभाग के प्रोफ़ेसर तथा अध्यक्ष रहे।

डिग्री के नाम पर अज्ञेय ने छोटी डिग्री प्राप्त की, लेकिन अध्ययन और अनुभव की डिग्री को आधार मानकर अमेरिका के कैलिफोर्निया और पश्चिमी जर्मनी के हाइडेल वर्ग विश्वविद्यालय ने उन्हें सम्मान पूर्वक आमन्त्रित किया और वह वर्षों वहां भारतीय संस्कृति और साहित्य का अध्यापन करते रहे। वे जहां भी गए, उनका मन अपने देश की मिट्टी से बंधा रहा। उन्हें अपने देश, अपनी संस्कृति और भाषा तथा सभ्यता से विशेष लगाव था। वे पूरी निष्ठा से अपनी वत्सला के प्रति समर्पित थे। इसका कारण था उनकी याथावरी संवेदना, जिसके लिए पर्वत उन्हें आमन्त्रण देते हैं, जंगल अपने पास बुलाते हैं, नदी–निर्झर और सागर उन्हें इंगित करते हैं, अवकाश मिलते ही वे उनका साक्षात्कार करते हैं, नदियां अपने कलरव संगीत से उन्हें मुग्ध करती हैं, निर्झर उनके साथ खेलते हैं, पौधे की पतली टहनी पर बैठी चिड़िया उन्हें आकर्षित करते हैं, वृक्ष से झरझर गिरता हुआ पीला पत्ता उन्हें मुग्ध विस्मित कर देता है। ये सारे उपमान उन्हें काव्य–सर्जन में प्रवृधि की भूमिका का निर्वाह करते हैं जिसके कारण कवि अज्ञेय का विकप्प एक अन्तर्मुखी कलाकार के रूप में होता है। क्रान्तिकारी जीवन और जेल के अनुभव ने उन्हें 'शेखर की जीवनी'। तथा 'कोठरी की बात' में जिस रूप में प्रेरित किया है उससे उनकी वैयक्तिक मनोवृत्ति का विकास भी अन्तर्मुखी रूप में होता है। उनके अपने व्यक्तित्व के विशेष प्रभाव में उनकी कविता का विकास होता है। इस रूप में जीवन की अनेक–जटिल–ग्रान्थिल समस्याओं की प्रतिक्रिया को रागात्मकता एवं बौद्धिकता से रूथापित कर सम्प्रेषणीयता के धरातल पर रखने का जो प्रयत्न किया है, उससे उनकी शाश्वत प्रयोगशीलता एवं चिरन्तन धर्म की प्रमाणिकता सिद्ध होती है। यदि इस क्रम में भाषा कुछ गूढ़ अलौकिक हो जाती है जो यह प्रयोग शीलता का आपद्धर्म है। अज्ञेय पूरी रचना–प्रक्रिया में इन दोनों धर्मो की स्थितियों से निकल का अपनी पहचान बनाते हैं और उस चुनौती को स्वीकार करते है। जो व्यक्ति की अनुभूति को समष्टि की पूर्णता से सम्बद्ध करती हैं

सन् 1952 से 1965 की जनवरी तक उनके निवास–स्थान कई बार बदले। इस बीच उन्होंने अनेक यात्राएं कीं। 1952–55 तक उन्होंने भारत के तीर्थों की कई बार यात्रा की। 1955 में पहली बार यूनेस्को के निमन्त्रण पर

पश्चिमी यूरोप की यात्रा पर गए। वहां वे अनेक कवियों, लेखकों और चिन्तकों से मिले। 1955 में उन्हें जापान और फिलीपीन की यात्रा का अवसर मिला। वहां उनका परिचय जापानी कविता की प्रवृत्तियों से हुआ। 1960 में तीन–चार महीनों के लिए दोबारा यूरोप यात्रा पर गए। 1960 में ही कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में भारतीय संस्कृति एवं साहित्यपढ़ाने के लिए अध्यापक नियुक्त हुए। 1966 में उन्हें, रूमानियां, यूगोस्लावियां, रूस तथा मंगोलिया की यात्रा का अवसर मिला। 1967 में एक सेमिनार में हिस्सा लेने आस्ट्रेलिया गये।

सन् 1979 का वर्ष एक अन्य कारण से भी उल्लेखनीय है। इसी वर्ष 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता–संकलन के लिए अज्ञेय को 'भारतीय ज्ञानपीठ' पुरस्कार मिला। 'भारतीय ज्ञानपीठं से जो राशि मिली उसमें उतनी ही राषि जोड़कर उन्होंने एक निधि बनाने का संकल्प किया। इस निधि की विधिवत् स्थापना 1980 में 'वत्सल–निधि' के रूप हुई। 1980 से 1987 तक वे इस निधि का संरक्षण करते रहे। विभिन्न प्रकार की साहित्यिक गतिविधियों में हिस्सा लेने और लेखन के बाद जो समय बचता था उसे वे 'वत्सल–निधि' के लिए आयोजनों की तैयारी में ही बिताते थे। 1983 में उन्हें एक ओर उल्लेखनीय सम्मान मिला। यह था 'अन्तर्राष्ट्रीय कविता सम्मान' द गोल्डन रीथ' (स्वर्णमाल) के नाम से प्रसिद्ध है। यह सम्मान यूगोस्लविया के स्त्रुगा महोत्सव में मिला था। कवि के रूप में वे प्रमुख अर्न्राष्ट्रीय उत्सवों में भी सम्मिलित होते रहते थे। 1984 मे वे 'पोयट्री इन्टरनेशनल राइटरडम' (हालैंड) गये थे। 1985 में साहित्य अकादमी के शिष्ट मंडल में चीन गये। 1986 में वे भारत को केन्द्र में रखकर आयोजित पुस्तक मेले में 6 निरन्तरता में परिवर्तन विषयक संगोष्ठी में सम्मिलित हुए।

4 अप्रैल, 1987 को करीब साढ़े सात बजे सुबह अज्ञेय ने छाती में दर्द का अनुभव किया। उन्हें अविलम्ब राम मनोहर लोहिया अस्पताल ले जाया गया। उन्हें बचाने के सारे प्रयास निष्फल रहे। साढ़े आठ बजे के करीब उनका देहावासन हो गया। 5 अप्रैल, 1987 को अज्ञेय का अन्तिम संस्कार 'निगम बोध घाट' पर किया गया। उनके निधन पर अनेक पत्र–पत्रिकाओं, कवि–लेखकों ने उनका आदरपूर्वक स्मरण किया।

अज्ञेय व्यक्तित्व के धनी थे। उनमें प्रखरता एवं सक्रियता दोनों थीं। यायावरी वृत्ति, विद्रोही स्वभाव, परतन्त्रता के खिलाफ सक्रिय लड़ाई और आत्म–चिन्तन एवं आत्म–विश्लेषण इनके व्यक्तित्व की महत्वपूर्ण विशेषताएं थीं। आत्म–मंथन की परिस्थितियों ने और उनके निजी स्वभाव ने उन्हें जीवन जीने का एक अपना आदर्श दिया है। दुःख का उन्होंने बड़ी आस्था के साथ स्वीकार किया था। जीवन अनुभवों की विविधता ने उन्हें व्यापक कला चेतना प्रदाप की। वे एक साथ कवि, लेखक, आलोचक, कहानीकार, उपन्यासकार ही नहीं थे, अपितु फोटोग्राफर चर्मशिल्पकार, मूर्तिकार, माली, पर्वतारोही, सिलाई कला मर्मज्ञ आदि पता नहीं क्या–क्या थे? अज्ञेय का व्यक्तित्व विभिन्न रूपों में सम्पृक्त एक ऐसा विरल व्यक्तित्व है जो हिन्दी साहित्य में दूसरा नहीं है।

❖ **अज्ञेय की रचनाएं :** भग्नदूत (1933 ई.), चिन्ता (1942 ई.), इत्यलम, हरी घास पर क्षणभर (1949 ई.), बाबरा अहेरी (1954 ई.), इन्द्रधनुष रौंदे हुए थे (1957 ई.), अरी ओ करुणा प्रभामय (1959 ई.), आंगन के पार द्वार (1961 ई.), कितनी नावों में कितनी बार (1967 ई.), क्योंकि मैं उसे जानता हूँ (1968 ई.), सागर मुद्रा, पहले में सन्नाटा बुनता हूँ, महावृक्ष के नीचे, नदी की बॉक पर छाया (1981 ई.), सदानीरा, ऐसा कोई घर अपने देखा हैं (1986) मरूथल (अज्ञेय की अन्तिम कविताएं, 1995)।

अज्ञेय के निबन्ध–संग्रह : लिखि कागद कोरे (1973 ई.) आल–वाल, जोग लिखी (1977), अद्यतन (1977), संवत्सर (1978), अपरोक्ष (1979), युग संधियों पर (1981), धार ओर किनारे (1982), आत्मषरक (1983), केन्द्र और परिधि (1984)।

कहानी संग्रह :– विपथगा (1937), परम्परा (1944), कोठरी की बात (1945), शरणार्थी (1949), जयदोल (1951) ये तेरे रूप प्रतिरूप (1961)।

उपन्यास :– शेखर : एक जीवनी (1941 और 1944), नदी के द्वीप (1952), और अपने अपने अजनबी (1961)।

यात्रा वृतान्त :– अरे यायावर रहेगा याद (1953), एक बूँद सहसा उछली (1960)।

गीतिनाट्य :– उत्तर–प्रियदर्शी (1967)। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि कवि अज्ञेय ने साहित्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई और वह भी नवीन भावों एवं नवीन प्रयोगों के साथ।

❖ साहित्यिक विशेषताएं

अज्ञेय का अस्तित्व बोध :

अस्तित्ववाद, दर्शन बीसवीं शताब्दी की बहुचर्चित जीवन पद्धति है जिसने पुरातन मान्यताओं, जीवनमूल्यों, वैचारिक सरणियों को नकारकर नवीन भावभूमियों का संक्रमण करती हुई जनचेतना को स्वीकार है। वैज्ञानिक अनुसंधानों, स्वचालित मशीनों के निर्माण, इग्लैंड के पुनर्जागरण, द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर विघटनशील स्थितियों तथा शक्तियों के अप्रत्यशित विकास से जन–जीवन के मूल्यों में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ, जिससे मानवीय अस्तित्व के प्रति जागरूक एक ऐसी चिन्तनधारा उभरी जिसे विज्ञावादी दार्शनिकों ने अस्तित्ववाद की संज्ञा से अभिहित किया।

अस्तित्ववाद का मूल प्रेरक व्यक्तिपरक दृष्टिकोण है। घोर व्यक्तिवादिता, व्यक्तिस्वातन्त्रय, आत्मोन्मुखता आदि प्रवृत्तियों ने इस वाद विशेष को संवृद्ध होने में प्रोत्साहन दिया है। अज्ञेय की चिन्तना एवं अन्वेषणात्मक दृष्टि पर्याप्त सीमा तक सूरोपियन है। अज्ञेय व्यक्तिवादी हैं। उनकी कविता में व्यक्ति का स्वर प्रमुख है। उनकी काव्यात्मक एवं औपन्यासिक समस्त रचनाओं में अस्तित्वबोध उभरा है। इन पर यास्पर्स, बूवर, लारेंस, इलियट आदि पाश्चात्य विचाराकों की वैचारिकता की प्रभाव तो है ही, साथ–साथ स्वातन्त्रयपूर्व एवं स्वातन्त्रयोत्तर भुखमरी, बेकारी, औद्योगीकरण, विदेशी आक्रमण जैसी घटनाओं के प्रभावस्वरूप भी यह दर्शन इनकी रचनाओं में आद्यन्त द्रष्टव्य है।

अज्ञेय नयी कविता के पुरोधा हैं, प्रवर्तक हैं, सप्तकों के नियोजक हैं और नये कवियों के मार्गदर्शक हैं। 'तार–सप्तक' (सन् 1943) के माध्यम से नयी कविता का व्यवस्थित रूप उभरा जिसके सम्पादकत्व का श्रेय अज्ञेय को है। निस्सन्देह वे नयी पीढ़ी के नेता और आचार्य के रूप में अवतरित हुए। अज्ञेय ने अस्तित्ववादी जिन प्रवृत्तियों का अधिकांशतः प्रतिफलन किया उनमें क्षणवादिता अथवा क्षणबोध, मृत्यु के एहसास का आतंक, संशय, मृत्युबोध, एकाकीपन, अनास्था आदि उल्लेख्य है।

क्षणों की अद्वितीयता को स्वीकारना और प्रत्येक क्षण को पूरी तरह जीना अस्तित्ववाद की प्रमुख प्रवृत्ति रही है। क्षण–क्षण में लिखा गया निर्णय, क्षण के महत्व को महसूस करना ही क्षण को सार्थकता प्रदान करना है। अज्ञेय के लिए अस्तित्व का एक सजीव क्षण 'सत्य के साक्षात्कार का अप्रतिम' क्षण है जब वे तन्मय होकर उस क्षण के पयोनिधि का आमचन करते हैं।

अज्ञेय का क्षणवाद न तो बुद्ध का क्षणिकवाद है और न छायावादी कवियों पालयनवाद। वे तो क्षण की पहड़ में आने वाले उस सत्य का साक्षात्कार करना चाहते हैं जिसमें अर्थवता है, सार्थकता है और जीवंतता है।

अज्ञेय की कविता अनुभूति की प्रामणिकता का दस्तावेज़ है। 'आत्मनेपद' में अज्ञेय के अनुसार क्षण पर बल देने का एकमात्र कारण अनुभूति के प्रति ईमानदारी और सच्चाई है। सच्चा वर्तमान क्षण ही ऐसा क्षण है जिसके साथ न तो स्मृति का आभाव है न प्रत्याशा या आक्षेप का क्योंकि एक अतीत का लक्षण है और दूसरा भविष्य का। दोनों प्रकार की छायाओं से मुक्त असम्पृक्त क्षण ही वर्तमान है।

ऐसे क्षण जो जीवन के आदि को अन्त में जोड़ दे और रिक्तता की मांग में चुटकी भर उसे ज्योतिर्मयी बना दे, अद्भुत होते हैं। ऐसे क्षणों को अज्ञेय विस्मृत नहीं कर पाते, उन्हें किसी कल्पित अमरत्व का मोह नहीं और न अनन्तकाल तक जीने में उनकी आस्था है। वे तो वर्तमान के अद्वितीय क्षण को आत्मसात करने के आकांशी है।

'बाबरा अहेरी' में कवि ने स्मरण को पाथेय बनाने के लिए प्रेरित किया था जिससे प्लावन का सान्द्र धन बनकर अनुभूति कभी कभी–कभी अवश्य उमड़ेगी लेकिन 'इन्द्रधनुष रौंदे हुए थे' नामक कृति में भूत और भविष्य के बीच जो प्रभामय क्षण है, जो वर्तमान के रूप में उद्यान की तरह, भोले शिशु की मुस्कान की तरह प्रसरित है, उसे पकड़ने के लिए विशेष बल देना प्रारम्भ कर दिया है।

अज्ञेय की कृतियों में क्षण का भोगवादी दृष्टिकोण भी उभरा है जहां वे क्षणभर के लिए अस्तित्वयुक्त और अस्तित्वहीन होने के आकांक्षी हैं, क्षण भर के लिए लय हो जाने के लिए उत्सुक हैं। 'हरी घास पर क्षणभर' के लिए नगर की जनसंकुलता को भूलकर आकाश, धरा, मेधाली के प्राकृतिक सौन्दर्य को आप्यापित करना चाहते हैं क्योंकि यह क्षण किसी की कृपादृष्टि का परिणाम नहीं बल्कि अपने जीवन की निधि से ब्याज–तुल्य मिला है।

अज्ञेय क्षण की नित्यता को स्वीकारते हैं। वह देश–काल, धर्म–स्थान के रेखाओं से सर्वथा मुक्त हैं और अनवरत प्रवाहमान हैं। क्षण परिवर्तनशील होता हुआ भी 'कालचक्र' का एक बिन्दु ह। इन बिन्दुओं से ही कालरेखा का स्वरूप निर्मित होता है। निम्नलिखित उदाहरण क्षण की नित्यता का प्रमाण है –

यह छोटा–सा जाना हुआ क्षण है
कि होकर नहीं देता,
यह में हूँ

कितनी नावों में कितनी बार अज्ञेय की वैचारिकता धर्मचक्र यान तत्व, बौद्ध, वैशेषिक दर्शन से प्रभावित है। कहीं–कहीं तो ऐसा लगता है जैसे कवि भारतीय चिन्तन पद्धति अथवा परम्परा को काव्यात्मक रूप देने का उपक्रम कर रहा हो। भौतिक विज्ञान में जिस अखण्ड अणु की कल्पना है उसका मूल कणाद के वैशेषिक में विद्यमान है। क्षण भी उसी के समान अखण्ड अथवा अविभाज्य है। जिस रेखा की निर्मिति बिन्दु संघटनों का परिणाम है वही काल के असीमित फलक पर प्रसारित होती है। नाद तत्व के तुल्य कोई भी प्रक्रिया समय पट पर अंकित हो जाती है।

अज्ञेय का कवि जितना प्रख्र है उतना ही उनका चितंन जागरूक है। उन्होंने द्वितीय समरोत्तर परिवेश की स्थिति को परखा, मानवीय मूल्यों के विघटन को महसूस किया इसीलिए उनती बौद्धिकता ने उन्हें छायावादी भावबोध से अलग किया। अज्ञेय का चिन्तन ही यत्र–तत्र प्रार्थना रूप में प्रतिफलित हुआ है। ईश्वर के परम्परागत रूप पर उनकी आस्था नहीं है। उन्होंने किसी दैवी शाक्ति की खोज न कर आत्मरूप की खोज की है। मानवीय शक्ति की उनकी दृष्टि में सर्जक और अन्ततः पूज्य है। वे उसी के॰पति नमित और अर्चिज हैं।

अज्ञेय ने मनुष्य के अन्तर्मन को महत्त्व दिया है। जहाँ परमात्म–शाक्ति अवस्थित है। बाह्य रूप उनकी दृष्टि में निरर्थक है। उन्हें सन्देह है कि सृष्टि की विकास–प्रक्रिया के पीछे कोई शक्ति है। वे उस अखण्ड अविनाशी सारभूत तत्त्व के प्रति विद्रोही हो उठे हैं।

इस विकास गाति के आगे है कोई दुर्बल शक्ति कहीं;
जो जग का स्रष्टा है,
मुझको तो ऐसा विश्वास नहीं।" प्रार्थना

अज्ञेय के भावबोध में जीवन और उसके विविध व्यापार के प्रति उपेक्षाभाव नहीं है। मनुष्य की बौद्धिक एवं भावनात्मक उपलब्धियों के प्रति अस्वीकार नही है और न प्रकृति पर परमसत्ता के विराट बिम्बों का आरोपण है। उनके भावबोध में समकालीन युग की कचोट है, व्यर्थ की जिज्ञासा मिथ्या भाव प्रवणता और बौद्धिक कल्पना प्रचुरता नहीं।

अस्तित्ववादी दर्शन की एक महत्वपूर्ण मृत्यबोध है। व्यक्ति दमतोड़ स्थितियों में भी जीना चाहता है। संकट को भोगता हुआ भी जीवन से चिपका रहना चाहता है। जन्मदिन का आयोजन भी अज्ञेय के मन को विशेष सन्तोष

नहीं देता। वह उसे और दिनों की तीरह निरर्थक महसूस करता है। मृत्यु का एहसास इतना प्रभावी है कि जीवन की क्षण–भंगुरता, जीवन के उद्‌गम और सम्मान तथा मृत्योपरान्त गन्तव्य के सम्बन्ध में सोचने का बाध्य हो जाता है–

मैं देख रह हूँ
हरी फूल से पंखुरी
मैं देख रहा हूँ
अपने को ही झरते।

कहीं कवि अस्तित्व की वेदना से पीड़ित होता है तो कहीं स्वयं को साँस का पुतला मानता है वह स्वार्थलिप्सा में आबद्ध मानव समाज की अधोगति से चिन्तित हो उठा है जहां व्यक्ति परिचित होकर भी अपरिचित है, जहाँ अविश्वास का पुच्छल तारा सम्बन्धों के आकाश पर बैठ गया है। वह स्वयं को पदाक्रान्त रिरियाते कुत्ते से उपमित कर स्वार्थान्ध समाज की भयावह स्थिति को रूपायित कर देता है। अज्ञेय मृत्यु को अवश्यंभावी स्वीकारते हैं, अपरिहार्य प्रक्रिया मानते हैं लेकिन फिर भी उसे शिवत्व, सुन्दरं से अभिषिक्त करने के पक्ष में हैं। सब कुछ मरण–धर्मा है, परन्तु फिर भी जीवन से असम्पृक्त होना अनुपयुक्त है।

अज्ञेय में लघु मानव की उत्तेजना एवं उद्विग्नता उस अन्तर्द्वन्द्व के कारण है जिसमें वह स्वयं की बुरी तरह उलझा हुअ पाता है और सुखपूर्वक मरने का दावा करता है। उसने जीवन को निर्विकल्प होकर भोगा है। अज्ञेय में जिजीविषा है, अप्रतिहत विद्रोह का स्वर है और अपने अस्तित्व को सार्थक बनाए रखने का प्रयास है। वह स्वयं असीम शक्ति का एक अणु, असीम सागर को अपने भीतर प्रतिबिम्बित करने वाली बूँद घोषित करता है।

लघु मानव में आत्मस्वातन्त्र्य की तीव्र कामना है और समस्त सामाजिक सरणियों को भंग करने की व्यग्रता है। 'हरी घास पर क्षण भर' नामक कृति में लघु मानव में उद्‌बुद्ध स्वातन्त्र्यबोध की स्थिति देखिए–

पगहा तोड़ भागे हुए मृग–सा
स्वयं मानव
चिरन्तन की सृष्टि का लघु अंग।'

व्यक्ति स्वातन्त्र्य का अर्थ आत्मकेन्द्रित अथवा अहंवादी होना नहीं बल्कि व्यक्ति की व्यथा के बीज को लोकमानस की सुविस्तृत भूमि में अंकुरित करना है। आज के वैज्ञानिक एवं तकनीकी परिवेश में जहाँ आस्था कपकपा उठी है, मानवीय मूल्य मैले और पुराने हो गए हैं, पारस्परिक सम्बन्ध कोरे स्वार्थ केन्द्रित हो चले हैं और तमाम परिवेश अराजकता की विभीषिका से आक्रान्त है, वहाँ कवि का सर्जनशील मन आस्था और सार्थकता से असम्पृक्त नहीं है।

कवि का विश्वास है कि जिन्होंने धरती में विश्वास नहीं खोया, जिन्होंने अपनी जिजीविषा घृणा के परनाले में नहीं डुबोयी उनकी डोंगियां फिर तरंगों पर तिरेंगी। बस आवश्यकता है मानवीय गौरव और अन्तरात्मा के प्रतिष्ठापन की। लेकिन यह तभी सम्भव है जब हम मनुष्य और मनुष्य को एक समान समझें और दोनों के लिए समान नैतिक मूल्य और समान अधिकार, समान गौरव की घोषणा करें।

❖ अज्ञेय की भाषा शैली

अज्ञेय भाषा को 'सस्कृति का सर्वाधिक शक्तिशाली और समृद्ध उपकरण मानते हैं। भाषा रोज़मर्रा के असंख्य साधारण प्रयोजनों एवं कार्य व्यापारों का माध्यम होने के साथ 'मूल्यों के रचनात्मक शोध का और गम्भीरता अनुभूतियों तथा संवेदनाओं के प्रेषण का माध्यचम भी हैं। एक संस्कारी एवं सर्जनात्मक काव्य–भाषा के निर्माण के लिए जितना प्रयत्न अज्ञेय ने किया सम्भवतः और किसी नये कवि ने नहीं किया। अज्ञेय ने काव्य–भाषा के सम्बन्ध में गम्भीरता से विचार किया है। भाषा सम्बन्धी उनके विचार आत्मनेपद, तार सप्तक, अद्यतन, अन्तरा आदि

पुस्तकों में देखे जा सकते हैं। अज्ञेय काव्य–भाषा को बोलचाल की भाषा के निकट लाना चाहते थे। वे समर्थ अभिव्यक्ति के लिए नये मुहावरों की तलाश, शब्दों के नवीन संस्कार की चेष्टा तथा शब्दों के मित प्रयोग को आवश्यक मानते हैं। यद्यपि अज्ञेय ने आवश्यकता पड़ने पर विराम–चिन्हों तथा उपयुक्त इत्तर साधनों के प्रयोग की और भी संकेत दिया है। किन्तु उनका मुख्य बल शब्द प्रयोग पर है।

भाषा के जिस रूप का अज्ञेय ने वरण किया है उसमें भाषा की अभिजात्य व्यवहार भले ही दिखलाई पड़ता हो वे बोलचाल की शब्दावली से युक्त सहज भाषा की तलाश करते प्रतीत होते हैं। इसका प्रमाण यह है कि तत्सम शब्दों के अतिरिक्त उनकी भाषा में अनेक देशज, अरबी, फारसी, अंग्रेजी तथा हल्के फुल्के व्यंजक शब्दों के प्रयोग देखे जा सकते हैं। ठेठ देहाती एवं देशज शब्दों के प्रयोग से कवि की भाषा बोलचाल की सहज भाषा के करीब तो आई ही है उसकी भावाभिव्यंजकता भी बढ़ी है। ठेठ देहाती एवं देशज शब्दों से निर्मित वैशाख की आंधी की एक तस्वीर देखिए:–

'हहर–हहर घहराया
काला बद्दलः
लेकिन पहले आया
झक्कड़...
आया पानीः
अरे धूल झगड़ैल,
चढ़ी पछवा के कंधों पर तू थी इतराती,

अज्ञेय के काव्य में विदेशी शब्दों की उतनी अधिकता तो नहीं दिखलाई पड़ती किन्तु आवश्यक होने पर उन्होंने अरबी–फारसी तथा अंग्रेजी के अनेक शब्दों का प्रयोग किया है। अरबी–फारसी से गुजरना, मुल्लमा, हाशिया, फरियाद, अल्हा, शौक, बेबस, शायर आदि शब्दों को लिया है। कई ऐसे उदाहरण मिलते है जहां कवि ने अंग्रेजी शब्द या पदावली से भावानुवाद कर नए शब्द का निर्माण कर लिया है जैसे– डस्टबिन के लिए कचरापेटी, लूज बॅडी के लिए ढीली देह, हण्टर ऑफ द ईस्ट के लिए भोर का बाबरा अहेरी आदि। अज्ञेय की भाषा पर अंग्रेजी और अरबी–फारसी के अतिरिक्त जापनी, यूनानी, चीनी आदि भाषाओं से भी कुछेक शब्द आ गए हैं। वाक्य रचना में हिन्दी के अतिरिक्त बंगला, पंजाबी तथा अंग्रेजी का प्रभाव लक्षित किया जा सकता है।

कवि ने हल्के–फुल्के व्यंजक शब्दों को भी सादर स्थान दिया है। ऐसे शब्द वे हैं जो प्रयोग से मंज गए हैं। जैसे–त्रिशूल से मंजकर बने तिसूल, उल्लास से उल्लस, चित्रकार से चित्तेरे, आकाश से आकास, निर्लज्ज से निलज आदि। ये शब्द आम बोलचाल में मँजकर हल्के हो गए हैं। कुछ शब्दों को अज्ञेय ने अल्पप्राण से महाप्राण भी बना दिया है जैसे उठा से उट्ठा, मशाल से मश्शाल, पर्वती से पार्वती, उगा से ऊगा आदि। कुछ शब्दों में वर्ण–माला परिवर्तन से नवीनता एवं सुघड़ता लायी गई है; जैसे–अंजली से अंजुरी, सुनहरी से सोनाली इत्यादि तथा कुछ पंजाबी के प्रभाव से सरलता लाने की चेष्टा की गई है, जैसे वर्षा से बारस, प्रजातन्त्र से परजातंतर इत्यादि।

कई स्थलों पर कवि ने संज्ञा से विशेषण तथा क्रिया बनाकर शब्दों को नवीन अर्थ एवं नया संस्कार दिया है। अंधकार से अंधियारा, अधियाला, फरियाद से फरियादी, अज्ञान से अज्ञानी आदि संज्ञा से बने विशेषण रूपों से एक नयी ताजगी है। अज्ञेय की भाषा में तत्सम शब्दों का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं, उनके काव्य में जहां संस्कृत शब्द भण्डार से आघात, अन्तर, असीम, आषाढ़, कनक, नारायण, वेदना, दुख, निष्ठा, समर्पण, स्मृति, आलोक, श्रद्धा आदि सरल बोधगम्य शब्द आए हैं। इसके अलावा इन्होंने कम प्रचलित और संस्कृत के वाक्याशों को ज्यों का त्यों उद्धत किया है। जैसे–

निविड़ाडन्धकार
को मूर्त रूप देने वाली
एक अकिंचन, निष्प्रभ अनाहूत,
अज्ञात धुति किरण
आसन्न–पतन, बिन जमी ओस की अन्तिम
ईशत्–करुण, स्निग्ध, कातर शीतलता
अस्पृष्ट किंतु अनुभूतः

'असाध्य वीणा' कविता में भी तत्सम शब्दों का खूब प्रयोग हुआ है जैसे– प्रियंवद, गुफागोह, गिरि–प्रांतर, वज्रकीर्ति, मन्त्रपूत, प्राचीन किरीटी तरु, करिशुण्ड आदि किन्तु यहां तद्‌भव देशज तथा हल्के फुल्के व्यंजक शब्दों के प्रयोग से भाषा अपनी सहजता नहीं खो पायी है। तत्सम शब्दबहुल वाक्य–रचना का उद्देश्य गम्भीर मनोभावों एवं वातावरण को चित्रित करना है।

❖ **अज्ञेय ने अपनी काव्य** भाषा में नाद सौन्दर्य का समावेश करने के लिए ऐसे शब्द युग्मों का प्रयोग किया है जो पदार्थ की क्रिया एवं ध्वनि को पूर्णतः प्रस्तुत करते हैं। शब्द मैत्री के प्रयोग से वे भाषा को अधिक प्रभावपूर्ण बनाते हैं तथा अर्थवत्ता में सजीवता भी लाते हैं। यथा– चुपचाप, साँझ–सवेरे, गूँज–अनुगूँज, स्वयं–संभार, जीवन–कांचन, गेह–गुफा आदि। द्वित्व वर्णों के प्रयोग से उन्होंने एक ओर तो ध्वनि सौन्दर्य की सृष्टि की है तो दूसरी ओर अर्थ गौरव में वृद्धि हुई है। इस प्रकार के प्रयोगों में कम शब्दों में ही बहुत कुछ कह दिया गया है। यथा–झरते–झरते, साँय–साँय, अलग–अलग, छुल–छुल, दुन–टुन, धीरे–धीरे, डाली–डाली आदि।

मुहावरे, कहावत इत्यादि के प्रयोग से भाषा की जीवंतता बढ़ जाती है। अज्ञेय ने प्रचालित कहावतों एवं मुहावरों का प्रयोग प्रायः सन्दर्भ बदल कर किया है। दबे पाँव आना, मुँह चिढ़ाना, झीकंते रहना, गाल बजाना, आकाश फाड़ना आदि मुहावरों के विशिष्ट सन्दर्भ में प्रयोग का का उदाहरण द्रष्टव्य है–

फूल खिलते रनहे चुपचापः
मंजीर आयी
दबे पाँव, सकुचाती।
तड़फड़ाते रहे, करते भोर,
मुँह चिढ़ाते रहे वन की भाान्ति को
अविराम अनगिन झींकते झींगुर
भिखारी सब
बजाते गाल बगलें,
फाड़ते आकाशः
आरी ओ करुणा प्रभामय

अज्ञेय की भाषा में लाक्षणिक पदावली की प्रयोग भी प्रचुरता से हुआ है। यह लाक्षणिकता एक ओर तो लोकोक्तियों एवं मुहावरों के प्रयोग से आई है तो दूसरी ओर सांकेतिक अर्थ की अभिव्यक्ति होने से इसका समावेश हुआ है। ऐसे कुछ प्रयोग द्रष्टव्य हैं:

1. धमनियों में उमड़ आई है लहू की धारा (वासना का ज्वार)
2. यह प्रेम यज्ञ की ज्वाला है।
3. देवता इन प्रतीको के कर गए है। कूंच (अर्थवत्ता का समापन)

4. नभ में एक मचा दे हलचल (क्रान्ति)

5. हँस उठी है कचनार की कली (प्रसन्नता)

6. ऐसी आग हठीली विरला सुलगाएगा (क्रान्ति)

7. मलय का झोंका बुला गया (सुगन्ध)

8. सूने गलियारों की उदासी (निराशा)

कवि ने प्रतीकों, बिम्बों एवं अलकारों का प्रयोग करते हुए अपनी भाषा को नई अर्थवत्ता प्रदान की है। 'हारिल' कवि की दुर्दम सर्जन इच्छा का प्रतीक है 'दीप' इयतापूर्ण अस्मिता का प्रतीक तो 'सागर' जीवन संघर्ष काप्रतीक है, 'नन्हीं शिखा' को रह वासना का प्रतीक बनाता है तो 'आकाश' एवं बुलबुला' उदात्त जीवन मूल्यों के प्रतीक हैं।

अज्ञेय का अप्रस्तुत विधान भी उनकी भाषा को शक्ति प्रदान करता हैं। उपमा उलंकार के लिए वे नए–नए उपमानों का चयन करते हैं। यथा :

1. वासना के पंक–सी फैली हुई थी धारयित्री।

2. स्फटिक मुकुर–सा निर्मल वापी का तल।

3. तुम्हारे नैन पहले भोर की दो ओस बूंदें हैं।

4. मैं वज्र कठोर हूँ।

5. तुम्हारी देह मुझको कनक चम्पे की कली है।

अज्ञेय की अनेक कविताओं में अर्थगर्भ मौन एवं शब्दों का संयमित प्रयोग लक्षित होता है। मौन के प्रयोग का एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

भोर !
तुम!
आशी!
जीवन है!
आशीः!

यह पूरी कविता है। इसमें भोर से सम्बन्धित उल्लास को अनभिव्यक्त छोड़ दिया गया है। कवि सन्दर्भ भी नहीं बताता, किन्तु इसमें अभिव्यक्त प्रसादित मनः स्थिति को देखते हुए अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि सागर के किनारे खड़ा है। जीवन के समस्त अनुभव, आशा–निराशा, आक्रोश–कुण्ठा उसके मान में सन्निहित हैं। जब वह अपने पा जीवन ढूँढना चाहता है, तो उसे सिर्फ अपनी हीनताओं का एक भण्डार मिलता है। ऐसे निराश क्षणों में भी जब कवि भोर को उल्लास, आदिगन्त प्रसार एवं स्विग्ध आलोक से सना देखता है तो उसे किंचित आश्चर्य ही होता है, और वह कह उठता है, 'भोर'! किन्तु 'तुम' कहते–कहते जैसे वह आश्वस्त हो गया और कवि समस्त हर्षातिरेक को छिपाकर सिर्फ 'आशी' कहता है।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. अज्ञेय का जन्म कब हुआ?

2. अज्ञेय के पिताजी का क्या नाम है?

3. अज्ञेय की किसी एक रचना का नाम लिखो।

9.4 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि अज्ञेय हिन्दी साहित्य में प्रयोगवाद के कवि रहे है। उन्होंने समकालीन समाज की विविध समस्याओं को चित्रित करने के लिए अपनी भाषा शैली में विविध प्रयोग किए है इसलिए उनको प्रयोगवाद के प्रवर्तक कहा जाता है।

9.5 कठिन शब्दावली

अहेरी–शिकारी। **स्रष्टा**–समाज या संसार का निर्माता। **गति**–समय या क्रम। **झरते**–झड़ना। **दुर्बल**–कठिन। **इतराती**–इठलाना।

9.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. 1911।
2. हीरानंद वात्सायायन।
3. कितनी नाव में कितनी बार।

9.7 सन्दर्भित पुस्तक

रामस्वरूप चतुर्वेदी–अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या।

9.8 सात्रिक प्रश्न

1. अज्ञेय का जीवन परिचय लिखों।
2. अज्ञेय का साहित्यिक परिचय बताओं।

*****

इकाई–10
सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' : व्याख्या भाग

संरचना

10.1 भूमिका

10.2 उद्देश्य

10.3 सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' : व्याख्या भाग

स्वयं आंकलन प्रश्न

10.4 सारांश

10.5 कठिन शब्दावली

10.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

10.7 सन्दर्भित पुस्तक

10.8 सात्रिक प्रश्न

10.1 भूमिका

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' प्रयोगवाद के कवि रहे है उन्होंने अपने काव्य में भाषा की दृष्टि से अनेको प्रयोग किए हैं। काव्यभाषा में नवीन प्रयोग करने के कारण इनको प्रयोगवाद के प्रवर्तक कवि कहा जाता है।

10.2 उद्देश्य

1. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' के जीवन परिचय का बोध।
2. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' की रचनाओं का ज्ञान।
3. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' की रचनाओं में वर्णित विषय का ज्ञान।

10.3 सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' : व्याख्या भाग

❖ 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता परिचय का सार

कितनी नावों में कितनी बार 'अज्ञेय' की सर्वश्रेष्ठ कविताओं में से एक कविता है। इस कविता में उन्होंने विदेशी चकाचौंध की अपेक्षा भारतीय संस्कृति और भारतीय जीवन–मूल्य को सर्वश्रेष्ठ कहा हैं। कवि कहता हैं कि वह अनेक बार विदेश गया। वहां जाकर वे सत्य रूपी ज्योति की खोज करना चाहते थे परन्तु वहां से खाली हाथ वापस भारत लौटना पड़ा। विदेशों की चकाचौंध भरी दुनिया ने उसे यह अहसास दिलाया है कि सत्य की खोज वहां नहीं अपने देश भारतवर्ष में संभव है। इसी कारण कवि अपने देश भारतवर्ष एवं अपनी सनातन संस्कृति को विश्व में सर्वश्रेष्ठ मानता है।

कितनी नावों में कितनी बार : कविता

कितनी दूरियों से कितनी बार
कितनी डगमग नावों में बैठ कर
मैं तुम्हारी ओर आया हूं

ओ मेरी छोटी सी ज्योति।
कभी कुहास में तुम्हे न देखता भी
पर कुहासे की ही छोटी सी रूपहली झलमल में
पहचानता हुआ तुम्हारा ही प्रभा–मंडल।
कितनी बार मैं,
धीर, आश्वस्त अक्लांत
ओ मेरे अनबुझे सत्या कितनी बार ......

प्रसंग : प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय' द्वारा रचित कविता 'कितनी नावों में कितनी बार' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत कविता में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने विदेशी चकाचौंध की अपेक्षा भारतीय संस्कृति और भारतीय जीवन–मूल्य को श्रेष्ठ माना है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता 'कितनी नावों में कितनी बार' में कवि सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने अपने देश भारत की महता को स्पष्ट करते हुए कहा है कि मैं कई बार जीवन सत्य की खोज जीवन रूपी डगमगाती नावों में बैठकर विदेश में गया हूं। अर्थात् मैं सत्य की खोज हेतु विदेशों में गया, किन्तु मुझे वहां से निराश, अस्थिर मन से वापस भारत लौटना पड़ा। क्योंकि वहां पर मेरे मन की दुविधाएं, समस्याएं ज्यों–के–त्यों बने रहे। अर्थात् विदेश में जाकर सत्य खोजने में मैं असफल रहा है। कवि कहता हैं कि हे मेरी ज्योति रूपी नन्हीं आत्मा! मैं जीवन में उलझनों और द्वव्द्वों रूपी कुहासे के कारण तुझे न देख पाया परन्तु भारतवर्ष चमकदार वातावरण में रहकर तुम्हारी उज्ज्वलता और दीप्ति झलक दिखाई पड़ती हैं। उसमें मैं तुम्हारे उज्ज्वल रूप को पहचान लेता हूं और देखकर सन्तुष्ट हो जाता हूं। कवि कहता है कि अशांत, उलझनों और द्वव्दों रूपी कुहासे में तुम्हें देखकर मेरे मन में विश्वास उत्पन्न हो जाता है। कि भारतीय सनातन संस्कृति में उस अनबुझे सत्य को अनेक बार अनुभव किया है अर्थात् भारतीय सनातन संस्कृति ही संसार में सर्वोत्तम हैं।

विशेष

1. भारतीय सनातन संस्कृति की श्रेष्ठता का चित्रण किया है।
2. सरल एवं सहज भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।
4. आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग।

और कितनी बार कितने जगमग जहाज
मुझे खींचकर ले गए हैं कितनी दूर
किन पराए देशों की बेदर्द हवाओं में
जहां नंगे अंधरों को
और भी उघाड़ता रहता है
एक नंगा, तीखा, निर्मम प्रकाश
जिसमें कोई प्रभा–मंडल नहीं बनते
केवल चौंधियाते हैं तथ्य, तथ्य–तथ्य

कितनी बार मुझे
खिन्न, विकल, संत्रस्त
कितनी बार।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय' द्वारा रचित कविता 'कितनी नावों में कितनी बार' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत कविता में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने विदेशी चकाचौंध की अपेक्षा भारतीय संस्कृति और भारतीय जीवन–मूल्य को श्रेष्ठ माना है।

व्यायाख्या : प्रस्तुत कविता में कवि कहता है कि मैं विदेशों की चकाचौंध एवं जगमगाते दुनियां न जाने कितनी बार मुझे खींचकर अपनी तरफ ले गए। कवि कहता है कि मैं दुनिया की चकाचौंध एवं जगमगाते और बेदर्द हवाएं मुझे पराई लगती थी जहां पर नग्न अंधकार को तेज प्रकाश और भी नग्न करता था। अर्थात् विदेश में भारतवर्ष जैसा अपनापन शांति और सकून नहीं है। कवि भारतवर्ष और सनातन संस्कृति के महत्व को उजागर करते हुए कहता है कि भारतवर्ष में विदेशों के बराबर दिखावा नहीं है अर्थात् चकाचौंधमय वातावरण नहीं है। यहां प्रभामण्डलयुक्त एक ज्योति दिखाई देती है, किन्तु विदेशों की चकाचौंध में तो आलोक का कोई घेरा ही नहीं बन पाता, क्योंकि प्रकाश इतना तीव्र होता है कि आलोक का घेरा बना पाना असम्भव है। इसलिए उनके प्रति मन में कोई आत्मीय भाव नहीं जाग सका। कवि कहता है कि विदेशों में केवल तथ्यों और आंकड़ों पर बात की जाती है और ये आंकड़े मात्र चुधियाते ही रहते हैं। इन तथ्यों से साक्षात्कार करके में दुखी हूं। मेरी भावनाओं को चोट पहुंची है। जिससे में बैचेन हो उठा हूं। मैं यहां के जीवन के यथार्थ को देखकर भर से कांप उठा हूं। ऐसा एक बार नहीं कई बार हो चुका है।

विशेष

1. भारतीय सनातन संस्कृति की श्रेष्ठता का चित्रण किया है।
2. सरल एवं सहज भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।
4. आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग।

● कविता : दूर्वाचल

पार्श्व गिरि का नभ चीड़ो में
डगर चढ़ती उमंगों सी।
बिछी पैरों में नदी ज्यों दर्द की रेखा।
विहग–शिशु मौन नीड़ों में।
मैंने आंख भर देखा।
दिया मन को दिलासा–पुनः आऊंगा।
(भले ही बरस–दिन–अनगिनत युगों के बाद)
क्षितिज ने पलक सी खोली,
तमक कर दामिनी बोली
अरे यायावर! रहेगा याद?'

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय' द्वारा रचित कविता 'दूर्वाचल बार' में से लिया गया है।

संदर्भ : प्रस्तुत कविता में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रा के सौन्दर्य का वर्णन किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि –सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' पर्वतीय क्षेत्र के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहते है कि पहाड़ की ढलान पर ऊंचे–ऊंचे चीड़ के वृक्ष एक पगडंडी में खड़े है इस प्रकार खड़े है मानों आकाश को छूते दिखाई देते हैं। कवि पर्वत के दुःख को व्यक्त कर रहे है। कवि आगे कह रहे है कि ऊंचे–2 वृक्षों की शाखाओं पर पक्षियों के बच्चे चुपचाप अपने घोंसलों में सोए हुए है। कवि ने प्रकृति के इस अलौकिक सुन्दरता को देखकर मन ही मन प्रण किया कि मैं एक बार फिर इस दृश्य को देखने आऊंगा। कवि कहता है कि उसकी प्रतिज्ञा सुनकर मानों क्षितिज ने पलके झपकाई अर्थात् वहां पर बिजली चमकी। ऐसा प्रतीत होता है मानों चमकती हुई बिजली ने मुझसे पूछा, ''हे घुमक्कड़ पर्यटक, क्या तुम्हें अपना वायदा याद भी रहेगा?'' क्या तुम इस दृश्य को याद रखोगे? क्या तुम्हें अपना किया हुआ वायदा याद रहेगा?

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि ने पर्वतीय क्षेत्र के सौन्दर्य का वर्णन किया है।
2. सरल एवं सहज भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।
4. मानवीकरण अलंकार का प्रयोग।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का जन्म कब हुआ?
2. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' के पिता का क्या नाम है?
3. 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता के रचयिता कौन है?

10.4 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने अपने काव्य में भारतीय सनातन संस्कृति की महता को स्पष्ट किया गया है। कविता 'दुर्वाचल' में उन्होंने हिमालय की सुन्दरता को व्यक्त किया गया है।

10.5 कठिन शब्दावली

ज्योति– प्रकाश। **कुहासा**–ओस। **रुपहली**–सफेद सुन्दर। **अक्लांत**– ताजगी भरा मन, बिना थकान का। **आभा–मण्डल**– आलोक का घेरा। **जगमग**– रोशन, प्रकाशित। **बेदर्द**– क्रर। **निमर्म**– कठोर, दया–रहित। **विकल**–व्याकुल। **उघाड़ना**– नंगा करना। **पार्श्व**– ढलान। **डगर**– रास्ता। **तमक कर**– चमक केर, क्रोध से। **यायाबर**– घुमक्कड़, सैलानी।

10.6 आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. 1911 ।
2. हीरानंद शास्त्री।
3. 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'।

10.7 संदर्भित पुस्तक

1. रमेश ऋषिकल्प–अज्ञेय का काव्य।

10.8 सात्रिक प्रश्न

1. कितनी नावों में कितनी बार **कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।**
2. 'दूर्वाचल' कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।
3. 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का जीवन परिचय लिखिएं।

*****

इकाई–11
गजानन्द माधव मुक्तिबोध का जीवन परिचय

संरचना

11.1 भूमिका
11.2 उद्देश्य
11.3 मुक्तिबोध का जीवन परिचय
स्वयं आंकलन प्रश्न
11.4 सारांश
11.5 कठिन शब्दावली
11.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
11.7 सन्दर्भित पुस्तक
11.8 सात्रिक प्रश्न

11.1 भूमिका

गजानन माधव मुक्तिबोध की गणना हिन्दी के प्रगतिवादी कवियों में की जाती हैं, क्योंकि वे सर्वहारा वर्ग की पीड़ा को अभिव्यक्ति देने वाले कवि हैं।

11.2 उद्देश्य

1. मुक्तिबोध के जीवन का ज्ञान।
2. मुक्तिबोध की रचनाओं की जानकारी।
3. मुक्तिबोध की विशेषताओं का ज्ञान।

11.3 मुक्तिबोध का जीवन परचिय

मुक्तिबोध का जन्म 13 नवम्बर, सन् 1917 को श्योपुर मध्य प्रदेश में ब्राह्मण परिवार में हुआ था। मुक्तिबोध के पिता का नाम श्री माधव राव मुक्तिबोध था, जो तत्कालीन ग्वालियर राज्य के एक पुलिस अधिकारी थे। उनका परिवार वर्षों पूर्व महाराष्ट्र से श्योपुर आ बसा था। मुक्तिबोध के पिता अत्यन्त कर्त्तव्यपरायण, न्यायाप्रिय, ईमानदार, निडर और दबंग सवृत्ति के व्यक्ति थे। पिता के ये सब गुण मुक्तिबोध को विरासत में मिले थे।

मुक्तिबोध का बचपन बड़े लाड़–प्यार से बीता। इनके दो भाइयों की मृत्यु के कारण इन्हें इनके माता–पिता अत्यधिक स्नेह करते थे। इनकी हर इच्छा को सिर–माथे रखा जाता था। इसी कारण इनका स्वभाव अत्यन्त जिद्दी हो गया था।

ग्वालियार स्टेट से मिडिल पास करने के बाद इन्होंने मैट्रिक और इण्टर की परीक्षा उज्जैन से और बी0ए0 होल्कार कॉलेज इन्दौर से किया। मुक्तिबोध के पिता जी उन्हें वकील बनाना चाहते थे ताकि धन के साथ–साथ सम्मान भी बढ़े और सामाजिक प्रतिष्ठा भी बनी रहे। लेकिन मुक्तिबोध के मन में धन की लालसा और सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रति कोई लालसा नहीं थी अतः वे मध्यापक बन गए। शमशेर बहादुर के शब्दानुसार– "वह कमाना चाहता था ज्ञान–धन नहीं, खोज रहा था। सम्मानों की रूढ़ियां नहीं, नयी दृष्टि और अनुभव नये युग के अनुभव और काव्य की विलक्षण अनुभूतियां।" मुक्तिबोध बचपन से जिज्ञासु प्रवृत्ति के थे। उन्हें ज्ञानार्जन क गहरी लगन थी। उन्हें मनोविज्ञान, तर्कशास्त्र और दर्शन की समस्याओं में रस मिलता था। 20–21 वर्ष की आयु में ही उनका सरल हृदय भावुक और जिज्ञासु युवक एक ढहती परम्परा और आने वाले युग के बीच खड़ा अपने चारों ओर देख रहा था। उपेक्षितों–दलितों के लिए उनकी साहनुभूति तेजी से बढ़ रही थी कि अचानक उनके जीवन में प्रेम का आगमन हुआ। ऐसा प्रेम जो गहरा और सुन्दर होने के साथ–साथ स्थाई भी था।

मुक्तिबोध का सामाजिक विद्रोह उनके विवाह के रूप में पहली बार प्रकट हुआ। सन् 1939 में उन्होंने अपनी पारिवारिक रूढ़िवादी परम्पराओं की चिन्ता न करते हुए सभी सामाजिक अवरोधों को दर–किनार कर प्रेम–विवाह कर लिया। स्पष्ट है कि पूरे परिवार तथा सम्बान्धियों का विरोध उन्होंने झेला, और यह विरोध कभी कम नहीं हुआ। इसी तरह मुक्तिबोध ने पिता की इच्छा की विरूद्ध अपने व्यवसाय का चयन किया। अपने जीवन की शुरूआत इन्होंने एक मध्यापक के रूप में की। जीविका के लिए के सुजालपुर, उज्जैन, कलकत्ता, इंदौर, नागपुर, जबलपुर आदि अनेक स्थानों पर भटकते रहे परन्तु कहीं भी उन्हें सन्तोष की प्राप्ति नहीं हुई। अपने जीवन के अन्तिम काल में मुक्तिबोध राजानन्द गांव में रहे। उनके जीवन का सबसे अच्छा समय यहीं बीता। इसी समय इनकी 'चांद का मुंह टेढ़ा है' की अधिकांश कविताओं का जन्म हुआ। शिक्षक, पत्रकार,पुनः शिक्षक, सरकारी और गैर–सरकारी सभी प्रकार की नौकरियां मुक्तिबोध ने की। इनका जीवन संघर्ष भरा रहा। आर्थिक विपन्नताओं को भी झेला।

मुक्तिबोध का जीवन अत्यन्त निष्कपट, निश्चछल एवं सुगम था किन्तु उनका व्यक्तित्व उनकी रचनाओं की तरह बहुआयामी था। व्यक्ति की बनावट के विषय में स्वयं मुक्तिबोध का कथन है कि जो परिवार के मूल्य होंगे वे ही जीवन में होंगे और वे साहित्य में भी अवश्य झलकेंगे। सच तो यह है कि साहित्य में आकर उनकी रूपरेखा बदल जाएगी किन्तु उनके तत्व नहीं बदलते।

मुक्तिबोध का व्यक्तित्व एक असाधारण व्यक्तित्व था, उन्होंने अपनी असाधारणता को अपने दैनन्दिन जीवन में एक अहंकार के रूप में कभी व्यक्त नहीं होने दिया। उनका सारा जीवन एक जूझते सिपाही की तरह बीता। उनकी वैयक्तिक वृत्तियों द्वारा, भावनाओं और विचारों द्वारा जीवन के हर अपूर्ण पहलू के प्रति एक जोरदार निषेध वाक्त किया। उनके व्यक्तित्व के किसी एक अंश को अथवा जीवन के किसी क्षेत्र के प्रति निषेध नहीं था। उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व अपने सम्पूर्ण चैतन्य के साथ भावनात्मक प्रतिक्रिया द्वारा उसका मूल्यांकन कर देता था। उन्होंने मानवीन दुर्बलताओं का निषेध किया मानवता का नहीं। कट्टर मार्क्सवादी होते हुए भी मानवी जीवन का केवल वर्गीय तत्व की दृष्टि से उन्होंने कभी नहीं देखा। उसकी सम्पूर्ण जटिलता को समझने में लगे रहे। उसमें खोए हुए मानव को वे अन्त तक खोजते रहते। जीवन की असंगतियां उसमें भावक व्यक्तित्व को तो तोड़ नहीं पाई। इसका कारण था उनके व्यक्तित्व की आधारशिला मानवता।

❖ **रचनाएंः** मुक्तिबोध ने छायावाद और प्रगतिवाद की संधि–रेखा से अपनी काव्य यात्रा प्रारम्भ की। यही कारण है कि प्रगतिशील काव्य परम्परा की ओर झुकाव होते हुए भी छायावादी काव्य परम्परा को पूर्ण रूपेण नहीं नकार सके। प्रथमतः मुक्तिबोध 'तार सप्तक' के कवि के रूप में हिन्दी साहित्य में प्रविष्ट हुए। 'तार सप्तक' का प्रथम संस्करण अज्ञेय जी के सम्पादन में सन् 1943 में प्रकाशित हुआ था। मुक्तिबोध ने सन् 1935 में लिखना रचनाओं ने साहित्य में एक खलबली मचा दी। मुक्तिबोध के सामने उनका कोई काव्य संग्रह प्रकाशित न हो सका। उनकी मृत्यु के पश्चात् सन 1964 में 'चांद का मुंह टेढ़ा है' तथा 1980 में **'भूरी–भूरी खाक धूल'** छपा। इस तरह उनका स्वनाकाल सन् 1935 से सन् 1964 तक के विभिन्न सामाजिक, राजनैतिक आन्दोलनों से प्रभावित हुआ लगभग 30 वर्ष की अवधि तक विस्तरित है। जहां तक इन तीनों काव्य–संकलनों की विकास–यात्रा का प्रश्न हैं इनके कथ्य, शिष्य एवं भाषा–शक्ति के बदलाव के आधार पर यही कह सकते हैं कि 'तारसप्तक' की कविताएं कविमानस की प्रारम्भिक प्रतिक्रियाएं है जिनमें छायावाद का प्रभाव शिल्प और भाषा शैली पर जितना है उतना कथ्य पर नही। यहां छायावाद से मुक्तिबोध की कविता के कथ्यगत साम्य को मात्र 'वैयक्तिकता' एवं 'अमूर्त मानववाद' के चित्रण के संदर्भ में ही रेखांकित किया जा सकता है। 'असफल प्रेम की निराशाजनित दार्शनिक परिणति' मुक्तिबोध की सप्तकीय कविता में नहीं है।

मुक्तिबोध जितने भावुक, अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के सरल और उदार थे उतने ही आत्मकेन्द्री और अपनी हर जिद्द पर अटल रहने वाले थे। उन्होंने अपने जीवन में जो कुछ ग्रहण किया समूचे व्यक्तित्व से गृहण किया। मानव

जीवन की ओर उन्होंने सदैव संस्कारित करुणा भाव से देखा। छल, स्वार्थपरता उनके पास बिल्कुल नहीं थी। मुक्त्बिोध विद्रोही प्रवृत्ति के थे। उन्होंने किसी भी चीज से समझौता नहीं किया। स्वास्थ्य के नियमों और अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों से भी नहीं। वे 'Rebel' थे इसलिए निर्वासित (Exile) भी थें इसी वजह से शायद घोर एकाकी भी थे। माता–पिता व भाइयों के सम्बन्ध में उनका प्रेमभाव गहरा व अखण्ड बना रहा। किन्तु उनकी आत्यंतिक आत्मनिष्ठ प्रवृत्ति और उग्र आत्माभिमान उन्हें प्रत्यक्ष पारिवारिक जीवन से और उनके बन्धनों से दूर धकेल दिया।

इस प्रकार एक ओर मानवीय जीवन के परिवर्तन के प्रति असीम आस्था, उत्पीड़ित मानव के भविष्य के प्रति निष्ठा, उपेक्षितों के प्रति गहरा लगाव और दूसरी ओर यह जीवन के अनेक सतहों पर प्रतीत होने वाली भयानक विसंगति तथा अकेलापन थे उनके व्यक्तित्व के पहलू थे। अपने 47 वर्ष के जीवन में मुक्तिबोध ने जमकर संघर्ष किया और हिन्दी काव्य संसार में अपना एक प्रतिष्ठित स्थान बना लिया। 11 सितम्बर 1964 को इनका देहावसान हो गया।

❖ मुक्तिबोध की काव्यगत विशेषताएं

किसी प्रेरणा विशेष से कवि–मानव में उद्बद्ध होने वाली भावानुभूतियों की शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्ति ही काव्य–रचना का रूप धारण करती हैं। इससे काव्य के दो पक्ष 1. भाव अथवा कला पक्ष 2. अभिव्यक्ति पक्ष हो जो हैं। इन्हीं के साम्मिलित रूप को काव्य–कला कहा जाता है। इसी से काव्य रचना का वैशिष्टय और काव्यगत विशेषताएं सम्बद्ध हुआ करती हैं। मुक्तिबोध की कविताओं के अध्ययन से उनकी विशिष्टताएं उभर कर सामने आती है। मुक्तिबोध का जीवन आन्तरिक्ष एवं बाह्य संघर्षों से परिपूर्ण रहा है और उनकी कविताएं उनके इस व्यापक संघर्ष का निरूपण करती हैं– व्यक्ति के सीमित दायरे में नहीं समाज के विशाल कैनवास पर। इसमें सन्देह नहीं कि इस प्रयास में उनकी कविताएं जटिल हो गई हैं, लेकिन निःसन्देह मुक्तिबोध की यह एक विशिष्ट उपलब्धि है।

मुक्तिबोध की कविता तीन धरातलों पर अपने आपको सम्प्रेषित करती है। पहला धरातल यथार्थता के परिदृश्य का धरातल है, जहाँ जीवन की वास्तविकताएं अनुभूतियों का संस्पर्श करती हुई ठोस परिदृश्य को अंकित करती है। दूसरा इसी यथार्थ की वायवीकृत भूमि है जिसमें यथार्थ परिदृश्य और यथार्थ से जुड़ी अनुभूतियां स्वप्न–प्रक्रिया से गुजरती हुई एक ऐसी धुंधले हल्के कुहासे से अवृत स्वप्निल वायषीय परिदृश्य का निर्माण करती हैं यहां भी मुक्तिबोध की कल्पना यथार्थ से अपने आपको काटती नहीं है, अन्तर केवल इतना है कि पहली स्थिति में मुक्तिबोध की चेतना ठोस जमीन पर अपने–चरणों को स्थापित किए हुए है और उनकी कवि दृष्टि इस यथार्थ की सही परिप्रेक्ष्य देने की चेष्टा में क्षितिज की सीमा के विस्तार तक घुमती रहती है। दूसरी स्थिति में क्षितिज की सीमा लुप्त हो जाती है। और आकाशीय परिधि में घूमती हुई उनकी कवि दृष्टि सारे यथार्थ को एक स्वनिल वायवीकृत रूप में परिवर्तित कर देती है।

मुक्तिबोध की कतिवाएं युगीन जीन का भयावह चित्रण करती हैं जिसमें व्यक्ति की पीड़ा, दुख, घुटन, टूटन, छटपटाकृट, वर्तमान स्थितियों के प्रति गहरा असन्तोष और आक्रोश है। ये बातें अन्य समाकालीन कवियों में भी है लेकिन मुक्तिबोध के कवि की विशेषता इसमें है कि इन सबके होते हुए भी उनमें निराशा और आस्था का स्वर नहीं है। कवि स्थितियों की विषमताओं और विसंगतियों से निराश और हताश नहीं होता है। वह भविष्य के प्रति आशावान और निष्ठावान है। वर्तमान भयावह है, अन्धकार पूर्ण है, लेकिन भविष्य के प्रस्फुटन में तड़ित आलोक की सुनहली किरणें हैं। मुक्तिबोध का कवि मानवता की विजय को आश्वस्त करता है– मुक्तिबोध सदा जीवन के प्रति आस्थावन रहे हैं पूरी निष्ठा से उसे अभिव्यक्ति देने का भी उसने प्रयत्न किया है। त्रस्त मानवता के प्रति उन्होंने सदा अपनी आत्मव्यथा स्पष्टतापूर्वक उगली परन्तु इसके साथ ही साथ सदैव विजय को आश्वस्त किया। यह आशावादी स्वर मुक्तिबोध को अन्य युगीन कवियों में वैशिष्टय प्रदान करता है।

मुक्तिबोध ने प्रायः नए–नए विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है। इनके काव्य–विषय अधिकांशत सामाजिक हैं– आज के समाज से सामाजिक जीवन की विद्रुपता, असंगति, मानवीय मूल्यों को विनाश, यंत्र–युग के परिणामस्वरूप मानव मन में निर्माण हुए अनेक प्रकार के संघर्ष आदि उनकी कविताओं में मुखरित हुए मिले है। ब्रह्म राक्षस का संत्रास, अन्धेरे में घिरा मानव–मन, गांधी और तिलक की मूर्तियों पर बैठे हुए (समाज के अधिष्ठाता) धुग्धु, नाना कैदों में घिरा आज का त्रासित मानव आदि विषय हमारे इसी मत को सत्य सिद्ध करते हैं।

मुक्तिबोध का कवि सदैव असत से सत् अज्ञान से ज्ञान और अंधकार से आलोक की ओर प्रवृत्त होता है। मुक्तिबोध को मानव–नियति पर पूर्ण विश्वास है जो विषय परिस्थितियों में भी सत के मार्ग की ओर ही प्रवृत्त होती है। मुक्तिबोध ऐसे जीवन मूल्यों, आत्म–सत्य रूपी मणिरत्नों, धुति–किरणों को तलाशते हैं जो समाजोपयोग हो सके, मानव जीवन को आभासित और आलोकित कर सके।

उनकी कविताओं की एक बहुत बड़ी–विशेषता उनका भयावह एवं तिलस्मी वातावरण है; जिसके निर्माण में मुक्तिबोध को अपूर्व सफलता मिली है। उनकी अधिकांश कविताओं में सैनिक क्रान्तियों और षड़यन्त्रों का आतंक और सन्देह से भरा वातावरण होता है, जेल, राइफल, कारतूस, युद्ध के नक्शे, भभकते हुए अक्षरों के हड़ताली पोस्टर उसे रूपायित करते हैं और ऐय्यारी और तिलस्मी तत्वों का प्रयोग, जैसे पुराने महल, गुप्त ड्राअर, गद्दियों, छिपाए–सिये हुए, खून रंगे पत्र, समुद्री डाकू, डूबे हुए शहर, उसे और अधिक रहस्यपूर्ण तथा आतंकपूर्ण बना देता है। कभी–कभी इस वातावरण का निर्माण वे लोकजीवन के अविवेकपूर्ण पौराणिक, अन्धविश्वासों, दन्तकथाओं आदि तत्त्वों के संयोजन से भी करते हैं। बरगद, बावड़ी, एकान्त त्यक्त मन्दिर टूटे हुए खंडहरों के बुर्ज पर एक धुग्धु, ब्रह्मराक्षक, भूत–प्रेत, जादूगर, यक्ष, ओरांगउटांग आदि बिम्ब उनकी कविताओं में कई बार आए हैं। उनकी कविताओं में जो एक रहस्यमय तिलस्मी वातावरण मिलता है, वह सम्भवतः इसलिए कि उनके पिता पुलिस में थे और बचपन में मुक्तिबोध देखा करते थे अपने पिता को कभी किसी गुप्तचर का पीछा करते, कभी किसी को गिरफ्तार करते, षडयन्त्र करते। उसी बचपन की छाप उनके हृदय पर रह गयी होगी, जिसके कारण उनकी कविताओं में ऐसा वातावरण मिलता है। जिन वस्तुओं के प्रति उनकम मेन में भय था, उसी का चित्रण उनकी कविताओं में हुआ है। जिसके कारण उनकी कविताओं का वातावरण भयानक हो गया है। कारण कुछ भी रहा हो इससे मुक्तिबोध की अपूर्व क्षमता का परिचय मिलता है।

मुक्तिबोध का काव्य संघर्ष का काव्य है यह संघर्ष है तत्त्व, अभिव्यक्ति की सक्षमता तथा दृष्टि–विकास के लिए। दृष्टि विकास के लिए संघर्ष तात्पर्य कवि के जीवन–जगत के साथ–साथ व्यक्ति और समाज, सामाजिक वैषमयपरक वितंडावाद, पुराने और नए आदि कई प्रकार के संघर्षो से भी उसका काव्य ओत–प्रोत है। सच तो यह है कि मुक्तिबोध के काव्य समूची मानवता और विश्व–मन कराहते हुए मिलते है। यह संघर्ष मुक्तिबोध के शब्दों में एक ट्रैजेडी है–

"पिस गया वह भीतरी
और बाहरी दो कठिन पाटों बीच,
ऐसी ट्रेजेडी है नीच।"

मुक्तिबोध की कविताएं उनके विद्रोही व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति करती है। 'मैं तुम लोगों से दूर हूँ' 'एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्म कथन कहने दो उन्हें जो ये कहते हैं' आदि कविताओं में इसका प्रखर रूप दृष्टि गत होता है।

अपने वैयक्तिक जीवन और तदजनित काव्य में दोनों में ही मुक्तिबोध ने आज के सर्वव्यापी संत्रास, शोषण, मनः संकट और अन्तर्मन की आंखें से युग–जीवन को देखा, व्यक्ति से लेकर विश्व, आत्मा से परमात्मा तक चिंतन किया और जीवन यथार्थ के कटु को अपने काव्य में अभिव्यक्ति दी। सैद्धान्तिक रूप से वे मानते हैं कि काव्य का सम्बन्ध वास्तविक जीवन जगत के साथ है। जीवन को उसके यथार्थ रूप में ग्रहण कर उसकी उसी रूप में अभिव्यक्ति आवश्यक है। फलतः मुक्तिबोध का यथार्थ आदर्श की प्राण–प्रतिष्ठा का मूलाधार भी यही है। सच तो यही है कि यथार्थ प्रधानता मुक्ति–बोधीय काव्य की केन्द्रीय धुरी है। यथा –

"पहाड़ी इलाका, सांमजस्य है सूखा शिलीभूत, भूख है दिल में,
दिमाग को फाका, झूठी हैं बुद्धियां, सब आत्मशुद्धियां झूठीं,
साझे हैं खतरनाक, समझौते भयानक, बदरंग खाका।"

मुक्तिबोध की कविताएं उनके विद्रोही व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति करती है। 'मैं तुम लोगों से दूर हूँ,' 'एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्म कथन 'कहने दो उन्हें जोये कहते हैं' आदि कविताओं में इसका प्रखर रूप दृष्टिगत होता है।

मुक्तिबोध की कविताओं की एक अन्य प्रमुख विशेषता अखण्ड काल चेतना का वह रूप है जिसमें भूत, भविष्य एवं वर्तमान का चेतन–विभाजन लुप्त हो जाता है और मनुष्य अखण्ड काल में पहुंच जाता है जहां से वह भूत, भविष्य एवं वर्तमान को एक ही क्षण में एक ही साथ देख सकता है, रूपायित कर सकता है। मुक्तिबोध की कविताओं में काल के नैरन्तर्य की यह स्थिति सर्वत्र उपलब्ध होती है तभी वह भूत, भविष्य एवं वर्तमान का एक साथ, एक ही समय में रूपायन करते हैं। इस प्रतीति में वर्गसों की 'काल–दृष्टि' का प्रभाव स्पष्ट ही उभरता है।

मुक्तिबोध उच्च कोटि के व्यंग्यकर्त्ता है। इस दृष्टि से वे कबीर और निराला की परम्परा में आते हैं। उनके व्यंग्य में खीज और अकुलाहट भी है। और तीखी–तेज वक्रता भी। इस सम्बन्ध में वे कटु से कटुतर होते गए हैं।

भाषा की चित्रात्मकता इन कविताओं की एक अन्य विशिष्टता है। शब्द के बाद शब्द आते जाते हैं ओर जैसे एक चित्र में रंग भरता जाता है। और भाव की ईकाई जैसी ही पूरी होती है, चित्र मानों सजीव हो जाता है। यह चित्र केवल शब्दों का चित्र नहीं होता परन्तु रंगों का, स्पंदन का, और चेतना का चित्र होता है। उसमें चेतना झांकती है, भाव दुलारता है और मांसलता हमें आकर्षित करती है। उनकी कविताएं उनके मानवतावादी चिन्तन को सशक्त रूप में प्रस्तुत करती है।

हिन्दी साहित्य जगत में मुक्तिबोध और उनका काव्य अधिक चर्चित रहा है। गहन मानसिक सवेदनाओ, जटिल गूढ़ बिम्ब और अति की बौद्धिकता आदि में वस्तुतः उनकी कविताओं को आनेवाले कल से लेकर नागात्मक तक तो बनाया साथ ही गहन व्यंग्यात्मकता, फैटेन्सी की सबलता और युगीन यथार्थ एवं गहन भाव भाषा ने उसको आज की जीती जागती कविता के रूप में प्रस्तुत किया है। वस्तुतः मुक्तिबोध का काव्य और उनकी काव्यकला अपने आप में विशिष्ट है साथ ही कई अच्छी–बुरी विशेषताओं से युक्त भी है। उनकी अनुभूति और अभिव्यक्ति नयी भी है और आश्चर्यपूर्ण भी उनकी संवेदना और सौन्दर्य अपने आप में युगधर्मी भी है और युग से बढ़ कर भी।

मुक्तिबोध के साहित्य में सर्वत्र भारतीयता का परिवेश उपलब्ध होता है। भारतीय जन–जीवन उनके भाव और चिन्तन पर छाया हुआ है। मुक्तिबोध चिन्तन के स्वर पर मार्क्सवाद के प्रति भी सम्बद्ध हैं। वे कबीर आदि कवियों की तरह रूढ़ियों और अन्धविश्वासों के आलोचक हैं लेकिन भारतीय भूमि और भारतीय जन–जीवन उनके भाव और चिन्तन का केन्द्र है, इसमें कोई सन्देह नहीं। मुक्तिबोध पढ़े–लिखे जागरूक कवि हैं। वे साहित्य, समाज और ज्ञान की दूसरी शाखाओं से जुड़े रहने का बराबर प्रयत्न करते रहे हैं।

❖ मुक्तिबोध की भाषा शैली

प्रत्येक कवि अथवा लेखक ऐसी भाषा का निर्माण करने का प्रयास करता है, जो उसके भावों एवं विचारों के अनुरूप हो तथा जिसके द्वारा वह उन्हें सशक्त अभिव्यक्ति दे सके। इसके लिए भाषाा का सक्षम एवं समर्थ होना नितान्त आवश्यक है। मुक्तिबोध भाषा के महत्त्व को भली–प्रकार जानते थे। मुक्तिबोध ने अभिव्यक्ति–सम्पदा की प्राप्ति के लिए निरन्तर संघर्ष किया है। उन्होंने एक–एक कविता को इतनी बार लिखा कि कभी–कभी कविता का प्रारूप तक बदल गया है। मुक्तिबोध की एक रचना है जिसकी प्रथम पंक्तियां हैं–

"बिना तुम्हारे बंजर होगा आसमान,
ऊजड़ होगी सारी जमीन।"

ऐसा वह तब करते थे जब तक कि वह स्वयं उसकी अभिव्यक्ति से सन्तुष्ट नहीं हो जाते थे; सत्य भी यही है कि वे अपनी कविता की अभिव्यक्ति से पूर्ण सन्तुष्ट कभी नहीं हुए। मुक्तिबोध का यह प्रयास एवं अभ्यास भाषा के रचनात्मक प्रयोग के प्रति उनकी चेतना का ही परिचायक है।

मुक्तिबोध की भाषा में विभिन्न भाषाओं की शब्दावली का प्रयोग हुआ है। अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए जिस भाषा का जो भी शब्द अनुकूल और उचित लगा, मुक्तिबोध ने निस्संकोच उसका उपयोग किया। मुक्तिबोध ने अपनी व्याक्तिगत अभिव्यक्ति शैली के विकास के लिए संस्कृत, उर्दू, अरबी–फारसी, मराठी तथा अग्रेंजी भाषाओं की शब्दावली का खुलकर प्रयोग किया है। भाषा की मौलिकता मुक्तिबोध की अपनी विशेषता है।

अंग्रेजी के शब्दों को मुक्तिबोध ने अपनी भाषा में सहजता एवं तत्परता से प्रयुक्त किया है। अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग 'चांद का मुंह टेढ़ा है' 'चमक की चिनगारियां' और 'अन्धेरे में' आदि कविताओं में आसानी से देखा जा सकता है। केवल शब्द ही नहीं बल्कि अंग्रेजी के वाक्यों का प्रयोग भी उन्होंने सफलतापूर्वक किया है।

"स्क्रीनिंग करो मिस्टर गुप्ता
क्रास एक्जामिन हिम थॉरोली।।"

जहां–जहां अंग्रेजी शब्दों के अनुवादर से भाव बिगड़ते हैं वहां पर मुक्तिबोध ने उन शब्दों को ज्यों का त्यों प्रयोग किया है, यथा–

"एक स्प्लिट सेकण्ड में भात साक्षातकार।"

कहीं–कहीं हिन्दी संज्ञा के लिए मुक्तिबोध ने अंग्रेजी विशेषण का प्रयोग किया है और कहीं–कहीं इसका उल्टा। जेसे–ट्रंक–काल–सुरों में, रायफल गोली, हड़ताली–पोस्टर, रेल–एक्सीडेंट, कोलतार–पथ आदि, मुक्तिबोध ने निःसंकोच अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है। फलतः भाषा में एक नया निखार आया है।

मुक्तिबोध ने उर्दू शब्दों का प्रयोग भी अपनी रचनाओं में सफलतापूर्वक किया है। मुक्तिबोध ने उर्दू के प्रचलित एवं कहीं–कहीं अत्यन्त कलिष्ट शब्दों का प्रयोग भी अपनी कविताओं में बड़ी आसानी से किया है और इस तरह किया है कि चाहे एक बार शब्द का अर्थ स्पष्ट न हो किन्तु भाव व्यक्त करने में वह कहीं पर भी बाधा उपस्थित नहीं करता। उर्दू के शब्दों को संस्कृत के शब्दों के साथ रखने में भी उन्होंने कोई कठिनाई अनुभव नहीं की और न ही नौसिखिए हिन्दी कवियों की तरह उर्दू से कभी परहेज़ किया–

'व्यक्तित्व वह कोमल स्फटिक प्रासाद सा,
प्रासाद में जीना
व जीने की अकेली सीढ़ियां
चढ़ना बहुत मुश्किल रहा।'

इसी तरह अनेक उर्दू शब्द जैसे– वाददात, सीने, फासला, जमाना, आसमानी, सरीखा, महसूस, नाखुन, सन्दूक, जादूई, जादुई, जिन्दा, नुकीला, मशाल, दफ्तर, अजीब आदि का प्रयोग किया है।

मातृभाषा का ठेठ रूप मुक्तिबोध के शब्द–समूह में ही नहीं उच्चारण में भी है। नक्काशीदार, हकाल, दिया गजर, कंदील, प्राथमिक शाला जैसे शब्दों में मातृभाषा का ठेठ रूप यह वाक्त करता है कि मुक्तिबोध रचना गहराई में जाकर अपनी परिचित शब्दावली के निकट हो जाते हैं।

मुक्तिबोध ने तेज़ो से बदलती इस्पाती तथा वैज्ञानिक दुनियां से भली–भान्ति परिचित थे, वे एक ओर प्राक्तन बावड़ी, ब्रह्मराक्षश, भूत–प्रेत, अन्धेरी गुफाओं का प्रयोग का अपनी परम्परा से सम्पृक्त हुए हैं तो दूसरी और सर्च–लाइट, मेगजीन, फास्फेट, यूरेनियम, रेडियम, गैसलाइट, टैंक, ऑक्सीजन, फ्यूज ब्लब, ट्रंककॉल, इलेक्शन आदि अत्याधुनिक वैज्ञानिक दुनिया के शब्दों का प्रयोग कर कविता की भाषा को नया तेवर प्रदान किया है। आधुनिक विज्ञान के 'रेडियो सक्रिय' तत्त्वों का भी उल्लेख मुक्तिबोध ने किया है–

'मणि तेजस्क्रिप रेडियोएक्टिव रत्न भी बिखरे।'

मुक्तिबोध में जहां एक ओर संस्कृतनिष्ठ सामासिक पदावली का प्रयोग किया है वहीं दूसरी ओर दलिद्दर, कुट्ठर, जुगाली, गरबीला, गिरस्तिन, ठठरी, ठण्टा, टोटके, बिलम, ठसक, जैसे तदभव तथा देशी शब्दों का भी भरपूर प्रयोग किया है। चटियल, गठियल, कड़ियल, हढ़ियल जैसे लोक भाषा के शब्दों का भी मुक्तिबोध के काव्य में अभाव नहीं है। मुक्तिबोध ने 'चिलक' शब्द का भी अनेक बार प्रयोग किया है जो मालवा का बहुत प्रचालित शब्द है।

मुक्तिबोध भावानुसार शब्दों की योजना करते हैं। मानवीय संवेदना, प्यार और आत्मीयता की बात कहने के लिए कोमल–कोमल शब्दों का आयोजन करते हैं। शोषण और अत्याचार की बात कोमल और कठोर शब्दों में व्यंग्य और विद्रूप को व्यक्त करने के लिए तीक्ष्ण और पथरीले शब्दों का प्रयोग करते हैं–

'माता पिता के संग बीते हुए
भयानक चिन्ताओं के लम्बे काल–खण्ड
में से उठ–उठ कर
करुणा में मिली हुई गीली हुई गूंजे कुछ
मुझे दिला देती है नयी ही बिरादरी' मुझ याद आते हैं

व्यंग्य करने में भी मुक्तिबोध सिद्धहस्त हैं– उनके व्यंग्य की मार बड़ी तीक्ष्ण होती है–

'देख उसने कहा कि वाह–वाह
रात के जहां पनाह
इसीलिए आज–कल
दिन के उज़ाले मे भी अन्धेरे की साख है
रात्रि की कांखों में दबी हुई
संस्कृति–पाखी के पंख है सुरक्षित
पी गया आसमान' –चाँद का मुँह टेढ़ा है।

ध्वन्यात्मकता और वातावरण निर्माण में सहायक शब्दों का इतना सुन्दर प्रयोग मुक्तिबोध ने किया है कि देखते ही बनता है। यथा–

'स्वरकार या वादक
तजुर्बेकार साजिन्दे
ख्यालों के उमड़ते दौर में से सहसा
निजी रफ्तार इतनी तेज करते हैं–
थपाथप पीटते हैं जोर से तबला ढपाढप.......'

उपर्युक्त पंक्तियों में शब्दों के द्वारा मुक्तिबोध ने तूफानी वातावरण का एक सजीव चित्र अंकित कर दिया है। मुक्तिबोध के काव्य में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं–

'टीले के सोने में, भभक कर, अड़ता है
जिद–भरा कोई मजबून
सन्ना कर मारता है तेज–तेज
व्यंग्यों की ईट,.............. चाँद का मुंह टेढ़ा है

एक स्थान पर तो मुक्तिबोध ने पूरे हठयोग को अपनी शब्दावली में उतार दिया है–

'तब धरती की महानाड़ियां
इड़ा–पिंगला फड़क रही थी,
और सुणुम्ना के अभ्यन्तर
उन अगांरी प्राण–पंथों पर
हम भी धूम रहे थे मानो।'

उनकी काव्य–भाषा की एक अन्य विशेषता है विशिष्ट और सामान्य को एक साथ विभिन्न शब्दों में चित्रित करना। इससे उनकी भाषा में प्रखरता आ गई हैं और वह दोनों प्रकार की संवेदनाओं को सम्प्रेषित करने में सफल है–

मैं कनफटा हूँ हेटा हूँ। शैव्रलेट डाज के नीच मैं लेटा हूँ

तेलिया लिवास में पुरजे सुधारता हूँ
तुम्हारी आज्ञाएं ढोता हूँ।

मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग ने भी उनकी काव्य भाषा को समृद्ध बनाया है। मुहावरे भाषा सौन्दर्य के साथ–साथ अर्थ को भी गम्भीर बनाते हैं और अपने आप में काव्य की इकाई से लगते हैं–

जब तारे सिर्फ साथ देते, पर नहीं हाथ देते पल भर।

मुक्तिबोध की काव्य–भाषा में चित्रांकन की अद्‌भुत क्षमता है। शब्द के बाद शब्द आकर चित्र में रंग भरते जाते हैं और भाव की इकाई जैसे ही पूरी होती है चित्र भी सजीव हो जाता है। प्रत्येक चित्र में चेतना झांकती है और भाव दुलारता है। मनोदशा का एक चित्र देखिए–

गहरा पड़ गया और धंस गया इतना
कि ऊपर प्राण भीतर घुस आया
लगी है झनझनाती आग
लाखों बई कांटों ने अचानक काट खाया है।

मुक्तिबोध शब्दों द्वारा वातावरण तैयार करने में अद्वितीय हैं। पाठक कविता पढ़ते समय अपने परिवेश को भूल कविता के वातावरण निर्मित कर देता है कि पाठक उसमें डूब जाता है–

तिलस्सी खोह का शिलाद्वार
खुलता है धड़ से
घुसती है लाल–लाल मशाल अजीब–सी
अन्तराल–विवर के तम में
लाल–लाल कुहरा
कुहरे में, सामने रक्तालोक स्नात पुरुष एक रहस्य साक्षात्!

मुक्तिबोध की कविता संगीत का निषेध करती है, अतः उनके छंद में यतिगति को निर्वाह प्रायः नहीं हुआ है। उन्होंने अपनी लम्बी कविताएं प्रायः मुक्त छन्द में लिखी हैं। हिन्दी में छंद को तोड़ने का प्रयास निराला से आरम्भ होता है पर निराला आदि कवियों ने अपने मुक्त छन्द में संगीत और लय को नहीं त्यागा। इसके विपरीत मुक्तिबोध का मुक्त छन्द लयात्मकता से पूर्णतः मुक्त है। 'तार सप्तक' की उनकी कविताओं में छन्दोबद्धता पाई जाती है, पर अन्त तक आकर उनकी कविता छन्दहीन हो गई है, उसमें गद्यात्मकत आ गई है। वस्तुत+ मुक्तिबोध ने अपने छन्द–निर्माण का कार्य भाषा की नाट्‌कीयता से लिया है। उनकी कविताएं संगीतात्मक न होकर नाट्‌यात्मक है।

काव्य भाषा कवि के अन्तर्गत और युग की नई योजना से संबद्ध होती है। नयी चेतना और अपनी भावभूमि को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने के लिए कवि को भाषा की परम्पराओं को, प्रचलित प्रयोगों को, व्याकरण के नियमों को तोड़ना पड़ता है, नए प्रयोग करने पड़ते हैं। मुक्तिबोध की चेतना, उनकी भावभूमि, उनकी जीवन–दृष्टि नई है, वह विद्रोही कवि हैं इसलिए उनकी भाषा भी परम्परा को तोड़ने वाली, लीक से हटकर चलने वाली प्रयोगशील भाषा है।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. मुक्तिबोध का जन्म कब हुआ?
2. मुक्तिबोध कि मृत्यु कब हुई?
3. 'चांद का मुंह टेढ़ा' किसकी रचना है।
4. 'अंधेरे में' कविता के रचनाकार का नाम बताओं।

11.4 सारांश

सारांश यह है कि मुक्तिबोध का भाषा पर पूर्ण अधिकार था। मुक्तिबोध शब्दों के शिल्पी हैं शब्दों के पारखी थे। उनकी भाषा में कोमल स्त्रैणता न होकर दारुण पौरुष है; वह पराजय की नहीं पराक्रम की भाषा है जो उनके व्यक्तित्व के अनुरूप ही है, उनके कथ्य की प्रतिध्वनि है। जिस सामाजिक अव्यवस्था और जीवन की कठोर वास्तविकता को उन्होंने अपनी रचनाओं में उकेरा है, उसके लिए ऐसा ही पौरुषपूर्ण, अनगढ़ और चिल्लाहटभरी भाषा की आवश्यकता है। इस प्रकार मुक्तिबोध कविताओं में भाषा का जो रूप उभरता है यह प्रचालित भाषा से नितान्त भिन्न है। मुक्तिबोध अपने समस्त समसामयिक कवियों में अलग हैं और आधुनिक हिन्दी कविता में उनके काव्याभिव्यक्ति को नितान्त नवीन और मौलिक कहा जा सकता है।

11.5 कठिन शब्दावली

कष्ट–दुख, पीड़ा। **पसरी**–फैलना। **जन**–लोग। **नूतन**–नया। **तड़ित**–बिजली। **स्वरकार**–गायक। **भभक**–आग जलना।

11.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. 13 नवम्बर, 1917।
2. 1964 ।
3. गजानन माधव मुक्तिबोध।
4. गजानन माधव मुक्तिबोध।

11.7 सन्दर्भित पुस्तक

रामस्वरूप चतुर्वेदी–अज्ञेय और रचना की आधुनिक समस्या।

11.8 सात्रिक प्रश्न

1. मुक्तिबोध का जीवन परिचय लिखिएं।
2. मुक्तिबोध के साहित्य परिचय पर संक्षिप्त नोट लिखिएं।
3. मुक्तिबोध की विशेषताओं की विवेचना करों।

*****

इकाई–12
गजानन माधव मुक्तिबोध : व्याख्या भाग

संरचना

12.1 भूमिका

12.2 उद्देश्य

12.3 गजानन माधव मुक्तिबोध : व्याख्या भाग

स्वयं आंकलन प्रश्न

12.4 सारांश

12.5 कठिन शब्दावली

12.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

12.7 सन्दर्भित पुस्तक

12.8 सात्रिक प्रश्न

12.1 भूमिका

गजानन माधव मुक्तिबोध हिंदी साहित्य में प्रयोगवाद के कवि है उन्होंने अपने काव्य में समकालीन समस्याओं को उठाया है।

12.2 उद्देश्य

1. गजानन माधव मुक्तिबोध के जीवन परिचय का बोध।
2. गजानन माधव मुक्तिबोध की रचनाओं का ज्ञान।
3. गजानन माधव मुक्तिबोध की रचनाओं में वर्णित विषय का ज्ञान।

12.3 गजानन माधव मुक्तिबोधः व्याख्या भाग

'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' कविता का सार

'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' गजानन माधव मुक्तिबोध की एक महत्वपूर्ण तथा चर्चित कविता है। इस कविता में कवि अपने आदर्श, मार्गदर्शन, क्रांतिकारी कवियों का गुणगान करता हुआ कहता है कि मुझे क्रान्तिकारी कवियों की परम्परा का साथ मिला है, और वह साथ हिमालय की तरह सहारा देने वाला रहा है। मुझे आम आदमी के दिलों को घड़कन का साथ मिला। कवि आगे कहते है कि हे मेरे आदर्श, क्रान्तिकारी कवि! तुम मेरे जीवन में सूर्य की किरणों की तरह मार्गदर्शक रहे। तुम्हारी क्रुद्ध, लालिमा युक्त आंखों सा मैंने तेज पाया है। तुमने मुझमें क्रान्ति की चिंगारियां उत्पन्न की। तुम सदा मुझे दुखों और कष्टो की पगडण्डियों से होकर लोगों के दिलों के दरवाजे तक पहुंचते रहे। तुमने कभी भी जीवन संग्राम से मुंह नहीं मोड़ा और लोगों को आने वाले सुखमय जीवन के सपने दिखाते रहे। मेरे प्रिय क्रान्तिकारी कवि! तुम लोगों को संघर्ष के लिए प्रेरणा देते है। तुम्हारी कविता में बादलों का गर्जन सुनाई पड़ती है। तुम्हारे शब्द बिजली की तरह चमकते और कड़कते हुए लोगों को रास्ता दिखाते है। तुम्हारे गीत पूरी दुनिया में छा गए। बुरे से बुरे समय में भी तुम आशा के गीत गाते हो। लोगों के टूटे, निराश हृदय में आशा की किरण का काम करते हो।

1. **कविता : मुझे तुम्हारा साथ मिला है**

   मुझे तुम्हारा साथ मिला है

मुझे हिमालय हाथ मिला है,
कन्धा मिला विशाल गगन का
वक्ष मिला मुझको जन–जन का
जयन मिले मुझको धरती के
आज जिन्दगी के ही जी के
आंसू मिले, मिले अंगारे
रवि सा जलता माथा मिला है।
मुझे तुम्हारा साथ मिला है।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'गजानन माधव मुक्तिबोध' द्वारा रचित कविता 'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत कविता में कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने अपने पूर्वज क्रांतिकारियों कवियों का साथ मिलने पर आभार प्रकट किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि मुक्तिबोध अपने पूर्वज क्रांतिकारियों को संबोधित करते हुए कहता है कि हे क्रान्तिकारी कवि! मुझे तुम्हारा साथ मिला है। मुझे तुम्हारा हाथ हिमालय की तरह सहारा देने वाला है। मुझे तुम्हारे आकाश जैसे कन्धे मिले हैं। और जन–जन का हृदय का सहयोग मिला है। मुझे तुम्हारे द्वारा ही धरती की आंखें मिली हैं अर्थात् धरती की तरह सब को एक सम्मान देखने वाली आंखे मिली है। कवि आगे कहते है कि मुझे तुम्हारे कारण जिन्दगी के आंसू और अंगारों को समझ मिली। अर्थात् जीवन का आभास हुआ। कवि कहता है कि तुम्हारे साथ से सूर्य की तरह जलता माथा मिला।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने अपने पूर्वज क्रांतिकारी कवियों का चित्रण किया है।
2. सरल भाषा का प्रयोग।
3. भाषा प्रसाद गुण युक्त है।

2. **तुम गलियों की गहराई–से।**
उगी रश्मि की लम्बाई–से
पथ दरसाने वाली पीली
तेज नुकीली अरुणाई–नसे।।
जिन संघर्षों में से मस्ती
लेकर बनी हुई है हस्ती
उसकी प्रतिभा आंखों में से
(अथवा सुर्ख सत्ताखों में से)
प्रकटी ज्यों सच्ची ज्वालाएं
गहरी स्वर्ण किरण मलाएं
कष्टों के जंगल में पसरी
कर्तव्यों की भूरी गहरी
पगडण्डी से बिछे हुए हो
जन–जन के दरवाजे पर तुम

बसा रहे नवजीवन सरगम
नूतन सपनों को उभारते
मेरे जैसों को गुहारते।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य—पुस्तक 'रचना—पुंज' में संकलित कवि 'गजानन माधव मुक्तिबोध' द्वारा रचित कविता 'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत कविता में कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने अपने पूर्वज क्रांतिकारी कवियों का साथ मिलने पर आभार प्रकट किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत कविता में कवि क्रांतिधर्मी कवि का आभार व्यक्त करते हुए कहता है कि तुम इस देश की गलियों को गहराई से जानते थे। उन गलियों में उगती हुई सुबह के सूर्य की किरणों जो प्रातः के अन्धकार को चीरकर चमकती उसी तरह तुम्हारी कविता जो मेरे लिए पथ—प्रदर्शक बनी हुई है। कवि कहता है कि तुम्हारे संघर्षों से प्रेरणा लेकर ही मैनें अपना अस्तित्व बनाया है। कवि की प्रतिभा संपन्न आंखों में क्रांति के प्रज्वलित विचारों की ज्वालाओं को निकलने मैंने देखा है। ये विचार सुनहरी किरणों की मालाओं की तरह प्रकट होते थे। कवि कहता है कि कवियों का जीवन कर्तव्यों की भूरी, मटमैली पगडण्डी की तरह फैला है। उनका जीवन जन—जन के लिए उत्साह और नवजीवन प्रदान करने वाला है।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि अपने प्रेरणा—स्रोत कवि के प्रति श्रद्धा का भाव व्यक्ति किया है।
2. सरल भाषा का प्रयोग।
3. भाषा प्रसाद गुण युक्त है।
4. अनुप्रास, उपमा अलंकारों का प्रयोग।

3. **बढ़ा रहे गलियों की धड़कन।**
तुम संघर्षी गान गा रहे
मुक्ति युद्ध आख्यान गा रहे
रूंधे अनु का गला साफ कर
मानों मेघ कवित्त गा रहा
महावेदनामय लहरों की
ज्यों सागर वीणा बजा रहा
शब्द तुम्हारे प्रतिध्वनियों में
बार—बार सब ओर घूमते
पुनः पुनः ज्यों तड़ित कौंधती
भव्य सुरों से फूट रश्मि—कण
दुनिया के सब छोर घूमते
तुम गाते काली बयार में
आशा की लकीर दर्दीली
भग्न गृहों के अन्धकार में
उकसाते लौं तेज़ नुकीली।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य—पुस्तक 'रचना—पुंज' में संकलित कवि 'गजानन माधव मुक्तिबोध' द्वारा रचित कविता 'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत कविता में कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने अपने पूर्वज क्रांतिकारियों कवि को अपना आदर्श बताया है।

व्याख्याः प्रस्तुत कविता में कवि कहता है कि हे सृष्टा कवि! तुमने संघर्षों के गीत गा–गाकर गलियों में आम आदमी को संघर्ष की प्रेरणा दे रहे हो! तुम के लिए युद्ध करने की प्रेरणा देते हुए कविताओं का पाठ कर रहे हों। तुम्हारी आवाज में गम्भीरता है और रुके हुए गले को साफ कर रहे हों। ऐसा प्रतीत होता है मानों बादल कविता पाठ कर रहे हों। कवि कहता है कि जब तुम कविता का गान करते है तब ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि सागर कोई वेदना से भरा हुआ गीत अपनी लहरों की वीणा पर गा रहा हो। तुम्हारे गर्जना भरे शब्दों की गूंज चार दिशाओं में सुनाई पड़ रही हैं और ऐसा प्रतीत होता है मानों बार–बार बिजली चमक रही है। तुम्हारे गीतों के स्वर सूर्य की रश्मि कणों की तरह चारों दिशाओं में फैले हुए हैं। तुम्हारे गीत दुनिया भर के लोगों को प्रेरणा देते हैं। तुम निराशा की काली आंधियों में भी आशा का दर्द आशा की किरण जगा देते हैं। तुम्हारे गीत टूटे हुए घरों में अन्धकार के बीच नुकीली प्रकाश की किरणें पैदा करते हो।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में क्रांतिकारी कवि की विशेषताओं का चित्रण किया है।
2. सरल भाषा का प्रयोग।
3. भाषा प्रसाद गुण युक्त है।
4. अनुप्रास, उपमा अलंकारों का प्रयोग।

2. **ओ मेघ,**
पुराने हो पर बार–बार आते हो
पुनः पुनः तौटते स्वप्न के गहन सत्य से ...... इसीलिए
तुम नए–नए लगते हो।
बरस बरस कर
धरती रसा बना कर
अशेष होकर
अपना चरित पूर्ण करते हो
खूब अनुभवी बहुत पुराने होकर भी
तुम बिल्कुल मौलिक नए–नए तुम कहलाते हो।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'गजानन माधव मुक्तिबोध' द्वारा रचित कविता 'ओ मेघ' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत कविता में कवि गजानन माधव मुक्तिबोध मेघ अथवा बादल की नवीनता का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत कविता में कवि गजानन माधव मुक्तिबोध बादल को संबोधित करते हुए कहते है कि हे बादल! तुम निश्चय ही युगों–युगों से पुराने है अर्थात् सृष्टि के जन्म के साथ ही तुम्हारा जन्म भी हुआ है। कवि कहते है कि तुम बार–बार आकाश में उमड़ते हो, ठीक वैसे जैसे हमारे अन्तस्तल में दबी वासनाएं नए–नए सपनों का रूप धारण कर सामने आती हैं। कवि कहता है कि हे बादल! तुम अपने भीतर संसार के सारे रस को लेकर धरती में बरस जाते है और पृथ्वी को रस्युक्त बना देते हो। कवि बादल के आत्मसमर्पण के भाव का वर्णन करते हुए कहते है कि हे बादल! तुम पृथ्वी पर बरसकर पृथ्वी को रसमय बनाते हो और अपने आप को मिटा देते हो। इस प्रकार तुम्हारा जीवन समाप्त हो जाता है। हे बादल! तुम खूब अनुभवी हो, बहुत पुराने भी हो, फिर भी तुम नित नए ही लगते हो।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि ने बादल के आत्मसर्म्पण के भाव का वर्णन किया है।
2. सरल भाषा का प्रयोग।
3. भाषा प्रसाद गुण युक्त है।
4. अनुप्रास, उपमा अलंकारों का प्रयोग।

2 **विलीन होकर**
जन्म ग्रहण करने का तुमको एक नशा है।
इसलिए कि श्रेयस की प्रेरणा गहन है
आत्मवशा है
प्रपितामह के प्रपितामह
नवल रूप धर
तुम श्रेयस की उत्तेजना–प्रेरणा श्री हो
मन में घुलती हुई पंक्ति के प्रतीक भी हो
बार–बार आते हो
नए–नए तुम कहलाते हो।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'गजानन माधव मुक्तिबोध' द्वारा रचित कविता 'दूर्वाचल बार' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत कविता में कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने अपने पूर्वज क्रांतिकारियों कवियों का साथ मिलने पर आभार प्रकट किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत कविता में कवि बादल को संबोधित करते हुए कहता है कि हे बादल! तुम जन कल्याण के लिए अपना बलिदान देकर अपने आप को मिटाकर, बार–बार जन्म लेते हैं। तुम्हारा जन कल्याण का भाव सब के लिए प्रेरणा स्रोत है अर्थात् तुम्हारे लिए जन्म लेने का अर्थ ही है दूसरों के लिए जीना और मरना। कवि कहता है कि तुम बहुत प्राचीन हो अर्थात् दादा, पड़दादा के समय से हो अर्थात् तुम सदियों पुराने हो परन्तु फिर भी तुम नए–नए रूप धारण करके पूरी दुनिया को जीने की प्रेरणा निरन्तर देते रहते हो। तुम अपने आपके उदाहरण से दूसरों के लिए प्राण देने की ऊर्जा प्रदान करते हो। कवि कहते है कि तुम मन में उभरती गीत की पंक्तियों के लिए प्रेरक हैं। कवि कहते है कि हे बादल! तुम आकाश में बार–बार आते हो, परन्तु फिर भी हर बार नए–नए लगते हो।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने जन–कल्याणकारी के लिए बादल की महत्ता एवं आत्म समर्पण के भाव का वर्णन किया है।
2. सरल भाषा का प्रयोग ।
3. भाषा प्रसाद गुण युक्त है ।
4. अनुप्रास, उपमा अलंकारों का प्रयोग ।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. 'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' कविता के रचयिता हैं।
2. मुक्तिबोध का जन्म कब हुआ?
3. मुक्तिबोध की मृत्यु कब हुई?

12.4 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि मुक्तिबोध की कविता 'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' में उन्होंने क्रान्तिकारी कवि से प्रेरणा लेते हुए सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया है। 'ओ मेघ' कविता में उन्होने बादल की सुन्दरता का वर्णन किया है।

12.5 कठिन शब्दावली

गगन– आकाश। **बक्ष**–छाती। अंगरी–जलते कोयले। **रश्मि**–किरण। **अरूणाई**–तालिमा। **पसरी**–फैली हुई। **आख्यान**–यशोगाथा। **महाबेदनामय**– अत्यधिक पीड़ा दायक। **प्रतिध्वनियां**– गूंज। **तड़ित**–बिजली। **रश्मि कण**– किरणों के अंश। **बयार**– आंधी। **गहन**–गहरे। **रसा**–रसयुक्त, सरस। **अशेष**– खाली, रिक्त। **विलीन**– खो जाना। **श्रेयस**–जन कल्याण। **प्रपितामह**– पड़दादा। **नवल**–नया।

12.6 आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. मुक्तिबोध ।
2. 1917 ।
3. 1964 ।

12.7 संदर्भित पुस्तक

1. सिद्धेश्वर प्रसाद–छायावादोत्तर काव्य।

12.8 सात्रिक प्रश्न

1. मुझे तुम्हारा साथ मिला कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।
2. 'ओ मेघ' कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।

*****

इकाई–13
सुदामा पाण्ड्ेय धूमिल का जीवन परिचय

संरचना

13.1 भूमिका
13.2 उद्देश्य
13.3 धूमिल का जीवन परिचय
स्वयं आंकलन प्रश्न
13.4 सारांश
13.5 कठिन शब्दावली
13.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
13.7 सन्दर्भित पुस्तक
13.8 सात्रिक प्रश्न

13.1 भूमिका

धूमिल जैसे कवि का जीवन परिचय लिखना बहुत आसान होते हुए भी बहुत आसान नहीं है। इसका कारण यह रहा है कि कवि ने स्वयं कहीं पर भी किसी भी संदर्भ में अपने जीवन से संबंधित पक्षों पर कभी भी प्रकाश नहीं डाला। उन्होंने कोई भी डायरी, दैनिक जीवन से संबंधित घटनाओं अथवा कवियों, लेखकों से हुए पात्राचार आदि का कोई विवरण अपने पास नहीं रखा। जीवन से संबंधित घटनाओं तथा जीवनी लिखने का तो प्रश्न ही नहीं है। इसलिए इनके जीवन से संबंधित आधार भूत सामग्री उनके परिवार जनों से ही प्राप्त होती है। इनके जीवन से संबंधित कुछ पक्षों को इने मित्र लेखकों तथा अनुज कन्हैया पाण्डेय ने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

13.2 उद्देश्य

1. सुदामा पाण्ड्ेय धूमिल के परिचय का बोध।
2. धूमिल की रचनाओं का बोध।
3. धूमिल की विशेषताओं की जानकारी।

13.3 धूमिल का जीवन परिचय

इनका जन्म स्थान खेवली जो बनारस से 12 किलोमीटर पूर्व–पश्चिम पंचकोसी के तीसरे मुकाम रामेश्वर महादेव से 3 कि.मी. वरूणा नदी के किनारे पर स्थित है। उनकी जन्म तिथि अगहन 13 संवत 1993 अर्थात् 9 नवम्बर सन् 1936 ई. है। इनके पिता के नाम शिवनायक पाण्डेय तथा माता का नाम श्रीमती राजवन्ती देवी था। पिता जयशंकर प्रसाद के पिता संघुनी साहू के मुनीम थे, उन्होंने अंतिम दिनों में किराने की दुकान खोली थी। सुदामा पंडित धूमिल की बंरा परम्परा में छेद्रा पाण्डेय सर्वप्रथम आते है। छेद्रा पाण्डेय की संतानों में विन्देश्वरी का नाम आता है। विन्देश्वरी की चार सन्तानें शिवनायक, रामनायक, हरिहर और रामनिवास नाम से रही। शिवनायक की संतानों में सुदामा, कन्हैया अर्जुन तारकनाथ और लोकनाथ (जुडवां) का नाम आता है। सुदामा की संतानों में आशा देवी और रत्नशंकर रहे हैं। सुदामा पांडेय धूमिल शिवनायक पाण्डेय के ज्येष्ठ पुत्र थे। पिता की मृत्यु के पश्चात धूमिल ने संयुक्त परिवार को को बनाए रखने के लिए अनेक स्वार्थों का बलिदान दिया।

जब धूमिल 12 वर्ष के थे तो इनक पिता का देहांत हो गया। इसलिए कुछ ही समय पश्चात लालपुर, वाराणसी निवासी पं. नान्हक दीक्षित की पुत्री मूरत देवी के साथ इनका विवाह कर दिया गया। हाई स्कूल की परीक्षा तक तो इसका गौना भी हो गया था।

अपने बचपन में ये सींकिया पहलवान के नाम से प्रसिद्ध थे तथा बचपन से ही अखाड़े की तेल माटी खाकर एक बलशाली युवक के रूप में बड़े हुए। आर्थिक ढांचा सही न होने के कारण इनका उच्च शिक्षा प्राप्ति का सपना अधूरा ही रह गया। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में हरहुआं के कूर्मि क्षत्रिय इण्टर मीडियेट कालेज से हाई स्कूल की परीक्षा पास की। इन्होंने केवल स्वाध्याय से ही हिन्दी और अंग्रेजी का ज्ञान प्राप्त किया। सन् 1957 में इन्होंने वाराणसी के औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान में नामांकन करवाया और सन् 1958 में विद्युत डिप्लोमा प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त कर पास किया। यहीं पर सन् 1958 में विद्युत अनुदेशक के पद पर इनकी नियुक्ति हो गई तथा जीवन पर्यन्त इसी संस्था के विभिन्न स्थानों बलिया, सहारनपुर, सीतापुर तथा वाराणसी में इन्होंने काम किया।

एक जुलाई सन् 1974 को जब धूमिल सीतापुर में थे, अचानक सिर दर्द के कारण अस्वस्थ रहने लगे। 18 अक्तूबर तक मामूली दर्द रहा। एक दिन सायंकल यह पीड़ा असहनीय हो गई। चिकित्सा के लिए बनारस आये। कुछ दिनों स्वस्थ रहने के बाद अचानक पुनः गम्भीर रूप से अस्वस्थ हो गए। तभी उनकी चिकित्सा करने वाले विशेषज्ञों ने सिर में दिमागी फोड़ा (ब्रेन टयूमर) बताया। बनारसा के प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ0 कटियार तथा डॉ एस0एन0 चन्द्रा ने अपनी देखभल में उन्हें रखा। कुछ समय बाद उन्हें लखनऊ लाया गया। लेकिन अन्ततः 10 फरवरी सन् 1975 को सायंकाल 9 बजकर 45 मिनट पर धूमिल ने अपनी देह का उत्सर्ग बैड नं. 2 पर हमेशा के लिए कर दिया। दूसरे दिन बनारस के प्रसिद्ध मणिकर्णिका घाट पर दाह संस्कार कर दिया गया। मृत्यु के समय उनकी आयु 38 वर्ष 2 माह थी। इस तरह समकालीन कविता के महत्वपूर्ण कवि का असमय निर्धन हो गया। लखनऊ में कुंवर नारायण, ठाकुर प्रसाद सिंह, श्री लाल शुक्ल के प्रयासों से सरकारी स्तर पर उन्हें चिकित्सा संबंधी सुविधाएं प्राप्त हुई लेकिन ये सुविधाएं अत्यंत अल्प और अपर्याप्त थीं धूमिल ने जीवन भर सरकारी प्रतिष्ठानों और षड्यंत्रों का विरोध किया, उन्हीं का परिणाम उन्हें मिला। लेकिन वे जीवन भर अपनी आजीविका और स्वाभिमान की रक्षा के लिए संघर्ष करते रहे।

धूमिल को बहस, व्याख्यान आदि बहुत प्रिय थे। वे एक अच्छा वक्ता थे। बाद–विवाद में वह बहुत तेजी से बोलते थे। भाषण तो वे किसी भूमिका के ही दे दिया करते थे। ग्रामीण मुहावरों, कहावतों शब्दों का प्रयोग उन्हें प्रिय था। कविता की रचना प्रक्रिया को लेकर जीवंत बहस करना उन्हें अच्छा लगता था। उनमें तर्क प्रतिमा विलक्षण रूप से थी। वह किसी भी प्रकार के अन्ध विश्वास तथा दिखावे के विरोधी थे हर स्तर पर वह अपनी बुद्धि एवं विवेक से निर्णय लेने का प्रयास करते थे। छुआछूत को वह कभी नहीं मानते थे। मुसलमानों, हरिजनों, ईसाईयों के साथ उनका खान–पान था। इस तरह से वे एक व्यापक मानवतावादी थे, जो प्राचीन संस्कारों एवं दिखावों से मुक्त हो चुके थे।

गांव से शहर की यात्रा उन्हें कभी रास नहीं आई। हमेशा वे अपने गांव को याद करते रहते थे। गांव में आकर किसानों से बातें करना उन्हें अत्यंत प्रिय था। किसानों को वे समाज सुधार के बारे में समझाया करते थे। ग्रामीण लोगों को साहस, निःस्वार्थ भाव से काम करने की प्रेरणा देते, सरकार की अच्छाइयों–बुराइयों का ज्ञान कराते, संग्रह की प्रवृत्ति से घृणा की बातें करते। पूंजीवाद तथा उससे उत्पन्न आवश्यक बुराइयों तथा सामंती मनोभाव से संघर्ष करने की इच्छा उनमें थी। सत्ताधारियों की जड़ता के प्रति धूमिल के मन की घृणा समय–समय पर व्यक्त होती रहती थी।

सन् 1958 से सन् 1963 तक गीतों की दुनिया में घूमने के पश्चात् घूमिल एकाएक गंभीर, सामाजिक राजनैतिक सरोकार की कविता से जुड़ गए। सन् 1961–62 के मध्य सभी गीत रचनाएं प्रकाश में आई। इसी

समय ‘नीहार’ जून 1961 में एक गीत प्रकाशित हुआ। उसी के आवरण पृष्ठ पर ‘बांसुरी जल गई’ गीत के अगले अंक में प्रकाशित होने की सूचना है। परन्तु यह गीत मिलता नहीं है और न ही नीहार का अगला अंक मिलता है। ‘बांसुरी जल गई’ उनकी गीत रचना अवश्य रही है। इस गीत को किसी सज्जन के विरोध आह्वान पर इन्होंने गाया था–

श्वास के उच्छावास से जल गई बांसुरी
बांसुरी जल गई।

इसका विवरण इनके पुत्र रत्नशंकर द्वारा अपने पिता के विषय में दी गई जनकारी में मिलता है। सन् 1963 में इनकी कविताएं विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में छपने लगीं। जनवरी 1963 में इन्होंने ‘शीशे पर लोटती रोशनी’ शीर्षक से एक कविता संग्रह छपवाने की योजना बनाई थी जो पूरी न हो सकी। सन् 1970 में प्रकाशित उनका पहला काव्य संग्रह ‘संसद से सड़क तक’ सन् 1965 से 1970 तक की कविताओं का संग्रह है। उन्होंने सन् 1965 से पूर्व लिखी अपनी सारी कविताओं को इस संग्रह से खारिज कर दिया था। इनका दूसरा काव्य संग्रह सन् 1977 में मरणोपरान्त प्रकाशित करवाया गया। इसका शीर्षक श्री विद्यान्ति वक्त मित्र के सुझावानुसार ‘कल सुनना मुझे’ रखा गया। इस संग्रह में सन् 1970 के बाद की कविताएं संकलित की गई हैं। धूमिल का तीसरा काव्य संग्रह ‘सुदामा पाण्डे का प्रजातन्त्र’ शीर्षक से 1984 में प्रकाशित हुआ। धूमिल के सुपुत्र श्री रत्नशंकर द्वारा संपादित इस संग्रह में सन् 1970 के बाद की लगभग सभी महत्वपूर्ण कविताओं को समेटने का प्रयास किया गया है। इसमें लगभग पच्चीस कविताएं उनके जीवन काल में ही पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थी तथा शेष अप्रकाशित पाण्डुलिपियों से ली गई हैं।

❖ साहित्यिक परिचय

धूमिल के तीन काव्य संग्रह प्रकाशित हुए इनके तीनों काव्य संग्रहों में 122 कविताएं हैं। संसद से सड़क तक’ में 25 ‘कल सुनना मुझे’ में 37 तथा ‘सुदामा पाण्डे का प्रजातन्त्र’ में 60 कविताएं हैं धूमिल थी महत्वपूर्ण कविताओं को छांटकर डॉ0 शुकदेव सिंह ने ‘धूमिल की कविताएं’ नामक शीर्षक से नया संग्रह निकाला, जिसका प्रकाशन 1983 में हुआ। धूमिल ने सुकांत भट्टाचार्य की कविताओं की बंगला से हिन्दी में रूपांतरण भी किया था जो कि ‘पारपत्र’ नाम से छपा। परन्तु बाद में इस परन से धूमिल का नाम हटा दिया गया। धूमिल निरंतर विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं के लिए लिखते रहे। 1965 में ‘नई कविता और उसके बाद’ शीर्षक से लिखा उनका निबन्ध ‘भारती’ फरवरी 1965 में छपा। ‘आवेग–11’ तथा ‘सर्वनाम–11’ में धूमिल द्वारा अनुदित बांगला कविताओं का रूपांतरण छपा था। रत्नशंकर का कहना है कि कुल मिलाकर दो सौ कविताएं जिनमें से लगभग पचास ऐसी कविताएं हैं, जो तत्कालीन पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित एवं सम्मानित हुई है।। इनके पुत्र रत्नशंकर के अनुसार प्रकाशित रूप में सबसे पहले उनकी एक कहानी ‘फिर भी वह जिन्दा है’ साकी जून 1960 में मिली हैं पच्चीस गीत, सात कहानियां, ‘इतना : नयी पौध, नया माली तत्कालीन पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई रचनाएं हैं।

❖ धूमिल की काव्यगत विशेषताएं

‘एक सही कविता पहले एक सार्थक वक्तव्य होती है। इसी से षष्ठ दशकीय नई कविता और समकालीन विरोध की कविता का दृष्टिगत अन्तर स्पष्ट होने लगता है। नई कविता मे बिम्बों प्रतीकों तथा काव्य शब्दों की नवीनता पर बल दिया गया था, वक्तव्य और उसकी साथर्कता पर नहीं। अतः यह जानना अवश्यक होता है। कि वक्तव्य किसके विषय में और सार्थकता का अर्थ क्या होता है। धूमिल कवितात्मक वक्तव्यों द्वारा सर्वत्र स्वतंत्रता के पश्चात निर्मित संस्थाओं और अमानवीयताओं को अनावृत करते हैं, उनका मानना है कि संस्थान और प्रतिष्ठान सड़ चुके हैं। ये अपनी मानवीय भूमिका पूरी नहीं कर रहे हैं। धूमिल पूर्व निर्मित जन–भ्रमों का निवारण करना चाहते हैं। भ्रम भंग के बिना न वास्तविकता का ज्ञान होगा और न लोग नवीन तथा अधिक मानवीय परिवर्तनों के लिए प्रस्तुत होंगे। कवि पुराने प्रभा मंडलों को तोड़कर नवीन सामाजिक संरचना क लिए जमीन तैयार करता है। धूमिल की रचना कविता में पाखण्डी चेहरों की नग्नता, निदर्यता, अभावदंश, सर्वत्र निरर्थकता बोध, पर्व जुलूसबाजी तथा व्यक्ति की असहायता पर वक्रोतियों की बौधार है।

कविता कुछ न होने पर अपनी प्रतिक्रिया की व्यर्थता महसूस करता है। तब यह अनुमान संगत हो जाता है कि कवि जनता को जागृत कर वर्तमान नियति निर्धारकों को उखाड़ना चाहता है :–

क्या आजादी सिर्फ तीन थके रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है
या इसका कोई खास मतलब होता है,

अधूरी स्वतंत्रता के कर्णधार कांग्रेसियों की असफल राजनैतिक भूमिका पर प्रहार के साथ–साथ जब कवि जनता की जड़ता को देखता है तो उसका विवाद जागृत हो जाता है। शासक भ्रष्ट या यथा स्थितिशील और शासित जड़ है। इस स्थिति में धूमिल अपने पाठकों में सशस्त्र दृष्टि उत्पन्न करना चाहता है, जो नक्सलबाड़ी कविता में दिखाई देती है :–

सहमति ....?
नहीं, यह समकालीन शब्द नहीं है
इसे बालिगों के बीच चालू मत करो।
मुझे दूसरे प्रजातंत्र की तलाश है।
सबके सब व्यवस्था के पक्ष में चले गए हैं।

यह दूसरे प्रजातंत्र की कल्पना ही कवि का विकल्प है। यह दूसरा प्रजातंत्र कैसा होगा, इसका कोई विशद स्पष्टीकरण धूमिल की कविता में तो नहीं मिलता है, लेकिन यह द्वितीय प्रजातंत्र प्रचलित चुनाव विधि से नहीं आ सकता है। असवर मिलते ही निर्वाचन द्वारा व्यवस्था परिवर्तन के भ्रम का भंजन करता है। 'सशस्त्र दृष्टि' यही है कि प्रजा हथियार उठाकर ही सम्पत्ति, पूंजी, शासन और भूमि पर उच्च वर्गों के एकाधिकार को समाप्त कर सकती हैः–

कल तुम्हारा छोटा लड़का भी
तुम्हारे पड़ोसी का गला
अचानक अपने स्लेट से काट सकता है।

सप्तम दशक के उत्तर्राध में सशस्त्र दृष्टि, सशस्त्र राजनीतिक तथा सशस्त्र मनोदशा का वातावरण बनता गया है।

पक्षधर साहित्य की सृष्टि इसी मानसिक मौसम में हुई है। यह छापामार मनोवृत्ति और सामाजिक क्रांति के मूल्यों का साहित्य है। चे–ग्वेवारा, मार्क्स, एंगिल्स, माओ, हो ची मिन्ह, दिब्रे, फिदेल, कास्त्रों, लेनिन, कोहन बेंदो, तारिक अली आदि लेखकों और क्रांतिकारियों से प्रेरित यह साहित्य वर्ग शत्रु पर मानसिक तथा शाब्दिक हमलों द्वारा वास्तविक आक्रमणों की ओर ले चलने वाला सृजन है। यह सशस्त्र दृष्टि और सशस्त्र मानसिकता ही धूमिल का मुख्य कथ्य है। धूमिल यही कहना चाहते हैं कि पूंजीवादी जनतंत्र में औपचारिकताओं का निर्वाह अधिक होता है। अतः वोट से नहीं, बुलट से ही ऐसा परिवर्तन संभव है कि यहां अद्वितीय प्रजातन्त्र स्थापित हो सके। जिसमें श्रमिक वर्ग निर्णाकय होगा। धूमिल अधिकांश कविताओं में वर्तमान व्यवस्था का पर्दाफाश करते हैं वह प्रथम जनतंत्र के सूर्योदय में सड़क के पिछले हिस्सों के पीले अंधेरो छाई हुई खामोशियों, अस्म विक्रय, सहनशीलता और सहमति के विरूद्ध बोलते हैं।

धूमिल 'अकाल दर्शन' में राजनैतिक नेताओं की चालाकियों को पकड़ता है। आजादी और गांधी के नाम पर चलने वाले मुहावरों को नंगा करता है। लोगों की भूख और भ्रम को देखता है तथा जीवन स्तरों के अन्तर को पहचानता है व 'बसंत' में बिलों के भुगतान की समस्या को उठाता है। 'शांति पाठ' में वह दक्षिण पथियों के राजनैतिक षड्यंत्रों की ओर भी ध्यान आकर्षित करता है। उनके विरूद्ध अपने क्रोध की व्यर्थता को कोसता है।

वह देश पर लन्दन और न्यूयार्क के साम्राज्य वादियों की पकड़ का निरीक्षण करता है। सशस्त्र क्रांति के लिए साहित्य क्षेत्र में जनमत बनाने के लिए धूमिल नंगापन को अन्धा होने के खिलाफ कार्यवाही मानता है। कवि के लिए कविता अब अंधकार, गोश्त और कीचड़ पर ही जीवित रह सकती है। कवि अपने सुखी पड़ोसियों के दांत टूटने और उनके स्वास्थय के सत्यानाश की कामना करता हुआ अपने कायद दिमाग पर लानत भेजता है। कवि दल दल के समान देश की बगल में छापामार दस्तों के लिए जंगल की कल्पना करता है। इनका मोचीराम सुखी बाबू वर्ग का उपहास करता है। आम आदमी पर पड़ते हथौड़ों को सुनता है। पीड़ित मनुष्य के विरोध में हिटलर की नीतियों को खड़ा करता है। फिर भी वह सब कुछ सहते हुए भारतीयों की कायरता पर क्रुद्ध होता है।

धूमिल देश के बातूनी दिमाग में विदेशी भाषा अंग्रेजी की सक्रियता का संकट दिखाता है। वह मंत्रियों की कुर्सियों में चरित्र हीनता को मूर्तिमान पाता है। और 'जनतंत्र' शब्द के हत्यारे भेड़ियों को नकारता है :—

उन्होंने ....हवा में एक चमत्कार गोलशब्द
फेंक दिया है ..... 'जंनतंत्र
जिसकी रोज सैकड़ों बार हत्या होती है।
और हर बार वह भेड़ियों की जुबान पर जिन्दा है।
चालाक सुराजिए आजादी के बाद अन्धेरे में
गर्म कुत्ता खा रे थे, सफेद घोड़ा पी रहे थे।

वे लाग भी सशस्त्रकांति की दृष्टि से सुरक्षित नहीं हैं जो आज सब तरफ से संरक्षित और समृद्ध हैं, जिनमें दुःखी जनता के साथ सहानुभूति नहीं है। कवि व्यक्तिवाद या अकेलेपन का विरोध करता हैः—

अकेला कवि कटघरा होता है
कविता पर बहस शुरू करो
और शहर को अपनी ओर झुका लो।

कवि धूमिल नई कविता और नई आलोचना के कृत्रिम तनाव के प्रत्यय पर व्यंग्य करते हैं, क्योंकि वह तनाव व्यक्तिवादी था, उसमें सामूहिक मुक्ति का कोई विचार नही था :—

रंगीन पत्रिकाओं में चरित्र फेंकता हुआ ईमान
जो दांतों में फंसी हुई भाषा की तिकड़म है।
टूटे हुए बक्लस का तनाव

कवि के मन में समाज और परिवर्तन की शक्तियां सक्रिय हो जाती है :

एक नदारद सा आदमी
समूचे शहर की जुबान बन जाता है।

धूमिल मानते हैं कि धूर्त्त राजनीतिज्ञों, राजनीति करने वालों की बनियानों के नीचे छिपी हुई कटार है, उनके तीन मुंह हैं ये लोग जन समुदाय को बहलाने के लिए बचपन की लोरियां सुनाते हैं। जन संतोष के लिए पड़ोसी देशों की भुखमरी की कहानियां एकत्र करते हैं। मिथ्या जन करूणा से जनाक्रोश को काट देते है। इस स्थिति में धूमिल की कविता किताब में छपे पेड़ की तरह बेखबर व्यक्तियों को समय में खींच लाने की कोशिश बन जाती है। कवि स्वीकार करता है कि वह भी राशनकार्ड में छपे फालतू नाम की तरह है। व्यवस्था की खोह में हर तरफ बूढ़े और रक्तलोलुप मशालची धूम रहे हैं। चीजें या तो झुक रही हैं या पीछे हट रही हैं। भाड़े की भीड लेकर बनावटी जुनून पैदा करने वाले राजनीतिज्ञ प्रसन्न हैं। जिसके हाथ में जन—भाग्य बंधा है, उसी पर, उसी के वर्ग पर भीड़ आज भी भरोसा कर रही हैः

क्या तुम्हें अब भी उसी का भरोसा हूं
जिसके अधिकार में हमारी मिट्टी है
चावल हे, इडली है, दोसा है।

कवि बार–बार एक ही संदेश दोहराता है कि अब और बर्दाश्त नहीं करना चाहिए और जो जन–विचार की दुर्दशा के लिए उतरदायी है, उन पर आक्रमण कर देना चाहिए

धूमिल कविताओं में भारत वर्ष की आवस्था का भयंकर चित्र खींचते हैं। जन साधारण के प्रति प्रेम और तादात्म्य दिखाते हैं:

मैंने एक बैल की पीठ थपथपाई
सड़क पर जाटे आदमी से उसका नाम पूछा और कहा बधाई।

धूमिल सभी भारतीयों की तरह कई वर्षों तक आशा में जीते हैं। मतदान होते रहे, निर्माण कार्य चालू रहे तथा कवि अन्य सबके समान बटन होल में महकते गुलाब वाले नेताओं को चुनता रहा। योजनाएं चलती रही तथा बहसों, आशंकाओं

समाधानो के दिन बीतते रहे। अततः कवि ने देख लिया कि नदियों की जगह मरे हुए सांपों की केंचुले बिछी हैं। दूर–दूर तक कोई मौसम नहीं है। लोग घरों में भीतर नंगे हैं और बाहर मुर्दे है :–

यह मेरा देश है यह मेरा देश है
जहां हर तीसरी जुबान का मतलब नफरत है
साजिश हे, अंधेरे हैं, यह मेरा देश है
जनता क्या है एक भेड़ है
जो दूसरों की ठण्ड के लिए अपनी पीठ पर ऊन की फसल ढो रही है।
जो हर आती–जाती हवा की जुबान पर हां कहता है
ऐसा जनतंत्र जिसमें जिन्दा रहने के लिए
घोड़े और घास को एक जैसी छूट है।

कवि लोक चेतना का आह्वान करता है। जब इस भूखे, विकृत और तेजहीन देश पर हमला होता है। तो वह गाय की तरह सींग फटकार कर घृणा प्रकट करता है और खतरा टल जाने पर फिर कलह और भ्रष्टाचार का अभ्यास शुरू कर देता है। समाज शोषकों ने किसी भी चीज को सही जगह नही रहने दिया है। भूख से मरा हुआ आदमी इस मुल्क का सबसे सटीक विज्ञापन बन गया है। लोक के क्रोध में भाग के साथ आंसू और हाय का मिश्रण है। इस अपने देश के मन में उसके बिगड़ने वालों के प्रति घोर घृणा है। वह निर्बल लोगों के बेतुके जीवन पर फटकाटता है :–

तुम ऐसी जिन्दगी गुजार रहे हो, जिसमें ने तुक है न सुख
वह क्या है जिसमें तुम्हें बर्बरो के सामने अदब से रहना सिखलाया है?

आम चुनावो के व्यामोह को धूमिल ने अपनी पूरी कला और घृणा के साथ रेखांकित किया है और निवार्चन को विकल्प से बचकर बल से व्यवस्था को बदलने पर बल दिया है :

अचानक उसमें देश ने मेरा हाथ पकड़कर
खींच लिया और मैं
जेब में जूतों का टोकन और दिमाग में
ताजे अखबारों की कतरन लिए हुए

धड़ाम से चौथे आमचुनाव की सीढ़ियों से फिसल कर
मत पेटियों के गड़गच्च अंधेरे में गिर पड़ा।

अपने देश में गिरगिट की तरह रंग बदलते गुट अन्य गुटों से टकरा रहे हैं। श्रीमानों, रोगियों–भोगियों हिजड़ो–जोगियों, दलालों–कंगालों–गूंगे और बहरों के इस देश में आम सहमति है कि आम चुनाव सारे रोग का उपचार हैं।

देश की त्रासदी का त्रासद स्वर में बखान करने पर भी कवि धूमिल निराश नहीं होते हैं। वह सर्वदा आगे की राह पर निगाह जमाए रहते हैं। यही कवि की दूरदर्शिता की परीक्षा होती है। मानव संघर्ष के इतिहास को देखकर जग कवि वर्तमान संकट को देखता है तो उसे यकीन हो जाता है कि कभी न कभी उन्हें भूख ने पशु बना दिया है, फिर भी वे ही भविष्य के सुन्दर सपने हैं :–

मगर समय गवाह है
मेरी बेचैनी के आगे भी राह है।

कानून की भाषा बोलने वाले अपराधियों के संयुक्त परिवार को समाप्त करना ही सामाजिक क्रांति है। हमारे देश का समाजवाद कवि की दृष्टि में माल गोदाम की लटकती बाल्टियों की तरह है, जिस पर आग लिखा है, पर उनमें बालू और पानी भरा है इन मिथ्या समाज वादियों को अपदस्थ करना होगाः–

भूख से रिरियाती हुई फैली हथेली का नाम
गया है–
और भूख से तनी हुई मुट्ठी का नाम
नक्सलबाड़ी है।

संसद बनाम नक्सल पंथ के विकल्प में धूमिल का संकेत और स्वीकृति नक्सल पंथी क्रांति पद्धति की ओर है। छल कपट, धन और धूर्तता में प्रथम जनतंत्र या पूजीवादी जनतांत्रिक व्यवस्था के व्यवस्थापकों और पेशेवर नेताओं को नहीं हटाया जा सकता। इर्बर्ट मारकूस ने पूंजीवादी जन तंत्र का मुख्य अन्तर्विरोध यह दिखलाया है कि उसमें चुनाव से सर्वहारा की स्पिति नहीं बदलती, केवल मालिक बदल जाते हैं। धूमिल अपने संशयों और उलझनों के बावजूद अंत में नक्सलबाड़ी के सशस्त्र आन्दोलन की और संकेत करते हैं। धूमिल में भोलापन नहीं है। एक सचेष्ट समाज द्रष्टा का कथ्य है :–

घर मैंने छोड़ दिया
कोई मूल्यवान चीज मैंने नहीं छोड़ी
जो अब बाद में आयेंगे मेरी याद में
मुझ से अच्छे बनेंगे।

कल सुनना मुझे के उपमुख पृष्ठ पर पंक्तियां दी गई हैं, इनमें कवि का जन–मुक्ति संदेश स्पष्ट है :–

अपरिचित भी जानता है
उजले केशों वाली रोशनी ने
जब भी दस्तक दी है, दरवाजे खुलते हैं

धूमिल जनपक्ष के लिए की गई जनशत्रुओं की हत्याओं को हत्या नहीं मानते और यह भी जानते हैं कि सर्वाधिक हत्याएं समन्वयवादियों या सुधारवादियों ने की हैं, उन्होंने य समझा है कि संघर्ष की मुद्रा में घायल प्ररूषार्थ भीतर ही भीतर एक निःशब्द विस्फोट से त्रस्ट है। यह संघर्षशील पूछता है कि रोटी से खेलने वाले या लोगों के जीवन से खेलने वाले लोग कौन हैं, क्यों हैं :–

एक आदमी रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी से खेलता है न रोटी खाता है
मैं पूछता हूं, यह तीसरा आदमी कौन है?
मेरे देश की संसद मौन है।

कविता धूमिल के लिए जनाधिकार को मोर्चे पर बहाल करती है :

मैं सिर्फ इतना जानता हूं कि शब्द
जहां सक्रिय हैं, भूख का सिलसिला
भाई चारे की जमीन पर छापामार सीटियां बजाने लगता है।

धूमिल की कविता में जहां वर्तमान सामाजिक—राजनैतिक व्यवस्था के अन्तर्विरोध का तीव्र बोध व्यक्त हुआ है वहीं अथाह अहसमन तथा द्वितीय प्रजातंत्र के लिए सशस्त्र दृष्टि से जन क्रांति की अवधारणा स्पष्ट होती है। इन्हीं स्तंभों पर धूमिल का काव्य वैभव खड़ा है। शासन, व्यावसायिक—राजनैतिक दल, संसद, न्यायालय, उत्पादन के साधनों पर एकाधिकार प्रभुत्व आदि का निर्मम अनावरण धूमिल ने किया है। इसके साथ ही पूंजीवादी व्यवस्था की आमूल उलट पलट के लिए सशस्त्र क्रांति की कार्यवाहियों का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष समर्थन किया है।

धूमिल के लिए जनंतत्र की असफलता और उसके प्रपंच का बोध, एक मानसिकता विरोध की तरह है जो कभी उनके कवि मानस को मुक्त नहीं करता। इस आवेश में वह किसी व्यक्तिगत जीवन दर्शन का विकास नहीं करते दिखाई देते, न वह परिवर्तन की प्यास और व्याकुलता से परे जाकर तटस्थ स्पंदनों ओर चेतना प्रवाहों का अवलोकन करते हैं। वह मात्र आत्यनिष्ठ कवि नहीं सर्वनिष्ठ या सुख—साधन रहित जन साधारण जन को भावात्मक संघर्ष के कवि हैं। धूमिल की कविता में न सूक्ष्म वैचारिकता है, न संकुलता, न संकुल मनोदशाएं। उसमें सामाजिक—राजनैतिक व्यवस्था का सपाट विरोध और स्पष्ट क्रांतिकारी विकल्प है। यही धूमिल की शक्ति और सीमा है। धूमिल आत्म मंथन, संशय, अन्तर्द्वन्ह, मन और बाह्य यथार्थ एवं सामाजिक शक्तियों के चक्रब्यूह में नहीं घुसते। वह भूख और भ्रष्टाचार के विरुद्ध खड़े होकर, आवश्यकताओं या अछूते आयामों तथा अनुभूतियों का आलकन नहीं करते।

धूमिल सचेत होकर वर्तमान व्यवस्था को निटस्त करते हैं और सशस्त्र क्रांति के विकल्प द्वारा मनोराज्य (युरोपिया) की सृष्टि करते हैं। वह ऐसी समाज—संरचना की कल्पना करते हैं, जब वर्ग वर्णहीन व्यवस्था बनेगी और मनुष्य को शोषण और अलगाव से मुक्ति लि जायेगी :—

कल सुनना मुझे
जब दूध के पौधे भर रहे हो सफेद फूल
निःशब्द पीते हुए बच्चे की जुबान पर
और रोटी खाई जा रही हो चौके में गोश्त के साथ
जब खट कर, कमाकर खाने की खुशी परिवार और
भाई चारे में बदल रही हो,
कल सुनका मुझे
आज मैं लड़ रहा हूँ।

धूमिल बार—बार भाई चारे की बात करते हैं। जबकि वर्तमान व्यवस्था में भाई—चारापन नहीं उच्चता निम्नतावादी व्यवस्था ओर तज्जन्य अलगाव है, वैमनस्य और विनाशेच्छा है। अतः बन्धुत्व की कल्पना मनोराज्य

परक मनोदशा हैं मनोराज्य परक मानसीकता, भविष्य का सुनहरापन प्रस्तुत करती है। वह मनुष्य को विश्वास दिलाती है कि वह विचारधारा विशेष को मानकर उज्ज्वल भविष्य बना सकती है। भूख, विषमता और बन्धुत्व हीनता के कारण धूमिल का कवि वर्तमान व्यवस्था से असंतुष्ट था। वह मनोराज्य परक मानसिकता की ओर गया। मनोराज्य परक मानसिकता वर्तमान व्यवस्था को तोड़ती है और अपनी कल्पना के अनुसार नयी सामाजिक व्यवस्था की रचना करती है इसी से प्रेरित धूमिल की कविता में इच्छा बिम्ब व्यक्त हुए हैं। ये इच्छा बिम्ब (विश इमेजिज) या मनोराज्य परक विचार, व्यक्तियों के कार्य के लिए प्रेरक बज जाते हैं और प्रयोजन उत्तेजक की भूमिका का निर्वाह करते हैं।

प्रत्येक समाज व्यवस्था मनोराज्यों को जन्म देती है और ये मनोराज्य यदि व्यवहार्थ होते हैं तो उस समाज व्यवस्था का उन्मूलन कर देते हैं। यही कारण है कि धूमिल साम्य मूलक मनोराज्य को मूल्य देते हैं। पूंजीवादी व्यवस्था में प्रगतिशील लेखक और विचारक समता और बन्धुत्व के लिए लड़ते हैं। धूमिल ने भी अपनी कविता में इसी ध्येय के लिए लड़ाई लड़ी है।

इस प्रकार अंत में कहा जा सकता है कि धूमिल की कविता रचना का सरोवर वर्तमान संग्रहशील, लाभ–लोभ ग्रस्त समाज और शोषक शासक शक्तियों के पर्दाफाश से सीधा जुड़ा है। समाधान के रूप में वह सशस्त्र क्रांति को भी प्रस्तुत करते हैं। वह कविता को सामाजिक भूमिका में रखकर देखता है और सारा बल इस बिन्दु पर देता है कि अति के बिन्दु सशस्त्र क्रांति तक जाकर ही, व्यवस्थापक–समृद्ध वर्ग को आधात दिया जा सकता है। तभी एकाधिकारियों को अपदस्थ और अनाधिकृत किया जा सकता है। कविता इसी सामाजिक लक्ष्य का अस्त्र है। धूमिल की कविता स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात के भारत का सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मानचित्र है। अपने युग की विवशताओं, विसंगतियों, विद्रूपताओं तथा विकृतियों का विवेचन–विश्लेषण है। धूमिल की दृष्टि में कविता समाज में परिवर्तन का साधन बनती है और इसीलिए वे कविता को हथियार की तरह प्रयोग करते हैं।

❖ रूप बिम्ब प्रस्तुत हैं :–

पीला अंधकार है। हरे रंग का एक ठोस सैलाब। आजादी तीन थके हुए रंगों का नाम है। एक गूंगी परछाई गुजरेगी। सिर कोअ मुर्गे की तरह। सबेरे की फिरंगी हवा। कुआं झांकते आदमी की पीठं मां का चेहरा झुर्रियों की भोली बन गया है। बसंत दिमाग से पाषाण कालीन पत्थर की तरह निकला हुआ है। परंपरा को पालिश से चमका रहा हूं। गिद्धों की आंखों में खूनी कोलाहल। जनमत की चढ़ी हुई नदी में सड़ा हुआ काठ हूं। पिछलते हुए शब्दों की परछाई। जांघों की हरकत पाला जगे मटर की तरह मुफी गई है। दोपहर रेलिंग पर झुकी हुई है। सफेद बिल्ली अपने पंजों से कुछ शब्द काढ़ रही है। वह जलते हुए मकान के नीचे भी हरा था। मेरे लिए हर आदमी एक जोड़ी जूता है। मैं चकत्तियों की जगह आंखें टांकता हूं। एक चोर कील दबी जा रही थी। जले हुए कागज की वह तस्वीर है। जो किताबों के बीच जानवर सा चुप है। अपने पुरखों का रंगीत बलगम जी रहे थे। सूरज तुम्हारी जेब घड़ी है। एक मकान उठता है और उस एक बूढ़ा आदमी झंडे की तरह उड़ने लगता है। मैं अपनी कविताओं की हद फांद रहा था। इन मकानों की नीवों में असंख्य नावें डूबती हैं।

❖ धूमिल की काव्य कला :

धूमिल की कविताओं का विश्लेषण प्रस्तुत करते समय भाषा को सर्वोपरि स्थान देना इसलिए आवश्यक ही जाता है कि उन्होंने हिन्दी कविता को एक नयी भाषा दी है। शैली की सबसे पहले उभरने वाली विशेषता तो भाषा से संबंद्ध होती है। कवि कर्म शब्द, शब्दार्थ भाव या विचार की स्थितियों से क्रमशः गुजरता है। किसी विख्यात कवि की भाषा का ही सबसे पहले अनुकरण होता है। इसीलिए किसी प्रतिमाशाली कवि की भाषा की छाया दूसरे कवियों पर बहुत समय तक देखी जा सकती है। सुदामा पांडेय धूमिल निश्चय ही समकालीन कविता की भाषा के निर्माताओं में से एक थे। उनकी भाषा विषयक चिन्ता एक ऐसे करीगर की चिन्ता थी जो तिक काम हाथ में लेने से पहले अपने औजारों का परीक्षण निरीक्षण कर लेता है और उन्हें काम योग्य बना लेता है। नयी कविता की भाषा में अंसंतुष्ट धूमिल ने समकालीन कविता की भाषा के लिए नए मुहावरे की तालाश की ओर उसे स्थापित भी किया।

धूमिल की कविता का समग्र बिम्ब हमारे मन में यह भाव उत्पन्न करता है। कि हम जिसके आदतन सही समझते आए हैं, वह गलत ही नहीं गलीज भी है, क्योंकि उसमें अमानवीयता है :–

तो आइये एक निर्णय लें
हम दोनों मिलकर
अपने जानने ओर अपने नकारने का
एक संयुक्त मोर्चा बनाएं
आज की भूख से भूख के अगले पड़ाव तक लिख दें
यह जो रास्ता जनतंत्र को जाता है
और इस धुन्ना कविताओं
धुन्ना राजनीति
और धुन्ना विद्रोह को ठेंगा दिखायें।

स्वयं अकालन के प्रश्न

1. धूमिल का जन्म कब हुआ?
2. धूमिल की रचना का नाम लिखों।
3. धूमिल की काव्यगत विशेषता लिखिएं।

13.4 सारांश

इस प्रकार कवि उच्च मध्य वर्गीय जनतंत्र व्यक्तिवादी राजनीति और व्यक्तिवादी–अहंवादी विद्रोह का विरोध करता हुआ कविता से ही उसकी सम्पूर्णता में चमकता है। धूमिल की कविता में विश्वबोध और अन्तर्निहित मूल्य उनके समग्र बिम्ब के निर्माण में मुख्य भूमिका का निर्वाह करते हैं। धूमिल का विश्वबोध वर्गहीन समाज की कल्परा पर आधारित है। उसमें समता, स्वतंत्रता, भ्राततृत्व के मूल्य निर्णायक महत्व रखते हैं। धूमिल की कविताओं का व्यवस्था–विध्वंसक विद्रोही बिम्ब समतावादी मूल्यों और वैज्ञानिक–भौतिकवादी विश्वबोध के बिना हृदयंगम नहीं हो सकता। धूमिल का समग्र बिम्ब जिन रचनाओं में व्यक्त हुआ है, वे एक विषय, विकृत और अमानवीय व्यवस्था में लिखी जा सकती थीं। समग्र बिम्ब और समकालिक सामजिक संरचना में प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। धूमिल का विश्वबोध उनकी उग्र परिवर्तनशील मूर्ति और मुद्रा का मूल कारण उनकी स्फुट बिम्ब सरंचना का स्वरूप भी इसी से प्रतिवर्तित और प्रभावित हुआ है।

13.5 कठिन शब्दावली

मोर्चा–क्रांति। **जनतंत्र**–लोकतंत्र। **ढेगा**– साफ इन्कार करना। **निःशब्द**– चुपचाप। **गोश्त**– इधर–उधर घुमना। **धड़ाम**– अचानक गिर जाना।

13.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. 1936 ।
2. संसद से सड़क तक ।
3. राजनीतिक भ्रष्टचार ।

13.7 सन्दर्भित पुस्तक

1. सिद्धेश्वर प्रसाद–छायावादोत्तर काव्य।

13.8 सात्रिक प्रश्न

1. धूमिल का जीवन परिचय बताओं।
2. धूमिल के साहित्यिक परिचय लिखों।

*****

इकाई–14
सुदामा पांडेय धूमिल : व्याख्या भाग

संरचना

14.1 भूमिका

14.2 उद्देश्य

14.3 सुदामा पांडेय धूमिल : व्याख्या भाग

स्वयं आंकलन प्रश्न

14.4 सारांश

14.5 कठिन शब्दावली

14.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

14.7 सन्दर्भित पुस्तक

14.8 सात्रिक प्रश्न

14.1 भूमिका

सुदामा पांडेय धूमिल ने अपने काव्य में समकालीन राजनीतिक भ्रष्टाचार और राजनेताओं के दोहरे चरित का चित्रण किया है।

14.2 उद्देश्य

1. सुदामा पांडेय धूमिल के जीवन परिचय का बोध।
2. सुदामा पांडेय धूमिल की रचनाओं का ज्ञान।
3. सुदामा पांडेय धूमिल की रचनाओं में वर्णित विषय का ज्ञान।

14.3 सुदामा पांडेय धूमिलः व्याख्या भाग

1 **दस्तक**

हम न देखें
लेकिन अन्धकार वर्ष को चीर कर
प्रकाश की लचीली बांह
हमें छूती है
हम दरवाज़ा न खोलें
लेकिन शहर में
किसी भी सड़क पर
घूमने वाली बीमार रफ्तार
इस अस्पताल के सदर गेट पर
दस्तक देती हैं

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सुदामा पाण्डेय धूमिल' द्वारा रचित कविता 'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत कविता में कवि 'सुदामा पाण्डेय धूमिल' ने व्यक्ति के जीवन में सुअवसर का वर्णन किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि 'सुदामा पाण्डेय धूमिल' ने व्यक्ति के जीवन में सुअवसर का वर्णन कहता है कि व्यक्ति के जीवन में एक बार सुअवसर प्राप्त होता है भले ही हम उसे अनदेखा करें। परन्तु अवसर रूपी प्रकाश की कोमल बांहें हमारे जीवन में सदियों के गहन से गहन अन्धेरे को चीरकर हमारे जीवन के दवार को बार अवश्य खटखटाती है। अर्थात् हमें अपने जीवन में एक अवसर अवश्य मिलता हैं। कवि कहता है कि भले ही हम अपने हृदय और मस्तिष्क के दरवाजे बन्द रखें। अर्थात् अवसर की आवाज अपने भीतर अनसुना कर दें। कवि कहता है कि शहर में घूमने अत्यन्त धीमी गति से बीमारों की तरह चलने वाली सुअवर की एम्बुलेंस हमारे बीमार दिल और दिमाग के अस्पताल के मुख्य दरवाजे पर भी दरवाजा खटखटाने का काम अवश्य करती हैं।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि ने मनुष्य के जीवन में सुअवसर का चित्रण किया है।
2. सरल, सहज व भावपूर्ण भाषा का प्रयोग।

हम न कहे
लेकिन चेहरों पर टंगे नक्शे से
अपरिचित भी जानता है
रेखाएं चिह्न
आकार, बिन्दु
न केवल असफल वर्णन है
न केवल उदासीन मानचित्र
हम न देखें अपने को हम
न कहे किसी से
लेकिन अपरिचित भी जानता है
उजले केशों वाली रोशनी ने
जब भी दस्तक दी है
दरवाजे खुलते हैं और मिलता है मस्तिष्क में
एक भरा पूरा नगर
जहां बूढ़ी रोशनी के साथ
हम भी हो लेते हैं।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सुदामा पाण्डेय धूमिल' द्वारा रचित कविता 'मुझे तुम्हारा साथ मिला है' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत कविता में कवि 'सुदामा पाण्डेय धूमिल' ने व्यक्ति के जीवन में सुअवसर का वर्णन किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत कविता में कवि कहता है कि हम भले ही इस बात को स्वीकार न करें, परन्तु हमारे चेहरों पर अंकित रेखाएं, चिह्न, विभिन्न आकार और बिन्दु हमारी पहचान बन जाती है और अजनबी भी हमारी पहचान कर सकता है अर्थात् हमारी सच्चाई हमारे चेहरे से स्पष्ट झलकती है। कवि व्यक्ति के अनुभव का वर्णन करते हुए आगे कहते कि ये सब हमें व्यक्त करने की आवश्यकता नहीं है हमारे चेहरे के भाव, सफलता–असफलता और भावहीन नक्शे हमारे व्यक्तित्व की पहचान मात्र हैं। अर्थात् हमारे चेहरे की बाहरी आकार हमारी आन्तरिक सच्चाई को प्रकट नहीं करता। कवि कहता है कि हम भले ही किसी के सामने इस सच्चाई को स्वीकार न करें

परन्तु सच यही है कि जब कभी हमारी आत्मा की आवाज हमारे दिल और दिमाग का दरवाजा खटखटाती है तो हमारे दिमाग के दरवाजे खुल जाते हैं हमारे दिमाग में विचारों और यादों का एक भरा–पूरा शहर कौंध जाता है। उस शहर की यात्रा पर हम उस बूढ़ी रोशरी के साथ अनायास ही निकल जाते हैं अर्थात् अपनी दुनिया में खो जाते हैं।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि ने मनुष्य के जीवन में सुअवसर का चित्रण किया है।
2. सरल, सहज व भावपूर्ण भाषा का प्रयोग।
3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग हुआ है।

2. **रोटी और संसद**

एक आदमी
रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है
वह सिर्फ रोटी से खेलता है
मैं पूछता हूं–
यह तीसरा आदमी कौन है?
मेरे देश की संसद् मौन है।

प्रसंगः प्रस्तुत कविता हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना–पुंज' में संकलित कवि 'सुदामा पाण्डेय धूमिल' द्वारा रचित कविता 'दस्तक' में से लिया गया है।

संदर्भः प्रस्तुत कविता में कवि ने वर्तमान समय की राजनीति व्यवस्था पर गहरा व्यंग्य किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत कविता में कवि ने वर्तमान समय की राजनीति भ्रष्टाचार पर गहरा व्यंग्य करते हुए कहता है कि हमारे देश में तीन तरह के लोग रहते है जिनमें एक आदमी रोटी बेलता है अर्थात् मेहनत करता रहता है परन्तु उसे रोटी नहीं मिलती है। इस देश में एक और आदमी भी है जो रोटी बेलता भी है और रोटी खाता भी है। कवि भ्रष्ट नेताओं के चरित्र को उजागर करते हुए आगे कहते है कि यहां पर देश में एक तीसरा आदमी भी है जो न रोटी बेलता है और न रोटी खाता है। वह केवल रोटी से खेलता है। कवि भ्रष्ट नेताओं से प्रश्न करते हुए कहते है कि यह तीसरा आदमी कौन है? लेकिन उसका उत्तर नहीं मिलता। कवि कहता है कि इस प्रश्न का उत्तर देने में हमारे देश की संसद् भी चुप है।

विशेष

1. प्रस्तुत कविता में कवि ने भ्रष्ट राजनीतिज्ञ का चित्रण किया है।
2. व्यंग्यपूर्ण भाषाा का प्रयोग।
3. 'रोटी बेलना' मुहावरे का प्रयोग।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. 'संसद से सड़क तक' कविता के रचयिता कौन हैं?
2. सुदामा पांडेय धूमिल का जन्म कब हुआ?
3. सुदामा पांडेय धूमिल की मृत्यु कब हुई?
4. 'दस्तक' कविता के रचयिता कौन हैं।

14.4 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि सुदामा पांडेय धूमिल ने भारतीय राजनीतिक भ्रष्टाचार का चित्रण किया है।

14.5 कठिन शब्दावली

बेलता–बनाना, बनाता। **आकार**–रूपरंग, शक्ले। **उजले**–सफेद। **लचीली**–लचकीला, कोमल। **सदर**–गेट मुख्य द्वार। **दस्तक**–खटखटाना।

14.6 आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. सुदामा पांडेय धूमिल।
2. 1936 ।
3. 1975 ।
4. सुदामा पाण्डेय धूमिल।

14.7 संदर्भित पुस्तक

1. सिद्धेश्वर प्रसाद–छायावादोत्तर काव्य।

14.8 सात्रिक प्रश्न

1. 'दस्तक' कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।
2. 'संसद से सड़क तक' कविता का सार अपने शब्दों में लिखों।

*****

इकाई–15
मुंशी प्रेमचन्द और मोहन राकेश का जीवन परिचय

संरचना

15.1 भूमिका

15.2 उद्देश्य

15.3 मंशी प्रेमचन्द का जीवन परिचय

स्वयं आंकलन प्रश्न

15.4 मोहन राकेश का जीवन परिचय

स्वयं आंकलन प्रश्न

15.5 सारांश

15.6 कठिन शब्दावली

15.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

15.8 सन्दर्भित पुस्तक

15.9 सात्रिक प्रश्न

15.1 भूमिका

हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कहानीकारों में मुंशी प्रेमचन्द का स्थान सर्वोपरि है। उन्होंने अपनी पहली कहानी 'पंच परमेश्वर' से लेकर कफन कहानी तक हिन्दी साहित्य के लिए लगभग 300 कहानियां लिखकर हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया।

15.2 उद्देश्य

1. प्रेमचन्द के जीवन परिचय का बोध।
2. प्रेमचन्द की रचनाओं का ज्ञान।
3. मोहन राकेश जीवन परिचय का ज्ञान।
4. मोहन राकेश की रचनाओं का ज्ञान।

15.3 प्रेमचन्द और मोहन राकेश का जीवन परिचय

❖ **मुंशी प्रेमचन्द का जीवन परिचयः** हिन्दी के श्रेष्ठ कहानीकार और हिंदी उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द का जन्म काशी के समीप स्थिति लमही नामक गांव में सामान्य परिवार में 31 जुलाई सन् 1880 ई. को हुआ था। इनका वास्तविक नाम धनपतराय था और पिता का नाम अजायबराय था। आठ वर्ष की आयु में ही इनकी माता का देहान्त हो गया था। इनके घर की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण स्वध्याय किया। सोलह वर्ष की आयु में इनके पिता भी चल बसे। अतः घर–परिवार का सारा बोझ इनके कंधों पर आ पड़ा। मुंशी प्रेमचन्द बड़ी छोटी आयु में अध्यापक की नौकरी की। धीरे–धीरे ये डिप्टी इंस्पेक्टर के पद पर पहुंच गए। बाद में वे सरकारी नौकरी छोड़कर लेखन–कार्य में जुट गए। गांधी जी के आह्वान पर इन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन में भी भाग लिया। इन्होंने फिल्मों के लिए भी लिखा, लेकिन बाद में सरस्वती प्रेस की स्थापना की। 8 अक्तूबर सन् 1936 ई. को इनका देहान्त हो गया।

रचनाएंः मुंशी प्रेमचन्द ने हिन्दी साहित्य के लिए अनेकों रचनाओं का सृजन किया है। आरम्भ में उन्होंने नबावराय के नाम से उर्दू में लिखते थे। उनकी रचनाएं निम्न प्रकार से है–

उपन्यासः 'सोजे वतन' 'निर्मला', 'प्रतिज्ञा', 'वरदान', 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि', 'सेवासदन', 'प्रेमाश्रम', 'गबन', 'गोदान' आदि प्रसिद्ध उपन्यास हैं। मंगलसूत्र इनका अधूरा उपन्यास है।

कहानियांः प्रेमचन्द ने 300 के लगभग कहानियां लिखी थीं, जो मानसरोवर के आठ भागों में प्रकाशित हो चुकी हैं। 'कफन', 'पूस की रात', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'पंच परमेश्वर', 'बड़े घर की बेटी', 'ठाकुर का कुआं', 'ईदगाह', नमक का दारोगा' आदि इनकी प्रसिद्ध कहानियां हैं।

❖ ईदगाह कहानी की तात्विक समीक्षाः

1. कथानक : मुंशी प्रेमचंद की इस कहानी ईदगाह का कथानक एक गरीब मुस्लिम परिवार के इर्द–गिर्द घुमती है। कहानी बालक हामिद के इर्द–गिर्द घूमता है, जो अपनी दादी से पूछकर ईद के मेले को देखने जाते है। हामिद के पास मात्र तीन पैसे हैं। मेले में उसके साथ मिठाइयां खाने के साथ–साथ मिट्‌टी के आकर्षक खिलौने खरीदते हैं। हामिद के साथी बच्चों के लाए खिलौने एक–एक कर टूट जाते हैं। हामिद का खिलौना टूटता नहीं। अमीना जब हामिद से कहती है कि तीन पैसे से तुम अपने लिए खिलौने खरीद लाते इस पर हामिद कहता है कि दादी ये जा चिमटा है ये मेरे लिए अलग अलग भूमिका अदा करता है इसको कंधे के उपर उठाओं तो बन्दुक बन जाती है यदि बगल में रखी तो तलवार बन जाती है। और जब आप खाना बनाओगे तो आपके काम आ जाएगा। इस तरह मुंशी प्रेमचन्द ने इस कथानक एक बच्चे समझदारी को चित्रित किया है।

2. पात्र चरित्र–चित्रण : ईदगाह कहानी का मुख्य पात्र हामिद है। उसी के इर्द–गिर्द समस्त कहानी का घुमती है। कहानी का दूसरी मुख्य पात्र बूढ़ी अमीना है। कहानी में इसके अतिरिक्त मोहसिन नूरे, साम्मी, महमूद इत्यादि पत्रों का चित्रण किया है। कहानी में अमीना के चरित्र को सद्‌भावी दादी के रूप में चित्रण हुआ है।

3. संवाद शिल्प : कहानी में संवाद शिल्प का महत्वपूर्ण स्थान होता है। संवाद कहानी को गति प्रदान कर उसकी शिथिलता को कम करते हैं, वहीं रोचकता में भी वृद्धि करता हैं। ईदगाह कहानी संवादों की दृष्टि से एक सफल कहानी कही जा सकती है। संवादों के माध्यम से ही कहानी में विभिन्न पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ा है। जब हामिद दुकानदार से बातचीत करते है उसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

'तो बताते क्यों नहीं, के पैसे का है?'

हामिद का दिल बैठ गया।

'ठीक–ठीक पांच पैसे लगेंगे, लेना हो तो, नहीं चलते बनो।'

हामिद ने कलेजा मजबूत करके कहा तीन पैसे लोगे?

4. देशकाल और वातावरणः कहानी के तत्व के रूप में देशकाल और वातावरण अधिक महत्वपूर्ण तत्व है। देशकाल और वातावरण में स्थान, समय और परिवेश का संकलन त्रय होता है। देशकाल एवं वातावरण की दृष्टि से भी 'ईदगाह एक उत्कृष्ट कहानी कही जा सकती है। कहानी पूरी तरह कल्पित होने पर भी अपने समय के सजीव वातावरण की सृष्टि करती है। कहानी में प्रेमचंद ने ग्रामीण परिवेश का चित्रण किया है। कहानी के अंतर्गत प्रेमचंद ने ईद के त्यौहार वर्णन, रोजे, ईदगाह के वातावरण का वर्णन किया है।

5. उद्देश्य : किसी भी कहानी को लिखते समय लेखक के सामने कोई न कोई उद्देश्य होता है। ईदगाह कहानी को लिखते हुए मुंशी प्रेमचंद ने मुस्लिम समाज की गरीबी का चित्रण किया है। कहानी में मुंशी प्रेमचंद ने हामिदे के माध्यम से मुस्लिम समाज की गरीबी को प्रकट किया है।

6. भाषा शैली : भाषा शैली ईदगाह दृष्टि से एक सशक्त रचना है, जिसमें प्रेमचन्द ने सहज, रोचक तथा भावानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। कहानी शैली की दृष्टि से वर्णनात्मक, मनोविश्लेषणात्मक व चित्रात्मक शैलियों का प्रयोग हुआ है।

स्वयं आकलन के प्रश्न–1

1. मुंशी प्रेमचंद का जन्म कब हुआ।
2. मुंशी प्रेमचंद की किसी एक रचना का नाम लिखों।
3. ईदगाह कहानी का प्रमख पात्र कौन है?

15.4 मोहन राकेश का साहित्यिक परिचय

आधुनिक हिंदी साहित्यकार मोहन राकेश का जन्म 8 फरवरी सन् 1925 में आधुनिक पंजाब के अमृतसर जिले के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ था। इनके पिता वकील श्री कर्मचन्द गुगलानी थे उनका साहित्य व संगीत के प्रति विशेष लगाव था। मोहन राकेश एक प्रतिभाशाली छात्र थे। उन्होंने सोलह वर्ष की अवस्था में 'शास्त्री' की शिक्षा प्राप्त कर ली थी। इसके पश्चात् लाहौर से उन्होंने बी.ए., एम.ए. (संस्कृत) की उपाधि प्राप्त की। सन् 1952 में पंजाब विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिन्दी) की भी उपाधि प्राप्त की। उसके पश्चात् उन्होंने अध्यापन कार्य किया आरम्भ में वे सबसे पहले मुम्बई के कॉलेज में प्राध्यापक बने। तत्पश्चात् उन्होंने शिमला एवं जालन्धर में भी अध्यापन का कार्य किया। जीवन के अंतिम दिनों में वे दिल्ली में रहते हुए साहित्य लेखन में जुड़े रहे।

उन्होंने अपने जीवन में तीन विवाह किए। उन्होंने पहली और दूसरी पत्नी सुशीला से तलाक हुआ। उन्होंने जीवन के अंतिम दिन अपनी तीसरी पत्नी अनीता के साथ गुजारा। 3 दिसम्बर, 1972 को उनका स्वर्गवास हो गया।

साहित्यिक रचनाएंः मोहन राकेश बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनकी प्रमुख रचनाएं निम्न प्रकार से हैं–

कहानी संग्रहः 'इन्सान के खण्डहर', 'नए बादल', 'एक और जिन्दगी', 'जानवर और जानवर', 'फौलाद का आकाश'।

उपन्यासः 'अन्धेरे बन्द कमरे में, 'न आने वाला कल', 'अन्तराल'।

नाटकः 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस', 'आधे अधूरे', 'पैर तले की जमीन'।

एकांकीः 'अण्डे के छिलके', 'दूध और दांत' आदि।

निबंधः 'परिवेश', 'बकतम खुद' आदि।

यात्रा–वृत्तांतः 'आखिरी चट्टान तक।

❖ 'मलबे का मालिक' कहानी तात्विक समीक्षा

कहानी 'मलबे का मालिक की तात्विक समीक्षा निम्न प्रकार से है–

1. कथानकः प्रस्तुत कहानी के कथानक में कहानीकार भारत और पाकिस्तान के विभाजन के समय फैले साम्प्रदायिक दंगे का चित्रण किया है। कथानक में कहानीकार ने वृद्ध मियां अब्दुल गनी की करुण कथा कहीं है तथा भारत–पाकिस्तान विभाजन के परिणामस्वरूप हुए विनाश का सांकेतिक चित्रण किया है। सन् 1947 के विभाजन के अवसर पर साम्प्रदायिक, हिंसा तथा पारस्परिक वैमनस्य की जो आग जल उठी थी, उसे कहानी में उभारा गया है। कहानी में गनी मियां नामक वृद्ध मुसलमान की आत्मपीड़ा की अभिव्यक्ति हुई है, जो विभाजन के समय पाकिस्तान चला गया था। हॉकी मैच देखने के बहाने जब वह अमृतसर के अपने पुराने घर को देखता है वहां केवल मकान का मलबा दिखाई देता है, जिसका भी वह हकदार है।

2. चरित्र–चित्रणः चरित्र–चित्रण की दृष्टि से भी 'मलवे का मालिक' एक सफल कहानी है। इसमें दो प्रमुख प्रमुख पात्र हैं– अब्दुल गनी मियां तथा रक्खा पहलवान। कहानी में मनोरी तथा लच्छा गौण पात्र हैं। कहानी में भारत विभाजन को केन्द्र बिंदु बनाया है। अब्दुल मियां गनी भारत में अपने मकान के मलबे को देखकर तथा अपने पुत्र चिरागदीन और उसके परिवार को याद आती है।

3. संवाद शिल्पः 'मलबे का मालिक' कहानी में संवाद शिल्प की दृष्टि से सफल कहानी मानी जाती है। कहानी के संवाद बड़े ही मार्मिक, संक्षिप्त एवं प्रभावशाली हैं। कहानी के संवाद पात्रानुकूल है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है– ''तू बता रक्खे, यह हुआ किस तरह?''

गनी आंसू रोकता हुआ आग्रह के साथ बोला, ''तुम लोग उसके पास ये, सबमें भाई–भाई की सी मुहब्बत थी, अगर वह चाहता तो वह तुममे से किसी के घर में नहीं छिप सकता था? उसे इतनी भी समझ नहीं आई?''

''ऐसा ही है,'' रक्खे को स्वयं लगा कि उसकी आवाज में कुछ अस्वाभाविक सी गूंज है।

4. देशकात एवं वातावरणः देशकाल एवं वातावरण कहानी का अन्य तत्व की तरह ही महत्वपूर्ण होता है। कहानी अमृतसर के वातावरण की प्रधानता है। अब्दुल गनी के जले हुए मकान के मलबे का चित्रण बड़े ही सजीव और स्वाभाविक ढंग से हुआ है।

5. उद्देश्यः मलबे के मालिक में अपने देश की मिट्टी से व्यक्ति का विशेष लगाव को प्रकट किया है। कहानीकार ने अब्दुल मिया गनी के माध्यम से अपने उद्देश्य को प्रकट किया है।

6. भाषा–शैलीः कहानी की भाषा सरल, सुबोध तथा प्रवाहयुक्त खड़ी बोली है। तद्भव शब्दावली की प्रधानता है। वर्णनात्मक व मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग हुआ है। कहीं–कहीं संवाद शैली भी प्रयुक्त हुई है।

स्वयं आकलन के प्रश्न–2

1. मोहन राकेश का जन्म कब हुआ?
2. मोहन राकेश के पिताजी का नाम बताओं।
3. मोहन राकेश ने कितनी शादियां की?

15.5 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि मुंशी प्रेमचंद और मोहन राकेश का हिंदी साहित्य में विशेष स्थान है। मुंशी प्रेमचंद ने हिन्दी कहानी और उपन्यास को सामाजिकता के साथ–साथ मानवीय जीवन से जोड़ा है। वही मोहन राकेश ने हिन्दी साहित्य को आधुनिकता से जोड़ा है।

15.6 कठिन शब्दावली

रोजे–व्रत। **ईद**–मुसलमानों का पवित्र त्यौहार। **मनोहर**–आकर्षक। **प्रभात**–सवेरा। **अजीब**–विचित्र। **भीतत**–ठंडी। **आशा**–उम्मीद। **पांव**–पैर। **नियामतें**–उपहार। **अरमान**–इच्छाएं।

15.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

स्वयं आकलन प्रश्न–1 के उत्तर

1. 1880। 2. गोदान।
3. हामिद।

स्वयं आकलन प्रश्न–2 के उत्तर

1. 1925। 2. कर्मचन्द गुगलानी।
3. तीन।

15.8 संदर्भित पुस्तक

1. राजेश्वर सक्सेना–भीष्म साहनीः व्यक्तित्व एवं कृतित्व।

15.9 सात्रिक प्रश्न

1. मुंशी प्रेमचंद का जीवन परिचय लिखों।
2. मोहन राकेश का जीवन परिचय लिखों।

*****

इकाई–16
'ईदगाह' और 'मलबे के मालिक' कहानी : व्याख्या भाग

संरचना

16.1 भूमिका

16.2 उद्देश्य

16.3 'ईदगाह' और 'मलबे के मालिक' कहानी : व्याख्या भाग

स्वयं आंकलन प्रश्न

16.4 सारांश

16.5 कठिन शब्दावली

16.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

16.7 सन्दर्भित पुस्तक

16.8 सात्रिक प्रश्न

16.1 भूमिका

मुंशी प्रेमचंद के द्वारा लिखित कहानी 'ईदगाह' एक मध्यमवर्गीय गरीब मुस्लिम परिवार का केंद्र में रखकर लिखी गई है, जो मुस्लिम समाज के यथार्थ को सामने लाता है। वही कहानी 'मलबे के मालिक' में भारत विभाजन के समय साम्प्रदायिक दंगे से प्रभावित परिवार का चित्रण किया है।

16.2 उद्देश्य

1. प्रेमचन्द की कहानी 'ईदगाह' कहानी के सार का बोध।
2. प्रेमचन्द की कहानी 'ईदगाह' के प्रतिपाद्य का ज्ञान।
3. 'मलबे के मालिक' कहानी के सार का बोध।
4. 'मलबे के मालिक' के प्रतिपाद्य का ज्ञान।

16.3 'ईदगाह' और 'मलबे के मालिक' कहानी : व्याख्या भाग

❖ ईदगाह

रमजान के पूरे तीस रोजों के बाद आज ईद आई है। कितना मनोहर, कितना सुहावना प्रभात है। वृक्षों पर कुष्ठ अजीब हरियाली है, खेतों में कुछ अजीब रौनक है, आसमान पर कुछ अजीब लालिमा है। आज का सूर्य देखो, कितना प्यारा, कितना शीतल है, मानों संसार को ईद की बधाई दे रहा है। गांव में कितनी हलचल है। ईदगाह जाने की तैयारियां हो रही हैं।

प्रसंग: प्रस्तुत पंक्ति हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना पुंज' में संकलित कहानीकार 'मुंशी प्रेमचंद' द्वारा रचित कहानी 'ईदगाह' में से ली गई है।

संदर्भ: प्रस्तुत कहानी में कहानीकार 'मुंशी प्रेमचन्द' के ईद के त्योहार की सुबह का वर्णन किया है।

व्याख्या: प्रस्तुत कहानी में कहानीकार 'मुंशी प्रेमचंद' लिखते हैं कि रमजान के पूरे तीस रोजों की पूर्णता के बाद आज ईद के पवित्र त्योहार का आगमन हुआ है। ईद वाले दिन का सवेरा बड़ा ही आकर्षिक और सुहाना है। पेड़ों पर छाई हरियाली बड़ी विचित्र दिखाई दे रही है। खेत–खलिहानों की रौनक है। आकाश पर भी विचित्र

सी लालिमा छाई हुई है। सवेरे का सूर्य भी बड़ा प्यारा व शीतल दिखाई दे रहा है। उसकी लालिमा और शीतलता कुछ इस प्रकार की आह्लादकारी है, मानों यह समस्त संसार को ईद की बधाई दे रहा है। गांव में भी सुबह से ही बड़ी हलचल है। सभी लोग ईद की नमाज अदा करने ईदगाह जाने की तैयारियां कर रहे हैं।

विशेष

1. लेखक ने गांव की सुबह का सजीव चित्रण किया है।
2. सरल, सहज भाषा का प्रयोग।

आशा तो बड़ी चीज है, और फिर बच्चों की आशा। उनकी कल्पना तो राई का पर्वत बना लेती है। हामिद के पांव में जूते नहीं हैं, सिर पर एक पुरानी–पुरानी टोपी है, जिसका गोट काला पड़ गया है, फिर भी वह प्रसन्न है। जब उसके अब्बाजान थैलियां और अम्मीजान नियामें लेकर आएंगी तो वह दिल के अरमान निकाल लेगा।

प्रसंगः प्रस्तुत पंक्ति हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना पुंज' में संकलित कहानीकार 'मुंशी प्रेमचंद' द्वारा रचित कहानी 'ईदगाह' में से ली गई है।

संदर्भः प्रस्तुत कहानी में कहानीकार 'मुंशी प्रेमचन्द' के ईद के त्योहार में जाने से हामिद की खुशी का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत कहानी में 'मुंशी प्रेमचंद' लिखते हैं कि आशा का भाव बड़ा बलवान होता है। और फिर जब यह भाव किसी बच्चे में उदित हो रहा हो इसका प्रभाव और भी बढ़ जाता है, क्योंकि बच्चे तो अपनी कल्पना में राई जैसी छोटी वस्तु को भी पहाड़ जैसी विशालकाय वस्तु बना लेने में देर नहीं लगाते। ईदगाह जाने के लिए हामिद के पांवों में पहनने को जूते तक नहीं हैं, उसके सिर पर एक पुरानी सी टोपी है, जिसका गोटा मैला होकर अब काला पड़ गया है, परन्तु ईदगाह जाने के उत्साह के कारण वह बहुत खुश है। उसे आशा ही नहीं पूरा विश्वास है कि जब उसके अब्बाजान वापस आएंगे तो वे पैसे की थैलियां लेकर आएंगे और उसकी अम्मीजान उसके लिए ढेरों उपहार लेकर आएगी। तब वह जी भरकर अपने मन की इच्छाओं को पूरा करेगा।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्ति में हामिद के मनोविज्ञान का चित्रण किया हैं।
2. सरल, सहज भाषा का प्रयोग।
3. 'राई को पर्वत बनाना' मुहावरे का प्रयोग हुआ है।

❖ मलबे के मालिक की व्याख्या भाग

खिड़कियों में से झांकने वाले चेहरों की संख्या पहले से कहीं बढ़ गई थी। उनमें चेहमेगोइयों चल रही थीं कि आज कुछ–न–कुछ जरूर होगा। चिरागदीन का बाप गनी आ गया है, इसलिए साढे सात साल पहले की सारा घटना आज खुल जाएगी। लोगों को लग रहा था, जैसे यह मलवा ही गनी को सारी कहानी सुना देगा।

प्रसंगः प्रस्तुत पंक्ति हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना पुंज' में संकलित कहानीकार 'मोहन राकेश' द्वारा रचित कहानी 'मलबे का मालिक' में से ली गई है।

संदर्भः प्रस्तुत कहानी में कहानीकार 'मोहन राकेश' ने भारत विभाजन के समय फैले साम्प्रदायिक दंगे पश्चात् अमृतसर की गलियों का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत कहानी में कहानीकार कहता है कि जब पाकिस्तान से आया अब्दुल गनी अमृतसर वाले अपने जले हुए मकान को देखकर अपने पुत्र को याद करते हुए मलबे के पास बैठ गया तो आस–पास के जो लोग अपनी खिड़कियों से इस सारे दृश्य को देख रहे थे, वे आपस में कानाफूसी करने लगे। खिड़कियों से झांकने वाले इन लोगों की संख्या निरंतर बढ़ रही थी और वे आपस में कानाफूसी करते हुए एक–दूसरे से कहने

लगे कि आज कुछ न कुछ अवश्य घटित होगा। जो बूढ़ा आया है, वह चिरागदीन का वृद्ध पिता है। आज अवश्य ही साढ़े सात साल पुरानी घटना अर्थात् चिरागदीन व उसके परिवार के मरने तथा उसके नए मकान के जलने की घटना अवश्य ही मालूम हो जाएगी। और कोई नहीं तो इस मकान का यह मलबा ही उसे इस घटना की जानकारी दे देगा।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्ति भारत विभाजन के समय फैले साम्प्रदायिक दंगे पश्चात् अमृतसर की गलियों का चित्रण किया है।

2. सरल, सहज तथा भावानुकूल भाषा का प्रयोग।

3. मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग।

चीखता क्यों है क्षण के .... तुझे में पाकिस्तान दे रहा हूं, ले पाकिस्तान। और जब तक जुबैदा, किश्वर और सुलताना नीचे पहुंची, चिराग को पाकिस्तान मिल चुका।

प्रसंग: प्रस्तुत पंक्ति हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना पुंज' में संकलित कहानीकार 'मोहन राकेश' द्वारा रचित कहानी 'मलबे का मालिक' में से ली गई है।

संदर्भ: प्रस्तुत कहानी में कहानीकार 'मोहन राकेश' ने भारत विभाजन की समस्या और उसके दुष्परिणामों को बड़े ही भावात्मक रूप में प्रस्तुत किया है।

व्याख्या: प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने वर्णन किया है कि रक्खा पहलवान ने उस रात चिरागदीन को आवाज देकर घर के बाहर बुलाया तथा उसका कॉलर पकड़ लिया। जब वह अपने बचाव में चिल्लाया तो बहन की गाली बकते हुए रक्खा पहलवान ने उससे कहा कि यह उसे पाकिस्तान (मृत्यु) दे रहा है। रक्खा पहलवान कहता है कि 'ले पाकिस्तान' ये कहते हुए उसे मार दिया। जब तक उसकी पत्नी जुबैदा और पुत्रियां किश्वर एवं सुलताना उसे बचाने उसे बचाने के लिए नीचे पहुंची तब तक चिराग की मृत्यु हो गई थी।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने चिरागद्दीन की दर्दनाक मृत्यु का चित्रण किया गया है।

2. सरल, सहज तथा भावनुकूल भाषा का प्रयोग।

ऊपर खिड़कियों में चेहमेगोइयां तेज हो गई कि अब दोनों आमने–सामने आ गए हैं तो बात जरूर खुलेगी .... फिर हो सकता है, दोनों में गाली–गलौज भी हो .... अब रक्खा गनी को कुछ नहीं कह सकता, अब वो दिन नहीं रहे ..... बड़ा मलबे का मालिक बनता था ..... असल में मलबा न इसका है, न गनी का। मलबा तो सरकार की मलकियत है ...... किसी को गाय का खूंटा नहीं लगाने देता। .... मनोरी भी डरपोक है। इसने गनी को बताया क्यों नहीं कि रक्खे ने ही चिराग और उसके बीवी–बच्चों को मारा है।

प्रसंग: प्रस्तुत पंक्ति हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना पुंज' में संकलित कहानीकार 'मोहन राकेश' द्वारा रचित कहानी 'मलबे का मालिक' में से ली गई है।

संदर्भ: प्रस्तुत कहानी में कहानीकार 'मोहन राकेश' ने भारत विभाजन की समस्या और उसके दुष्परिणामों को बड़े ही भावात्मक रूप में प्रस्तुत किया है।

व्याख्या: प्रस्तुत कहानी में कहानीकार 'मोहन राकेश' ने भारत–पाक विभाजन की समस्या और उसके दुष्परिणामों का चित्रण करते हुए कहते हैं कि विभाजन के पश्चात् जब अब्दुल गनी भारत आता है तो उसे कोई पुरानी बातें कहता है कि उसके पुत्र चिरागदी व उसके परिवार को रक्खा पहलवान ने मारा था तथा किसी ने उसके नए मकान को जलाकर मलबे में तब्दील कर दिया था। अतः जब मलबे के ढेर के पास गनी मियां व

रक्खा पहलवान आते है तब खिड़कियों से झांक रहे लोगों में कानफूसी तेज हो गई। वे एक दूसरे से कहने लगे कि जब ये दोनों एक दूसरे के आमने–सामने आ गए हैं तो अवश्य ही वर्षों पुरानी बात खुल जाएगी, संभवतः यह भी हो सकता है कि दोनों में गाली–गलौज भी हो जाए। लोग आपस में बात करते हुए कहते है कि यह पहलवान अपने शारीरिक बल पर पिछले कई वर्षों से इस मलबे का मालिक बना हुआ है, परन्तु यह मलबा अब न तो गनी मियां का है, न ही इस पहलवान का। यह मलवा तो अब सरकार की संपत्ति है। यह पहलवान जो अब तक इस मलबे के ढेर में किसी को अपनी गाय का खूंटा भी नहीं बांधने देता था। वे सोचने लगे कि मनोरी (जो गनी मियां को उसके मकान के मलबे के ढेर के पास लेकर आया था) भी डरपोक है। उसने गनी मियां को अब तक क्यों नहीं बताया कि उसके पुत्र चिराग और उसकी बीवी व बच्चों को इसी रक्खा पहलवान ने मारा था।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्ति में भारत–पाक विभाजन की समस्या और उसके दुष्परिणामों के पश्चात् अमृतसर की गलियों का चित्रण हुआ है।

2. सरल, सहज तथा भावानुकूल भाषा का प्रयोग।

3. मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग।

''मैं क्या हाल बताऊं रक्खे,'' गनी दोनों हाथों से छड़ी पर जोर देकर झुकता हुआ बोला, ''मेरा हाल पूछे तो यह मेरा खुदा ही जानता है। मेरा चिराग साथ होता तो और बात थी ... रक्खे, मैं उसे समझा हटा था कि मेरे साथ चला चल। मगर वह अड़ा रहा कि नया मकान छोड़कर कैसे जाऊं, यहां अपनी गली है, कोई खतरा नहीं है। भोले कबूतर ने यह नहीं सोचा कि गली में खतरा न सही, बाहर से तो खतरा आ सकता हैं?

प्रसंगः प्रस्तुत पंक्ति हमारी पाठ्य–पुस्तक 'रचना पुंज' में संकलित कहानीकार 'मोहन राकेश' द्वारा रचित कहानी 'मलबे का मालिक' में से ली गई है।

संदर्भः प्रस्तुत कहानी में कहानीकार 'मोहन राकेश' ने भारत विभाजन के समय फैले साम्प्रदायिक दंगे पश्चात् अमृतसर की गलियों का चित्रण किया है।

व्याख्याः प्रस्तुत पंक्ति में गनी मियां, रक्खा पहलवान से कहता है कि मैं तुम्हे अपना क्या हाल बताऊं? वह अपने दोनों हाथों से छड़ी पर जोर देकर झुक गया और कहने लगा यदि तुम मेरा कुशलक्षेम पूछो तो मैं वह भी नहीं बात सकता। मेरा कुशलक्षेम भी मेरा खुदा ही जानता है। इस समय यदि मेरा पुत्र चिरागदीन मेरे साथ होता तो मेरे हाल कुछ और ही होते अर्थात् बेहतर होते। गनी मियां रक्खा से कहने लगे कि मैं तो विभाजन के वक्त उसे समझा रहा था कि मेरे साथ पाकिस्तान चल, परन्तु वह इस जिद पर अड़ा रहा कि वह नया मकान छोड़कर नहीं जा सकता। उसे लगता था कि वह गली अपनी है। यहां उसे किसी से कोई खतरा नहीं है। परन्तु उस ना समझ भोले कबूतर ने यह नहीं सोचा कि बेशक खतरा गली में न हो, परन्तु वह बाहर से तो कभी भी आ सकता है।

विशेष

1. प्रस्तुत पंक्ति में अब्दुल गनी मियां की मानसिक स्थिति का चित्रण किया है।

2. सरल, सहज तथा भावानुकूल भाषा का प्रयोग।

3. संवाद शैली का प्रयोग।

स्वयं आकलन के प्रश्न

1. 'ईदगाह' कहानी के लेखक का नाम लिखों।

2. 'ईदगाह' कहानी के प्रमुख पात्र का नाम बताओं।

3. 'मलबे के मालिक' कहानी के लेखक का नाम लिखों।

4. 'मलबे के मालिक' कहानी के प्रमुख पात्र का नाम बताओं।

16.4 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि मुंशी प्रेमचंद और मोहन राकेश हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कहानीकार है उन्होंने अपनी लेखनी से हिंदी साहित्य को समृद्ध किया।

16.5 कठिन शब्दावली

प्रसन्न–खुश। **गृहस्थी**–घर–परिवार। **प्रयोजन**–उद्देश्य। **चेहमेगोइयां**–कानाफूंसी। **असत**–यथार्थ, वास्तविकता। **मलकियत**–संपत्ति। **मुहब्बत**–प्रेम। **हाल**–कुशलक्षेम। **अड़ा रहा**–जिद करता रहा।

स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. मुंशी प्रेमचन्द।
2. हामिद और अमीना।
3. मोहन राकेश।
4. अब्दुल गनीमिया और रक्खा पहलवान।

16.6 संदर्भित पुस्तक

1. राजेश्वर सक्सेना–भीषम साहनीः व्यक्तित्व एवं कृतित्व।

16.8 सात्रिक प्रश्न

1. 'ईदगाह' कहानी का सार अपने शब्दों में लिखों।
2. 'मलबे का मालिक' कहानी का सार अपने शब्दों में लिखों।

*****

इकाई—17
काशीनाथ सिंह और उदय प्रकाश का जीवन परिचय

संरचना

17.1 भूमिका

17.2 उद्देश्य

17.3 काशीनाथ सिंह का जीवन परिचय

स्वयं आंकलन प्रश्न

17.4 उदय प्रकाश का जीवन परिचय

स्वयं आंकलन प्रश्न

17.5 सारांश

17.6 कठिन शब्दावली

17.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

17.8 सन्दर्भित पुस्तक

17.9 सात्रिक प्रश्न

17.1 भूमिका

साहित्य—सृजन काशीनाथ सिंह की सूजन—यात्रा साठोत्तरी पीढ़ी के एक कहानीकार के रूप में आरम्भ हुई। उन्होंने अपने साहित्य में उदय प्रकाश जी बहुपठित, बहुअनुवादित, बहुप्रशंसित लेखक हैं। उनकी कृतियों पर फिल्में भी बनी हैं। उन्होंने स्वयं भी कई डाक्यूमेंट्री फिल्में बनाई हैं।

17.2 उद्देश्य

1. काशीनाथ सिंह का जीवन परिचय का बोध।
2. उदय प्रकाश का जीवन परिचय की जानकारी।
3. काशीनाथ सिंह की रचनाओं का ज्ञान।
4. उदय प्रकाश की रचनाओं का बोध।

17.3 काशीनाथ सिंह का जीवन परिचय

काशीनाथ सिंह का जन्म वाराणसी (अब चंदौली) के जीयनपुर गांव मे 1936 ई. में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा उनके पैतृक गांव जीयनपुर के पास के विद्यालयों में ही हुई सन् 1953 में हाईस्कूल की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। उच्च शिक्षा के लिए काशीनाथ सिंह बनारस चले गए, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से उन्होंने स्नातक, परास्नातक (1959) और पी—एच.डी. (1963) की उपाधियां प्राप्त की। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में ही उन्होंने हिन्दी भाषा का ऐतिहासिक व्याकरण कार्यालय में सन् '62' से '64' तक शोध सहायक रहे। सन् 1965 में वहीं उन्होंने अध्यापन कार्य शुरू किया और हिन्दी साहित्य के प्रोफेसर और विभागध्यक्ष के पद पर कार्यरत थे 1997 में सेवानिवृत्त हुए।

साहित्यिक रचनाः

कहानी–संग्रहः 1. लोग बिस्तरों पर 1966, 2. सुबह का डर 1975, 3. आदमीनामा 1978, 4. नई तारीख 1978, 5. कल की फटेहाल कहानियां 1980, 6. प्रतिनिधि कहानियां 1984, 7. सदी का सबसे बड़ा आदमी 1986 8. 10 प्रतिनिधि कहानियां 1994, 9. कहानी उपखान (सम्पूर्ण कहानियां) 2003, 10. संकलित कहानियां 2008, 11. कविता की नई तारीख 2010, 12. खरोंच 2014।

उपन्यासः (1) अपना मोर्चा 1972, (2) काशी का अस्सी 2002, (3) रेहन पर रग्घू 2008 (4) महुआ चरित 2012 (5) उपसंहार 2014।

साहित्यक–सृजन काशीनाथ सिंह की सृजन–यात्रा साठोत्तरी पीढ़ी के एक कहानीकार के रूप में आरम्भ हुई। उनकी पहल कहानी 'संकट' कृति पत्रिका (सितम्बर 1960) में प्रकाशित हुई थी। काशीनाथ सिंह साठोत्तरी पीढ़ी के सुप्रसिद्ध 'चार चार' रवीन्द्र कालिया, दुधनाथ सिंह और ज्ञानरंजन के साथ चौये 'यार' हैं। उनका पहला उपन्यास 'अपना मोर्चा' 1967 ई. के छात्र आंदोलन को केन्द्र में रखकर लिखा गया था। लम्बे समय तक वे कहानीकार के रूप में ही विख्यात रहे। बाद में संस्मरण के क्षेत्र में उतरने पर उन्हें काफी ख्याति प्राप्त हुई। 'अपना मोर्चा' के लम्बे समय बाद उनको दूसरा उपन्यास 'काशी का अस्सी' प्रकाशित हुआ जो वस्तुतः कहानियों एवं संस्मरणों का सम्मिलित रूप है। सन् 2002 में प्रकाशित 'काशी का अस्सी' को उनका सबसे महत्वपूर्ण काम माना जाता है। यह पारों, अजीब पात्रों और 1970 के दशक के छात्र राजनेताओं के जीवन के अंदरूनी चित्र की तरह लिखा गया है। उपन्यास वाराणसी के रंगीन जीवन के विस्तृत चित्र में अद्वितीय माना जाता है। काशीनाथ सिंह साहित्यिक व्यक्तिवों के जीवन से सम्बद्ध संस्मरण लेखन की अपनी अनुठी शैली के लिए भी जाने जाते हैं। उनके संस्मरणों को शरद जोशी पुरस्कार–प्रप्त 'याद हो कि न याद हो' तथा 'आठे दिन पाछे गये' में संकलित किया गया है। 'घर का जोगी जोगड़ा। नामवर सिंह के जीवन पर केंद्रित संस्मरण–पुस्तक है। काशी का अस्सी के अंशों को प्रसिद्ध निर्देशक उमा गांगुली द्वारा रंगमंच पर प्रस्तुत किया गया है और इसी उपन्यास पर चंद्रप्रकाश द्विवेदी द्वारा फीचर फिल्म 'मोहल्ला अस्सी' का भी निर्माण किया जा चुका है।

पुरस्कारः काशीनाथ सिंह को 2011 में उनके उपन्यास 'रैहन पर रग्घू' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है।

भाषा शैलीः काशी नाथ सिंह की भाषा साहित्यिक खड़ी बोली है इनकी भाषा भावपूर्ण, धाराप्रवाह एवं पात्रानुकूल अत्यंत सरल एवं सहज है। इनका वाक्य–विन्यास सरल, सहज तथा रोचक है। इनकी शैली प्रमुख रूप से वर्णनात्मक है।

स्वयं आकलन के प्रश्न–1

1. काशीनाथ सिंह का जन्म कब हुआ ?
2. काशीनाथ सिंह की रचना का नाम बताओं।
3. साहित्य में काशीनाथ सिंह को कौन सा पुरस्कार मिला?

17.4 उदय प्रकाश का जीवन परिचय

उदय प्रकाश का जन्म सन् 1952 ई. में मध्यप्रदेश के अनूपपुर जिले के एक छोटे से गांव सीतापुर में हुआ। उनके पिता का नाम प्रेमसिंह था। उनकी शिक्षा गांव से ही हुई। उन्होंने विज्ञान में स्नातमक तथा हिंदी साहित्य में स्नातकोत्तर की उपाधि सागर विवि, से प्राप्त की। बचपन से कविता लिखने का शौंक था उन्होंने 6–7 वर्ष की आयु में अपनी पहली कविता लिखी। तब से लेकर आज तक वे कविताएं और कहानियां लिख रहे हैं।

रचनाएंः उदय प्रकाश जी ने अपनी लेखनी में हिन्दी गद्य व पद्य दोनों ही विधाओं में चलाई। उनकी प्रमुख रचनाएं निम्नलिखित हैं–

काव्य–संग्रहः 'सुनो कारीगर', 'अबूतर–कबूतर', 'रात में हारमोनियम', एक भाषा हुआ करती है।

कहानी संग्रहः 'दरियाई घोड़ा', 'तिरिछ', 'पाल गोमरा का स्कूटर', 'वारेन हेस्टिंग्स का सांड', 'पीली छत्तरी वाली लड़की', 'मोहन दास'।

❖ साहित्यिक विशेषताएंः

उदय प्रकाश एक ऐसे रचनाकार हैं, जो अपने साहित्य यथार्थवाद का चित्रण करते हैं। फैंटेसी और चमत्कार के जरिए वे अविश्वसनीयता की जितनी सृष्टि करते हैं, यथार्थ पर उनकी पकड़ उतनी ही मजबूत होती चलती है। उन्होंने अपने साहित्य में युगीन विभीषिकाओं और विडंबनाओं से का भी चित्रण किया है। उदय प्रकाश की कहानियां पाठक के मन के भीतर भय, त्रास, आतंक, घुटन, बेबसी और विकलता पैदा करती हैं। उनकी कहानियां पाठक को कठोर वास्तविकताओं और यथार्थ से भली भांति परिचित करवाती है। 'छप्पन तोते का करपन' कहानी में उनकी कहानी–कला की ये सारी विशिष्टताएं मौजूद हैं जहां छोटी–छोटी घटनाओं को इतनी सघनता के साथ कथा में गूंथा गया है।

❖ भाषा–शैलीः

उदय प्रकाश की भाषा आम बोलचाल की सरल, सहज व भावानुकूल साहित्यिक खड़ी बोली है। उनकी भाषा में एक प्रवाह है। उनकी भाषा में तत्सम शब्दों की प्रधानता के साथ तत्सम व देशज शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। उनकी भाषा का वाक्य–विन्यास सरल, सहज व रोचक है। उन्होंने अपनी भाषा में बिम्बों एवं प्रतीकों का प्रयोग अत्यंत सहजता के साथ किया है। उनकी कहानी की भाषा रचना के परिवेश, पात्रों एवं प्रसंग के अनुकूल बनाए रखने का पूरा प्रयास करते हैं।

स्वयं आकलन के प्रश्न–2

1. उदय प्रकाश का जन्म कब हुआ?
2. उदय प्रकाश के पिताजी का नाम बताओं?
3. उदय प्रकाश की रचना का नाम बताओं।

17.5 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि कहानीकार उदय प्रकाश और काशीनाथ सिंह ने अपनी कहानियों में सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया है। उदय प्रकाश ने मानव जीवन की मनोवैज्ञानिक समस्याओं का वर्णन किया है।

17.6 कठिन शब्दावली

सरल–आसान। **विभिविका**–सामाजिक ज्वलंत समस्याएं। **धुटन**–दम घुटना। **तत्सम**–उसी तरह। **रोचक**–रूची देने वाले। **विन्यास**–विविध प्रयोग।

17.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

स्वयं आकलन प्रश्नों 1 के उत्तर

1. 1936 ।
2. अपना मोर्चा ।
3. साहित्य अकादमी पुरस्कार।

स्वयं आकलन प्रश्नों 2 के उत्तर

1. 1952
2. प्रेम सिंह
3. दरियाई घोड़ा, पाल गोमरा का स्कूटर।

17.7 संदर्भित पुस्तक

1. उदय प्रकाश – एम.पी. विरेन्द्र कुमार।

17.8 सात्रिक प्रश्न

1. काशीनाथ सिंह का जीवन परिचय लिखिएं।
2. काशीनाथ सिंह का साहित्यिक परिचय पर नोट लिखें।
3. उदय प्रकाश का जीवन परिचय लिखें।

*****

बी०ए०/बी०कॉम द्वितीय सत्र **HIND 201**

अनिवार्य हिन्दी

(रचना पुंज)

इकाई 1 से 17

संशोधित : डॉ. मंगत राम

अन्तर्राष्ट्रीय दूरवर्ती शिक्षा एवं मुक्त-अध्ययन केन्द्र हिमाचल प्रदेश
विश्वविद्यालय, समरहिल शिमला - 171005

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
इकाई-1	कबीर का जीवन परिचय	3
इकाई-2	कबीरदास : व्याख्या भाग	12
इकाई-3	घनानंद का जीवन परिचय	20
इकाई-4	घनानंद : व्याख्या भाग	29
इकाई-5	सूर्यकांत त्रिपाठी निराला	36
इकाई-6	सूर्यकांत त्रिपाठी निराला : व्याख्या भाग	45
इकाई-7	बालकृष्ण शर्मा नवीन का जीवन परिचय	49
इकाई-8	बालकृष्ण शर्मा नवीन : व्याख्या भाग	57
इकाई-9	सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय परिचय	62
इकाई-10	सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' : व्याख्या भाग	72
इकाई-11	गजानन्द माधव मुक्तिबोध का जीवन परिचय	77
इकाई-12	गजानन माधव मुक्तिबोध : व्याख्या भाग	86
इकाई-13	सुदामा पाण्ड्रेय धूमिल का जीवन परिचय	92
इकाई-14	सुदामा पांडेय धूमिल : व्याख्या भाग	102
इकाई-15	मुंशी प्रेमचन्द और मोहन राकेश का जीवन परिचय	106
इकाई-16	'ईदगाह' और 'मलबे के मालिक' कहानी : व्याख्या भाग	110
इकाई-17	काशीनाथ सिंह और उदय प्रकाश का जीवन परिचय	115